₹ 30/-

साहित्य अमृत

RNI No. 62112/95

सितंबर 2024 • साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक • मासिक • पृष्ठ 84 • ISSN 2455-1171

साहित्य अमृत

मासिक

भाद्रपद-आश्विन, संवत्-२०८१ ❖ सितंबर २०२४

वर्ष-३० ❖ अंक-०२ ❖ पृष्ठ ८४ यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित RNI No. 62112/95 ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : **600120110001052**

IFSC : **BKID0006001**

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

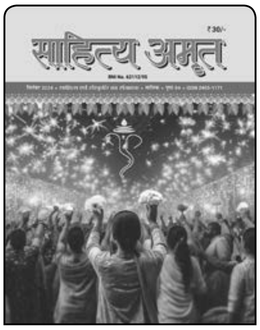

इस अंक में

✍ संपादकीय

हिंदी की याद... ४

✍ प्रतिस्मृति

अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी की क्षमता/ *पं. विद्यानिवास मिश्र* ६

✍ आलेख

उत्तरी अमेरिका के इंडियान/ *कुलदीप चंद अग्निहोत्री* ९

हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी, विश्वभारती/ *अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी* १८

वैदिक सनातन धर्म/ *प्रमोद कुमार अग्रवाल* २५

मन की बात : महिला सशक्तीकरण का नया आयाम/ *हरीश चंद्र बर्णवाल* ३१

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी/ *गोवर्धन दास बिन्नानी 'राजा बाबू'* ३६

विश्व-पटल पर अटल हिंदी/ *रूबी जुत्शी/मुदस्सिर अहमद भट्ट* ४०

गागर-गागर से महासागर बनती हिंदी/ *नलिन खोईवाल* ४६

हिंदी साहित्य में श्रीकृष्ण : पारंपरिक एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य/ *नवीन चंद पटेल* ६२

✍ कहानी

इक्कीसवाँ मिनट/ *संतोष श्रीवास्तव* १४

युवक, बेटा, पिता और वृद्ध/ *रेनू सैनी* ३४

अपना-पराया/ *उर्मिला साध* ३८

बचत/ *ममता मेहता* ४२

हर्जाना/ *सुरेशचंद्र रोहरा* ४८

वृंदा/ *ऋचा उपाध्याय* ६६

✍ ललित निबंध

रेमसिंग हँस रहा है/ *तरुण दांगोड़े* २२

✍ कविता

उत्सव रंगों का/ *सुधा कुमारी* २७

दस गजलें/ *विज्ञान व्रत* ४५

हिंदी : प्राणवायु/ *विनीता सहल* ४७

उगते सूरज की लाली/ *संजय कुमार* ५०

आशा भी सिंदूरी है/ *प्रशांत उपाध्याय* ५१

विस्मृति के ताले/ *संदीप राशिनकर* ६९

आँख में बादल/ *बृज राज किशोर 'राहगीर'* ७२

✍ राम झरोखे बैठ के

देश के पारिवारिक पेशे/ *गोपाल चतुर्वेदी* २८

✍ लघुकथा

जागरूकता/ *हरदेव सिंह धीमान्* ४४

दान/ *हरदेव सिंह धीमान्* ६८

✍ लोक-साहित्य

मालवी बोली की कहावतें/ *विनय शर्मा* ५२

✍ साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

गहरा नि:श्वास/ *रविंदर सिंह सोढी* ५६

✍ व्यंग्य

बीवी के हाथों पिटता.../ *अतुल कनक* ६५

✍ संस्मरण

कलकत्ते की एक याद/ *राहुल राजेश* ७०

✍ साहित्य का विश्व परिपार्श्व

पाँच सबसे खूबसूरत लघु कथाएँ/ *गाब्रिएल गार्सीया मार्केस* ७३

✍ यात्रा-वृत्तांत

विश्वभारती और शांतिनिकेतन में दो दिन/ *विनीता कुमारी* ७४

✍ बाल-संसार

चोट का अहसास/ *शकुंतला अग्रवाल 'शकुन'* ७६

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७८

✍ वर्ग-पहेली ७९

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ८०

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

हिंदी की याद...

सितंबर का महीना अर्थात् हिंदी का महीना! हिंदी दिवस, हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़ा, हिंदी माह...! सरकारी कार्यालयों तथा निजी संस्थानों में अपनी-अपनी सुविधानुसार विविध आयोजन किए जाते हैं। जिन सरकारी कार्यालयों में वहाँ के प्रमुख को हिंदी में रुचि हो, अथवा राजभाषा अधिकारी बहुत समर्पित हो, वहाँ राजभाषा के आयोजन बहुत भव्य उत्सव बन जाते हैं, अन्यथा औपचारिकता निभा ली जाती है। जिन कार्यालयों में हिंदी का प्रयोग न के बराबर होता है, वहाँ भी कार्यालय के बाहर राजभाषा समारोह का एक बैनर तो लग ही जाता है। बहुत से कार्यालयों में कुछ प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं, जिनमें टिप्पणी लेखन के साथ-साथ कविता या भाषण प्रतियोगिताएँ सम्मिलित होती हैं। प्राय: हर कार्यालय में दस-बारह लोगों का एक वर्ग होता है, जो हर प्रतियोगिता में भाग लेता है और एक ही व्यक्ति दो-तीन प्रतियोगिताओं में विजेता बन जाता है। किसी में प्रथम तो किसी में द्वितीय या तृतीय। इन आयोजनों में राजभाषा अधिकारी बड़े कठिन प्रयासों से लोगों का जुटा पाते हैं।

सार-संक्षेप यही है कि अपवादों को छोड़कर राजभाषा पखवाड़ा जैसे आयोजनों से हिंदी के स्वास्थ्य में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होते। कार्यालयों में हिंदी का प्रयोग उसी ढर्रे पर होता रहता है। अंग्रेजी के सर्कुलर में 'हिंदी ट्रांस्लेशन फॉलोस' लिखा जरूर रहता है, किंतु वह हिंदी अनुवाद कभी-कभी नहीं भी आ पाता है। निरीक्षण समितियों का कार्य भी एक औपचारिकता ही बन गया है। राजभाषा क्रियान्वयन की रिपोर्ट में आँकड़ों में हर वर्ष एक या आधा प्रतिशत बढ़ाने की जो रीति है, उसके अनुसार तो हिंदी के प्रयोग को सौ प्रतिशत के भी पार हो जाना चाहिए था। समाज में भी हिंदी के प्रति रवैया कुछ खास नहीं बदला है।

महानगरों के मॉल में जाइए तो हिंदी का एक अक्षर खोजने को तरस जाएँगे। भारत की राजधानी दिल्ली के एयरोसिटी में हिंदी की खोज असंभव सी प्रतीत होगी। महानगरों में ही क्यों, हिंदी के गढ़ रहे प्रयागराज, वाराणसी या अन्य छोटे-छोटे नगरों तक में दुकानों के साइनबोर्ड अंग्रेजी में मिलेंगे। लोगों के विजिटिंग कार्ड प्राय: अंग्रेजी में मिलेंगे, भले ही उनकी रोजी-रोटी हिंदी से चल रही हो। घरों पर नामपट्टिका (अपवादों को छोड़कर) अंग्रेजी में मिलेगी।

जिस तरह आम लोगों में अपने बच्चों को महँगे पब्लिक स्कूलों में प्रवेश दिलाने की होड़ है, उसी तरह पब्लिक स्कूलों में हिंदी के प्रति उपेक्षा बरतने की होड़ है। बच्चों का हिंदी बोलना अच्छा नहीं माना जाता। दरअसल हिंदी की बुनियाद यहीं से कमजोर हो जाती है। पब्लिक स्कूलों के वातावरण में पले-बढ़े बच्चों से हिंदी के प्रति लगाव या सम्मान की अपेक्षा कैसे की जा सकती है!

प्रशासनिक सेवाओं में अंग्रेजी का वर्चस्व आज भी कायम है, इसलिए सरकारी तंत्र में हिंदी के फैलाव की अपेक्षा कैसे रखी जा सकती है? हाँ, हिंदी को लेकर कुछ सुखद परिवर्तन भी हो रहे हैं। कुछ प्रांतों में इंजीनियरिंग, मेडिकल आदि पाठ्यक्रमों को हिंदी में प्रारंभ करने की पहल सुखद परिणाम ला सकती है। हिंदी की सबसे बड़ी समस्या यही है कि जब बी.टेक. एम.बी.बी.एस., चार्टर्ड अकाउंटेंट या कानून के सबसे प्रतिष्ठित पाठ्यक्रम अंग्रेजी में हैं और सुखद भविष्य की डोर अंग्रेजी के ही पास है तो फिर हिंदी के प्रति सम्मान धरती पर कैसे उतरेगा?

एक और सुखद पहलू है, केंद्रीय मंत्रियों तथा सांसदों का हिंदी में शपथ ग्रहण करना। भारत सरकार के मंत्रालयों में भी हिंदी का प्रयोग बहुत बढ़ा है। प्रधानमंत्री का दूसरे देशों में या अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में या देशों की संयुक्त प्रेस वार्त्ताओं में हिंदी बोलना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

सबसे सुखद पहलू है विश्व के कई दर्जन देशों में बसे प्रवासी भारतीयों तथा भारतवंशियों द्वारा हिंदी के लिए की जा रही सेवाएँ। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का लाभ उठाकर दर्जनों देशों में हिंदीसेवी हिंदी के ज्ञान का प्रसार करने या हिंदी लेखन को समृद्ध करने के लिए विविध प्रकार के ऑनलाइन कार्यक्रमों के आयोजनों में जुटे हुए हैं।

'वैश्विक हिंदी परिवार' नामक समूह में कई दर्जन देशों के हिंदीसेवी/हिंदीप्रेमी जुड़े हुए हैं। यह समूह पिछले चार वर्षों से हर सप्ताह हिंदी भाषा के किसी-न-किसी महत्त्वपूर्ण पहलू पर चर्चा आयोजित करता है। इंग्लैंड से 'वातायन' संस्था भी कई वर्षों से हर सप्ताह हिंदी-लेखन से जुड़े कार्यक्रम कर रही है। जर्मनी से गौतम सागर, ऑस्ट्रेलिया से रेखा राजवंशी, न्यूजीलैंड से रोहित, तंजानिया से ममता सैनी, कनाडा से शैलजा, नेपाल से मोनी विजय, कुवैत से संगीता चौबे, न्यूयॉर्क से अशोक सिंह आदि नियमित आयोजन करके हिंदी को समृद्ध कर रहे हैं। अमेरिका से अनूप भार्गव कविता की विविध विधाओं की न केवल कार्यशालाएँ चला रहे हैं, वरन् भारतीय दूतावास के साथ मिलकर एक महत्त्वपूर्ण डिजिटल हिंदी पत्रिका भी प्रकाशित कर रहे हैं। डिजिटल क्रांति ने करोड़ों युवाओं में हिंदी के प्रति रुचि जगाने में भी योगदान दिया है; वर्तमान में सैकड़ों की संख्या में व्हाट्सएप समूह हिंदी लेखन को प्रोत्साहित कर रहे हैं।

एक समय था, जब किसी पत्रिका में रचना छप जाने पर दस-बीस पत्र पाकर लेखक प्रसन्न हो जाता था और पचास-साठ पत्र मिल जाएँ तो प्रसन्नता आकाश छूने लगती थी। अब किसी अपरिचित या गैर-पेशेवर

कवि की कोई अवसर विशेष या विषय विशेष पर लिखी गई कविता विश्वव्यापी हो जाती है, उसे तीन-चार लाख 'व्यूज' (पाठक) मिल जाते हैं। यह क्रांति नहीं तो और क्या है! उन दिनों की कल्पना करिए, जब प्रवासी भारतीयों अथवा प्रवासी लेखकों के लिए विदेशों में हिंदी पढ़ने के लिए या अपने लेखन को प्रकाशित कराने के लिए कोई साधन नहीं थे। आज इंटरनेट पर 'कविताकोश' या 'अनुभूति', 'अभिव्यक्ति' जैसी अनेक वेबसाइट हैं, जहाँ सभी प्रतिष्ठित कवियों-लेखकों की रचनाएँ उपलब्ध हैं। लेखन की हर विधा सीखने के लिए निःशुल्क सुविधा भी उपलब्ध है।

वर्तमान में लाखों कवियों-लेखकों, विशेषकर युवा रचनाकारों को किसी पत्रिका विशेष के संपादक के रहमोकरम की भी आवश्यकता नहीं है। कुछ वर्षों पहले किसी युवा रचनाकार की रचना किसी प्रतिष्ठित पत्रिका में प्रकाशित हो जाना किला जीत लेने जैसा ही हुआ करता था। आज कोई भी रचनाकार स्वयं का 'ब्लॉग' बना ले, अपना यूट्यूब चैनल बना ले, या सैकड़ों साहित्यिक 'फेसबुक पेज' पर रचनाएँ पोस्ट कर ले या सोशल मीडिया समूहों में रचना साझा कर ले। सोशल मीडिया पर पोस्ट की गई कविताओं ने युवा कवियों-कवयत्रियों को लालकिले के कवि-सम्मेलन तक पहुँचाने का रास्ता बनाया है। युवा रचनाकारों के लिए निश्चय ही यह स्वर्णकाल है, जो डिजिटल क्रांति की देन है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि राजभाषा समारोहों से कम-से-कम हिंदी के प्रति सरकारों का, समाज का ध्यान तो जाता है। गैर-हिंदीभाषी सरकारी कर्मचारियों को भी प्रोत्साहन मिलता ही है। यदि राजभाषा के क्रियान्वयन को पूरी निष्ठा तथा समर्पण के साथ एक राष्ट्रीय कर्तव्य मानकर किया जाए तो और भी श्रेयस्कर होगा। समाज को भी अपनी गुलामी की मानसिकता से अब तो बाहर आ ही जाना चाहिए, जबकि स्वाधीनता के ७५ वर्ष से अधिक हो चुके हैं। अंग्रेजी का प्रयोग उतना ही हो, जितना आवश्यक हो।

पाँच दशक पहले हिंदी के लिए बहुत बड़ा आंदोलन चला था। कुछ अभियान भी चले थे। ऐसे ही एक अभियान का उल्लेख आवश्यक है, जिसमें महिलाओं की टोली दुकानों पर जाकर दुकान-मालिक को राखी बाँधकर बदले में दुकान का बोर्ड हिंदी में करने का आग्रह करती थीं। तब पब्लिक स्कूलों का भी वर्चस्व नहीं था। शायद फिर कुछ अभियानों की आवश्यकता है कि राजभाषा हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' बनाने की ओर चला जाए और कभी-न-कभी विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की भाषा संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा बने।

बड़े सपने जरूरी हैं

प्रख्यात व्यंग्यकार शरद जोशी के एक व्यंग्य की प्रथम पंक्ति है—'ओलंपिक उस स्थान का नाम है, जहाँ हम हारते हैं!' ओलंपिक खेलों के संदर्भ में भारत की स्थिति पर गंभीरता से विचार करें तो 'व्यंग्योक्ति' सार्थक ही लगती है। दुनिया की सबसे बड़ी आबादी वाला भारत ७१वें स्थान पर रहा। क्रमांक ७० तक (एक ही स्थान पर दो-तीन देश) चौरासी देश पदक तालिका में भारत से ऊपर रहे। इन देशों में ऐसे भी देश हैं, जिनकी आबादी भारत के दर्जनों बड़े शहरों के किसी बड़े मोहल्ले की आबादी के बराबर है। उदाहरण के लिए, डोमिनिका देश की आबादी दिल्ली के शकरपुर इलाके या द्वारका उपनगर के एक सेक्टर जितनी होगी। डोमिनिका ने तीन-चार गिने-चुने खेलों के लिए चार-पाँच ही खिलाड़ी भेजे और एक स्वर्ण पदक तथा २ कांस्य पदक जीत लिये तथा भारत से १३ स्थान ऊपर रहा। ऐसे ही अन्य छोटे-छोटे देश हैं। पिछले ओलंपिक में 'सैन मैरिनो' नामक चौंतीस हजार की आबादी वाले देश ने कुल ५ खिलाड़ी भेजे और वे ४ मेडल लाए थे। (जबकि भारत ने एक सौ सत्रह खिलाड़ियों का विशाल दल भेजा था।) वैसे इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि ओलंपिक के कीर्तिमान सबको पता हैं। यदि खिलाड़ी उनके आसपास का प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं है तो आप ४०० खिलाड़ी भेज दें, क्या फर्क पड़ता है।

यहाँ एक बात और भी विचारणीय है। भारत ने जब भी कोई कांस्य पदक जीता तो चैनलों के एंकरों ने चीख-चीखकर आसमान सिर पर उठा लिया। शानदार प्रदर्शन, गौरवशाली जीत''आदि-आदि। एक-एक घंटे के विशेष कार्यक्रम। फिर कहीं पटाखे छूट रहे हैं, कहीं कुछ और हो रहा है। पदक मिलना खुशी और गर्व का विषय है, किंतु यह भी तो विचार करना चाहिए कि अमेरिका को तो ४० स्वर्ण पदक ४४ रजत पदक सहित एक सौ छब्बीस पदक मिले। कोरोना के समय पर तो हम अमेरिका से ही तुलना कर रहे थे। विकास दर के लिए भी हम अमेरिका, जापान, फ्रांस से तुलना करते हैं तो फिर पदकों के लिए क्यों नहीं? कल्पना करिए कि जब कांस्य पदक पर चैनल इतना भावविह्वल हो जाते हैं तो ११७ खिलाड़ियों में से २०-२२ खिलाड़ी स्वर्ण-रजत पदक ले आए तो क्या स्थिति होगी?

पिछले ओलंपिक में चैनलों की कवरेज याद कीजिए। ऐसा लगा कि कोई खेलक्रांति हो गई हो। भारत को इतने सारे मेडल मिल गए। अतिरिक्त उत्साह के पीछे एक स्वर्ण पदक तथा हॉकी में कांस्य पदक मिलना था। तथ्यों की कसौटी पर देखें तो २०१२ के ओलंपिक में भारत को ६ पदक मिले और आठ साल बाद चौंतीस अधिक खिलाड़ी भेजने पर सिर्फ एक मेडल बढ़ा तथा कुल ७ मेडल मिले, जबकि २०१६ में मात्र २ मेडल मिले थे।

यदि भारत ओलंपिक में अधिक पदक लाने की सोचे तो कम-से-कम ३० पदक बड़ी आसानी से पा सकता है। हॉकी में कितने ही वर्षों की निराशा के बाद स्थिति कैसे बदली? ओडिशा सरकार ने हॉकी को गोद लिया। स्टेडियम बनवाए, एस्ट्रोटर्फ बिछवाए, कोच बुलाए, टूर्नामेंट कराए और परिणाम सामने है। यदि भारत के सारे प्रांत तथा केंद्रशासित प्रदेश एक-एक खेल अपना लें, उस पर पैसा लगाएँ, खिलाड़ी तैयार करें तो निश्चय ही ३०-३५ पदक तो मिल ही जाएँगे। यदि हम कांस्य पदक पाकर ही खुशी से आसमान सिर पर उठाते रहे तो फिर शीर्ष दस की कल्पना भी असंभव रहेगी।

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

प्रतिस्मृति

अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी की क्षमता

• पं. विद्यानिवास मिश्र

(१४ जनवरी, १९२६-१४ फरवरी, २००५)

अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी की क्षमता हिंदी में एक अंतरराष्ट्रीय भाषा होने की पूर्ण क्षमता है। इस क्षमता की पहचान अगर नहीं की जाएगी तो हिंदी तकनीकी प्रगति की दौड़ में काफी पीछे रह जाएगी। अपने देश में लोग हिंदी के बारे में कितने ही उदासीन हों, किंतु जो विद्वान् भाषा के प्रवाह की गति को पहचानते हैं और जो भाषाविज्ञान के सामाजिक पक्ष के पंडित हैं, वे अच्छी तरह समझने लगे हैं कि बीसवीं शताब्दी का अंत होते-होते विश्व में कुछ दस भाषाएँ अंतरराष्ट्रीय महत्त्व की रह जाएँगी, जिनमें आपसी आदान-प्रदान सहज और स्वयंचालित बनाने के लिए यांत्रिकी सुविधाएँ सुलभ हो सकेंगी; उनमें हिंदी का प्रमुख स्थान होगा। इस निष्कर्ष पर जो पहुँचे हैं, वे सपनों के पीछे दौड़नेवाले प्रेमी नहीं हैं, वे वस्तुपरक दृष्टि से भाषा की क्षमता पहचाननेवाले भाषाशास्त्री हैं।

हिंदी भाषा-भाषी समुदाय विशाल है; किंतु उसे अपनी विशालता का ही अनुमान नहीं होता। हनुमान की तरह उसे स्मरण कराना पड़ता है कि तुम्हारे भीतर असीम शक्ति है। हिंदी के अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में प्रतिष्ठित होने की जिन आधारभूत परिस्थितियों का परीक्षण किया गया है, उनके बारे में संक्षेप में अपने ही लोगों को बतलाना आवश्यक हो गया है। हिंदीभाषी जन की सबसे बड़ी दुर्बलता यही है कि वह स्वाधीन होने के बाद भी धीरे-धीरे आत्मविश्वास खो बैठा है। उसे अपनी संस्कृति और अपनी भाषा के बारे में कुछ संकोच होने लगा है। वह सोचने लगा है कि कहीं क्षेत्रीय तो नहीं है, किसी की रग तो नहीं दुखा रही है, किसी का अधिकार तो नहीं छीन रही है, या फिर कहीं हिंदी प्रभुओं की भाषा बनने की प्रतिस्पर्धा तो नहीं कर रही है?

यह भूल गया है कि हिंदी और स्वाधीनता दोनों एक-दूसरे के पर्याय हैं। हिंदी मुक्ति के लिए संघर्ष की भाषा रही है—और मुक्ति केवल अपने देश के लिए नहीं, उन समस्त देशों के लिए है जो उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद और प्रभाववाद में जकड़े जा रहे हैं या जकड़े हुए हैं। यह स्मरणीय है कि अपने देश में अपनी भाषा रहनी चाहिए—यह आवाज उठाने की प्रेरणा सबसे पहले जिनके मन में उठी, वे हिंदीभाषी क्षेत्र के नहीं थे। यह बार-बार दुहराया गया सत्य है कि स्वामी दयानंद, राजा राममोहन राय, केशवचंद्र सेन, न्यायमूर्ति शारदाचरण मित्तर, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, श्रद्धाराम फिल्लौरी, महात्मा गांधी—इनमें से किसी की भी मातृभाषा हिंदी नहीं थी; पर इन्हीं लोगों ने इस आवश्यकता का अनुभव किया कि इस विशाल देश के जन समुदाय के बीच एक संवाद स्थापित करने की आवश्यकता है और यह संवाद ऐसी भाषा से ही स्थापित हो सकता है जो संतों, फकीरों, यात्रियों, देश के एक छोर से दूसरे छोर तक जानेवाले व्यापारियों, दूर-दूर तक मुहिम पर जानेवाले सिपाहियों के आपसी व्यवहार की भाषा सदियों से रही हो। वे यह पहचानते थे कि यह भाषा किसी-न-किसी रूप में हिंदी थी। यह संगीत और कला पर भी छाई रही और बाजार पर भी छाई रही। उसके शब्दों में बँधे भक्तिपद आज भी देश-विदेश, सर्वत्र लोगों को शांति प्रदान कर रहे हैं।

स्वाधीनता के पहले दौर में अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों का काफी असर था; पर बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में स्वाधीनता की जो लहर उठी, उसमें यह अनुभव किया गया है कि जब तक यह जन-संघर्ष नहीं होगा, तब तक संघर्ष की बात केवल वाग्जाल बनकर रह जाएगी। चंपारण के आंदोलन के बाद पहली बार दूर अफ्रीका के वर्णभेद के खिलाफ सत्याग्रह की लड़ाई की दीक्षा लेकर गांधीजी जब साधारण जन से जुड़े तब उन्होंने समझा कि अंग्रेजी से काम नहीं चलेगा। देश की स्वाधीनता के लिए जो आवाज लगाई जाएगी, वह देश की भाषा में होगी। यह आवाज हर जलसे में इस रूप में लगाई जाती थी—

सब मिल बोलो एक आवाज,
अपने देश में अपना राज।

यह आवाज स्वदेशी की मंत्र बन गई और चरखे के साथ-साथ सारे देश में प्रचारित हो गई। भारत के अपने स्वाधीनता-संघर्ष के साथ-साथ अफ्रीका के मुक्ति आंदोलन में भी हिंदी सहायक हुई। भारतीय मूल के हिंदी भाषियों ने पूर्वी अफ्रीका, फीजी तथा मॉरीशस में दासता, वर्णभेद और

उपनिवेशवाद के विरुद्ध सिर उठाया। उसके सिर में सिर्फ एक चौपाई का टुकड़ा गूँज रहा था—'पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं'। उन्होंने ही हिंदी को भाषा बनाया और राजा के अधिकार को चुनौती दी। इस प्रकार हिंदी की पूजा, आधुनिक विश्व की जो सबसे महत्त्वपूर्ण चेतना थी—उपनिवेशवाद से मुक्ति और सामान्य जन की गरिमा की प्रतिष्ठा—उस चेतना की प्रमुख वाहिका बनी। इसका पहले का इतिहास भी विश्वबंधुता और सम्यक् जीवन की मूल्यवत्ता को पहचानने का इतिहास रहा। भक्ति आंदोलन में हिंदी की भूमिका एक संयोजक की भूमिका थी। उसने पूरे देश के भक्ति आंदोलन को एक-दूसरे से संयोजित करने का व्रत लिया था। हिंदी के संयोजक होने के कारण ही समस्त भारत के भक्ति आंदोलन का स्वर एक था। जाति-पाँति, धन-धर्म-कुल की बड़ाई बौनी हो गई थी; भक्ति इन सबको फूँक करके असीम आकाश को प्रकाशित करनेवाली लौ बनी। इस प्रकार से इस हिंदी ने जिस शक्ति की पहचान कराई उस शक्ति की विशिष्टता यही थी कि वह साधारण व्यक्ति की, विपन्न व्यक्ति की प्रसुप्त चेतना में विशालता के बीज बो रही थी। पूरा भक्ति आंदोलन जन-साधारण की शक्ति की खोज है। उस आंदोलन ने दिल्ली की सत्ता को, सामंतों की सत्ता को एक बड़ी सत्ता के आगे नगण्य बना दिया। उस बड़ी सत्ता का या तो कोई रूप नहीं था या उसका रूप एक गँवार चरवाहे का था या उसका रूप एक निर्वासित, एक जागरूक धनुर्धर का था। स्वाधीनता आंदोलन की यही जमीन थी, जो एक व्यापक देश और व्यापक जीवन की आकांक्षा से पुलकित थी। यह जमीन ऊँचाइयों को महत्त्व नहीं देती थी, नीचे की ओर बहनेवाली उस तेज और गहरी धार को महत्त्व देती थी, जो अपने साथ असंख्य छोटी-छोटी धाराओं को लेती हुई निरंतर चलती रहती थी।

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में इस आध्यात्मिक विशालता को एक नया मानवीय आयाम दिया गया, जिसमें छोटे स्वार्थों की आहुति एक बड़े अर्थ के लिए देने की बात शुरू हुई। यह उल्लेखनीय है कि बिना किसी बाहरी प्रेरणा के एशिया की गरिमा की आवाज सबसे पहले सन् १९०१ में ही स्व. श्री राधाकृष्ण मित्र ने अपनी 'एशिया' कविता में बुलंद की। प्रवासी भारतीयों के दु:ख-दर्द की बात हिंदी में ही उठाई गई है। भवानीदयाल, बनारसीदास चतुर्वेदी, तोताराम सनाढ्य और विष्णुदयाल ने प्रवासी भारतीयों के शोषण की ओर जिस भाषा में ध्यान दिलाया, वह हिंदी थी। इस प्रकार बिना किसी राजनीतिक संरक्षण के, बिना किसी सत्ता के आश्रय के सहजभाव से हिंदी की अंतरराष्ट्रीय दृष्टि का उन्मेष किया। इस उन्मेष में न कोई दुराव था, न कोई कपट था और न ही इसमें एक उद्धारकर्ता मसीहा का मसीहाई भाव ही था। इसमें केवल सेवा और समर्पण का भाव था। जिस विश्व-मानव की बात दो-दो विश्वयुद्धों की विभीषिका से गुजरकर पश्चिम की मदोन्मत शक्तियों ने एक अपरिहार्य आवश्यकता के रूप में ली है, वह बात हिंदी में बहुत पहले दु:ख की वास्तविकता से, करुणा की अनुभूति से उद्भासित हो चुकी थी। हिंदी के अंदर अंतरराष्ट्रीय भूमिका के लिए यह एक सशक्त आधार है। यह आधार अपने इतिहास से प्राप्त आधार, इसीलिए सुदृढ़ है। यह आरोपित या उधार लिया हुआ नहीं है। अधिकतर लोग समझते हैं कि संख्या का तर्क हिंदी को राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय महत्त्व दिलाने में एक प्रमुख कारण है; पर वे भूल जाते हैं कि संख्या का बल एक छोटा बल है; साहित्य की समृद्धता का आधार भी एक छोटा आधार है।

अब तक मैंने जिन आधारों की बात की है, वे मुख्य रूप से सामाजिक तथा सांस्कृतिक आधार हैं। अब हिंदी भाषा की संरचना की विशेषताओं की बात करना चाहूँगा, जो हिंदी को इस तकनीकी युग में व्यापक रूप में ग्राह्य बनाने में प्रयोजक बन सकती हैं। इस भाषा की संरचना की तीन विशेषताएँ ऐसी हैं, जो इस दृष्टि से बहुत महत्त्व रखती हैं। पहली विशेषता यह है कि हिंदी विश्लेषात्मक और संश्लेषात्मक दोनों है।

व्यापक स्तर पर ग्राह्य भाषा के रूप में उसकी मान्यता और शक्ति उसकी संख्या से नहीं आई है और न केवल उसके साहित्य के महत्त्व से आई है, वह शक्ति तीन कारणों से विकसित हुई। पहला कारण तो यही है कि वह सदियों से अंत:प्रांतीय व्यवहार की भाषा थी। इसी भाषा का व्यवहार जहाँ तीर्थों व व्यापारिक केंद्रों में होता था वहीं रमता जोगियों के सत्संग में भी होता था। यह भाषा बहता नीर थी। दूसरा कारण हिंदी की वह विरासत थी, जो उसने अप्रत्यक्ष रूप में संस्कृत से और प्रत्यक्ष रूप से मध्यदेशीय प्राकृत से ली; न संस्कृत का कोई प्रदेश था, न मध्य प्राकृत का। ये समस्त प्रदेशों को जोड़नेवाली भाषाएँ थीं। हिंदी भी इसी प्रकार की संस्कृत की तरह केंद्रोंमुख शक्ति की स्थापना करनेवाली भाषा रही। हिंदी भाषा का देश पूरा हिंदुस्तान है, कोई एक प्रांत या राज्य नहीं। हिंदी की शक्ति का तीसरा कारण है उसका जनभाषाओं से गहरा संबंध। हिंदी क्षेत्र में लगभग अठारह जनभाषाएँ हैं और इस क्षेत्र के व्यक्ति एक विचित्र प्रकार के द्विभाषा-भाषी हैं। ये बहुत निजी पारिवारिक परिवेश में एक भाषा बोलते हैं और एक व्यापक परिवेश में दूसरी भाषा। इस प्रकार दोनों को साधते चलते हैं; क्योंकि दोनों के प्रयोजन महत्त्वपूर्ण हैं—एक सीमित क्षेत्र की आत्मीयता और एक बड़े क्षेत्र के होने का भाव। हिंदीभाषी जन इसमें से किसी का मोह छोड़ नहीं सकता; इसीलिए वह निरंतर संतुलन बनाए रहता है। वह जनपद जीवन का संस्पर्श देता है। साथ ही पूरे देश की भावना को महत्त्व देता है—जनपद की भाषा से। यह आकस्मिक संयोग मात्र नहीं है कि हिंदी में तद्भव और तत्सम शब्दों का संतुलन है। वह हिंदी में निरंतर सामान्य जीवन से लेने तथा उन्हें जीवन में ढालने की क्षमता देता है और उसके साहित्य में छोटे-छोटे ग्रामांचल की पीड़ा को अंकित करने की तीव्र आकांक्षा भरता है।

दूसरी ओर हिंदी की बोलियों के लोक-साहित्य तथा लोक-गायकों के साहित्य में सबसे अधिक मुखरता राष्ट्रीय चेतना की है। अवधी, भोजपुरी, बुंदेली, गढ़वाली, छत्तीसगढ़ी, कौरवी, राजस्थानी—किसी भी क्षेत्र को लीजिए, प्रत्येक में राष्ट्र की एक मूर्त कल्पना है, उसके लिए

न्योछावर होने का अपूर्व उत्साह है इस आदान-प्रदान के कारण। इस लोक और शास्त्र के बीच, लघु और विशाल के बीच, ग्राम और महानगर के बीच आदान-प्रदान कराते रहने के कारण ही हिंदी एक जीवंत भाषा के रूप में विकसित होती रही है। उसने निरंतर कृत्रिम रूप से जड़ाऊ भाषा रूपों का तिरस्कार किया है, 'भदेस की भनिति' का आश्रय लेकर निरंतर नई ऊर्जा पाई है। आज के जमाने में किंग्स इंग्लिश और क्वींस इंग्लिश की बात उपहासास्पद हो गई है। जब सत्ता का नियमन इने-गिने सामंतों, सरदारों या मैंडरिनों (अफसरशाहों) के हाथों में नहीं रह गया है, सत्ता का स्रोत अनाम और असंख्य जनता हो गई है, तब सामाजिक मान्यता का आधार बदल गया है और इस बदली हुई परिस्थिति में हिंदी भाषा का एक रूप अपने आप प्रतिष्ठापित हो गया है। विगत पचीस वर्षों में जितनी द्रुतगति से इसमें परिवर्तन हुए हैं उतना परिवर्तन आधुनिक विश्व की कम भाषाओं में हुआ है। परिवर्तन की यह तेजी ही हिंदी की सजगता और ऊर्जस्विता का प्रमाण है। यह तेजी ही उसे अंतरराष्ट्रीयता प्रदान करने का एक पुष्ट आधार है।

अब तक मैंने जिन आधारों की बात की है, वे मुख्य रूप से सामाजिक तथा सांस्कृतिक आधार हैं। अब हिंदी भाषा की संरचना की विशेषताओं की बात करना चाहूँगा, जो हिंदी को इस तकनीकी युग में व्यापक रूप में ग्राह्य बनाने में प्रयोजक बन सकती हैं। इस भाषा की संरचना की तीन विशेषताएँ ऐसी हैं, जो इस दृष्टि से बहुत महत्त्व रखती हैं। पहली विशेषता यह है कि हिंदी विश्लेषात्मक और संश्लेषात्मक दोनों है। न चीनी भाषा की तरह एकदम विश्लेषात्मक है और न ग्रीक व संस्कृत की तरह बहुत संश्लेषात्मक। इसमें दोनों के बीच एक संतुलन है; इसीलिए अर्थ की अस्पष्टता और संदिग्धता की गुंजाइश कम है। यांत्रिक अनुवाद की सुविधा की दृष्टि से यह गुण बहुत उपयोगी है। इसकी संरचना की दूसरी विशेषता है इसकी शब्द रचना की क्षमता। इसमें यह अंग्रेजी से किसी माने में कम नहीं है। इसमें विभिन्न भाषाओं से उधार लिये शब्दों को, यहाँ तक कि प्रत्ययों को (दार-इयत्-इक जैसे) भी अपनी प्रकृति में ढाल देने की क्षमता है। इसके कारण सूक्ष्म अर्थच्छटाओं को व्यक्त करने की, पारदर्शी ढंग से व्यक्त करने की क्षमता का विकास हिंदी में हुआ है। हिंदी को संस्कृत का एक अक्षय स्रोत प्राप्त है; पर वही एक स्रोत नहीं है, उसी स्रोत से उद्भूत लाखों की संख्या में तद्भव शब्द भी उसके पास हैं। ये अनेक रूपांतरों के बावजूद किसी-न-किसी रूप में हिंदी में मानकीकृत हो गए हैं और इनमें ऐतिहासिक यात्रा के कारण नए अर्थ के वहन की क्षमता आ गई है।

यह अवश्य है कि हिंदी की शक्ति की पूरी पहचान हमारे देश में भाषा-योजना के आचार्यों ने नहीं की। उन्होंने ऊपर से तो जरूर कहा कि हम संस्कृत के शब्दों के तथा प्रत्ययों के आधार पर नए शब्द गढ़ेंगे, किंतु उन्होंने संस्कृत का आधार न लेकर, अंग्रेजी का आधार लिया। उन्होंने अंग्रेजी के अर्थों को संस्कृत में खोल दिया। अपने आस-पास के समाज में अर्थों की तलाश नहीं की। इन अर्थों को समझनेवाले मजदूरों, किसानों, मिस्त्रियों, शिल्पियों, व्यवसायियों के प्रयोग को मापने की कोशिश नहीं की। उन्होंने प्रयोग लादना चाहा, जीवित प्रयोगों की पैमाइश नहीं की। एक सीमित रूप में यह काम शुरू हो गया है और यह आशा की जाती है कि अंग्रेजी की साजिश के बावजूद जनतंत्र के दबाव के कारण आगे का जो भाषा-नियोजन होगा, वह सही ढर्रे पर होगा; शब्द रचना की पूरी क्षमता का भरपूर विनियोग होगा।

हिंदी की संरचना की तीसरी और सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता उसकी वर्णमाला है। इसी के साथ-साथ लिपि जुड़ी हुई है, जो इस वर्णमाला को लिखने का देवनागर ढंग अक्षर को महत्त्व देती है, एक ध्वनि को नहीं। अक्षर को महत्त्व देने से इकाइयों की संख्या कम हो जाती है। जब विद्युत्यांत्रिकी, सांख्यिकी, भाषाविज्ञान, संगणन-गणित और इंजीनियरिंग—ये सभी मिलकर एक टीम के रूप में काम करेंगे और पुनरावृत्तियों के आरोह-अवरोह क्रम की ठीक तरह से नाप-जोख लेंगे तो हिंदी की अक्षरप्रधान संरचना को यंत्र में ढालना काफी सुकर होगा, अधिक सुगम होगा—उन संरचनाओं की अपेक्षा जहाँ पर ध्वनि अनुभाव्य इकाई है। हम इस क्षेत्र में जापानी का उदाहरण दे सकते हैं। जापान ने अपनी प्रौद्योगिकी का विकास अंग्रेजी के माध्यम से नहीं किया और बहुत कम समय में उन्होंने जापानी भाषा में संगणक (कंप्यूटर)—और बहुत सूक्ष्म और कुशल संगणक—बना लिए हैं। कोई कारण नहीं कि हम भी वैसा पाँच-दस वर्षों में न कर सकें।

संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी को अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार कराने में सक्रिय तटस्थता की नीति भी सहायक होगी। एक ऐसे समूह को साथ ले चलने का संकल्प हमारी विदेश नीति में है, जो समूह किसी एक गुट का पिछलग्गू बनकर नहीं रहना चाहता; जो अपनी स्वाधीनता सुरक्षित रखना चाहता है, पर साथ-ही-साथ एक संहत शक्ति का उदय भी चाहता है। इस समय यह अधिक शक्तिशाली न लगे, पर ज्यों-ज्यों बड़ी शक्तियों का उन्माद बढ़ेगा त्यों-त्यों इन देशों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती जाएगी। शस्त्रबल उस विवेक के आगे, आत्मबल के आगे झुकने लगेगा। उस समय ऐसी राजनीति का नेतृत्व करनेवाले हिंदुस्तान की भाषा की उपेक्षा नहीं की जा सकेगी। आर्थिक शिकंजावाद भी अंतत: शिकंजा कसनेवालों के लिए संकट बनेगा; तब उस शिकंजे की भाषा भी ढीली पड़ेगी। वह अफ्रीका-एशिया की उदार और विश्वबंधु-भाषाओं को अपने समकक्ष स्वीकार करेगी। शायद आगे आनेवाले बाजार का यथार्थ ही उसे विवश करेगा।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि हिंदी की अंतरराष्ट्रीय भूमिका एक स्वप्न नहीं है, नए विश्व मानव की एक माँग है और आनेवाले भविष्य की एक जाज्वल्यमान वास्तविकता है। परंतु यह वास्तविकता केवल गर्व करने और आत्म-संतुष्ट होने के लिए नहीं है। यह प्रतिष्ठा का बोध जगाने और उस प्रतिष्ठा के अनुकूल एक बड़ी चुनौती स्वीकार करने का आमंत्रण देती है। हिंदीभाषी जन स्वाती की प्रतीक्षा न करें, वे अपने तप के ताप से स्वयं को बादल के रूप में रूपांतरित करें। धरती को हिंदी के पावस की प्रतीक्षा है।

सा अ

उत्तरी अमेरिका के इंडियन

● कुलदीप चंद अग्निहोत्री

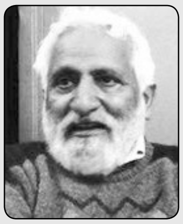

सुपरिचित लेखक। हि.प्र. केंद्रीय विश्वविद्यालय धर्मशाला के कुलपति हैं। भीमराव आंबेडकर पीठ के अध्यक्ष रहे। हि.प्र. में दीनदयाल उपाध्याय महाविद्यालय की स्थापना की। लगभग दो दर्जन से अधिक देशों की यात्रा, पंद्रह से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित। संप्रति भारत-तिब्बत सहयोग मंच के अखिल भारतीय कार्यकारी राष्ट्रीय संरक्षक और दिल्ली में 'हिंदुस्थान समाचार' के निदेशक।

१. उत्तरी अमेरिका और इंडियन से क्या अभिप्राय है : उत्तरी अमेरिका में रहने वाले इंडियन कौन हैं और उन्हें इंडियन क्यों कहा जाता है? इस प्रश्न का उत्तर जानने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि उत्तरी अमेरिका से हमारा अभिप्राय क्या है। अमेरिका महाद्वीप को भूगोल के लिहाज से तीन हिस्सों में बाँटा जा सकता है—उत्तरी, मध्य और दक्षिणी अमेरिका। उत्तरी अमेरिका में मोटे तौर पर यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका, यानी यू.एस.ए. और कनाडा शुमार हैं। अमेरिकी महाद्वीप में कोलंबस के आने से पहले जो लोग रहते थे, उन्हें इंडियन कहा जाता है। उत्तरी अमेरिका के ये इंडियन अनेक समुदायों में बँटे हुए हैं, जिन्हें अंग्रेजी में अनेक ट्राइब्स भी कहा जाता है। लेकिन महत्त्वपूर्ण प्रश्न पैदा होता है कि यूरोपीय लोगों के आने से पहले उत्तरी अमेरिका में रहने वाले लोगों को इंडियन क्यों कहा जाता था या फिर ये इंडियन कहाँ से आए थे? उपनिवेशवादियों का उत्तर तो बहुत सरल और सपाट है। उनके अनुसार इटली का कोलंबस भारत पहुँचने के लिए अपने घर से निकला था। सागर में यात्रा करते समय भी वह यही समझ रहा था कि उसका जहाज भारत की ओर ही जा रहा है। जब वह १४९२ में अमेरिका पहुँच गया, तब भी वह इसी भ्रम में था कि वह इंडिया पहुँच गया है। वहाँ जो लोग उसे मिले, वे इस हिसाब से इंडियन थे। इस प्रकार यूरोप के लोगों ने भ्रम में उत्तरी अमेरिका के मूल लोगों को इंडियन कहना शुरू कर दिया था और उसके बाद इन लोगों को विश्व भर में इंडियन ही कहा जाने लगा। यह मामला सन् १५०० का है।

२. उत्तरी अमेरिका के इंडियन कौन हैं? : अब तक उत्तरी अमेरिका के अनेक हिस्सों पर अपने उपनिवेश स्थापित करने वाले यूरोपीय सत्ताधीशों को यह जानने की जरूरत नहीं थी कि उनके आने से पहले से ही यहाँ रह रहे लोग कौन थे और कहाँ से आए थे, क्योंकि उन पर पूरी तरह काबू पा लिया गया था और उन्हें विभिन्न राज्यों में अप्रासंगिक बना दिया गया था। लेकिन विश्वविद्यालयों में कुछ लोगों को यह जिज्ञासा होनी स्वभाविक ही थी कि इन इंडियन के मूल को खोजा जाए। जिज्ञासा मानव का मूल स्वभाव है। यह कभी समाप्त नहीं होती। जिज्ञासा ही मानव प्रगति का मूलाधार है। खोजबीन करने पर पता चला कि लगभग पंद्रह हजार साल पहले ये लोग अलग- अलग समय में एशिया से चलकर साइबेरिया से होते हुए उत्तरी अमेरिका पहुँचे थे। यानी ये 'इंडियन' असल में एशियाई हैं। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में 'सप्त दीप नव खंड' की चर्चा आती है तो उन सप्त द्वीपों में से एक द्वीप जंबू द्वीप है, जिसे यूरोप के लोग एशिया कहते थे/हैं। उत्तरी अमेरिका के मूल निवासी इंडियन एशिया/जंबू द्वीप से आए थे, यह लगभग निश्चित हो गया। यह भी निश्चित हो गया कि ये लोग एशिया के चीन खंड से नहीं आए थे। अब इन 'इंडियन' लोगों की भाषाओं और संस्कृति के बारे में खोजबीन शुरू हुई तो आश्चर्यजनक तथ्य सामने आए। इनकी संस्कृति के अधिकांश जीवन-मूल्य जंबू द्वीप के जीवन-मूल्यों से मिलते ही नहीं थे, बल्कि जंबू द्वीप और इन इंडियन के जीवन-मूल्य एक ही थे। मुख्य बात थी धरती के प्रति दृष्टिकोण को लेकर। कोई भी समुदाय धरती से अपना संबंध किस रूप में जोड़ता है, यह उस समुदाय के जीवन-मूल्यों और संस्कृति को समझने में सबसे ज्यादा भूमिका अदा करता है। धरती से संबंध के दृष्टिकोण से ही प्रकृति से संबंध आता है। धरती और प्रकृति से संबंध के प्रति समुदाय की अवधारणा उसके जीवन-मूल्यों की नींव है। उत्तरी अमेरिका के इंडियन धरती को माँ मानते हैं। वे अभी भी अपने निवास क्षेत्रों में Mother Earth के बोर्ड लटकाते हैं। भारत में वेद 'पृथ्वी माँ है और मैं इसका पुत्र हूँ' से ही अपना गान शुरू करता है।

भारत में स्वास्तिक का चिह्न शुभ माना जाता है। यह ज्ञान का प्रतीक है। गणेशजी से जुड़ा हुआ है। उत्तरी अमेरिका के इंडियन की संस्कृति स्वास्तिक के बिना अधूरी है। उनके घरों में यह चिह्न देखने के लिए आम मिल जाता है। द्वितीय विश्वयुद्ध में जब जर्मनी ने अपने टैंकों पर स्वास्तिक चिह्न लगाकर इसका दुरुपयोग किया और हजारों यहूदियों

को निर्दयता से मार डाला, तो स्वाभाविक ही यहूदियों ने इस प्रतीक का विरोध करना शुरू कर दिया। सभी जानते हैं कि यू.एस.ए. की अर्थ व्यवस्था पर काफी हद तक यहूदियों का ही नियंत्रण है। इसलिए वहाँ के यहूदी इस शुभ प्रतीक का विरोध करते हैं। लेकिन इंडियन में स्वास्तिक के प्रति इतनी श्रद्धा है कि वे इस विरोध के बावजूद स्वास्तिक चिह्न का सार्वजनिक तौर पर प्रयोग ही नहीं करते, बल्कि उसके पक्ष में संघर्ष भी करते हैं। अकादमिक क्षेत्रों में मैक्सिको की माया संस्कृति को तो जंबू द्वीप या भारत की संस्कृति की छाया तक माना जाता है। इस प्रकार धीरे-धीरे स्पष्ट होने लगा कि उपनिवेशवादी ताकतों के आने से पहले के उत्तरी अमेरिका निवासियों को इंडियन, कोलंबस के आगमन की स्मृति में नहीं कहा जाता, बल्कि इनका मूल जंबू द्वीप/एशिया से जुड़ा हुआ होने के कारण यह नाम उनकी पहचान के रूप में प्रचलित है। जंबू द्वीप/एशिया की संस्कृति से इनके गहरे रिश्ते हैं।

३. उत्तरी अमेरिका के इंडियन का नरसंहार : यूरोप और अमेरिका के इतिहासकारों का तो मानना है कि जब यूरोप के लोग १५०० में उत्तरी अमेरिका पहुँचने शुरू हुए तो उन्होंने यहाँ के मूल निवासियों को भ्रम में या अन्य कारणों से इंडियन कहना शुरू कर दिया। लेकिन अमेरिका में यूरोप की उपनिवेश बस्तियाँ कोलंबस के आगमन के तुरंत बाद ही बननी शुरू नहीं हुई थीं। इसकी असली शुरुआत तो तब हुई, जब कप्तान क्रिस्टोफर न्यूपोर्ट के तीन जहाजों ने अटलांटिक महासागर में भटकते हुए किसी दिन चीसापीक खाड़ी के मुहाने पर लंगर डाला। यह वर्ष १६०७ के अप्रैल मास के एक दिन की अलस्सुबह थी। इन जहाजों में एक युवक जार्ज पर्सी भी था। जार्ज पर्सी ने वहाँ के इंडियन का वर्णन करते हुए लिखा है कि "इंडियन ने नए आने वालों को खाने के लिए मक्के की रोटी और तंबाकू सुलगा कर दी, जिसे वे लोग मिट्टी की चिलम में भरकर ताँबे की निकाली से पिया करते थे।" १६०७ के बाद तो यूरोप के विभिन्न देशों से उत्तरी अमेरिका में आने वालों का ताँता लग गया। लेकिन अधिकांश लोग आज के इंग्लैंड से ही आए। परंतु उस समय यूरोपीय लोगों को इन इंडियन के बारे में ज्यादा खोजबीन करने की जरूरत नहीं थी। उस समय उनके सामने इंडियन को पराजित कर, उन्हें नियंत्रण में करने, गुलाम बनाने, उनकी जमीन पर कब्जा करने, उन्हें उनके आवास स्थानों से निकालने की समस्या थी। जिसमें उन्होंने जल्दी ही सफलता हासिल कर ली। उसके बाद इंडियन को उनकी विरासत से तोड़कर, उन्हें मतांतरित करने व उनकी मूल आस्थाओं, भाषाओं को नष्ट करने का दौर शुरू हुआ।

अब तक यूरोप के प्रवासियों ने उत्तरी अमेरिका के विशाल भू-भाग पर कब्जा कर लिया था और इंडियन को उन्हीं के घर में बेगाना घोषित कर दिया था। इस प्रकार उपनिवेशवादी इंडियन की ओर से निश्चिंत होकर बैठ गए थे, क्योंकि अब इंडियन संख्या बल में यूरोपीय लोगों से पिछड़ गए थे और उनके आधुनिक हथियारों का मुकाबला करने में अक्षम ही थे। १४९२ में जब कोलंबस आया था, तब उत्तरी अमेरिका में रहने वाले इंडियन की जनसंख्या पचास लाख से लेकर डेढ़ करोड़ के बीच कही जाती है। सन् १८०० के खत्म होते-होते यह जनसंख्या २,३८,००० के बीच सिमट गई। लेकिन "It has been almost fifty year since American scholar Henry Dobyns shocked the academic community with the proposition that the indigenous population of North America at contact with Europeans might have been 90 millions." उपनिवेशवादियों ने अधिकांश इंडियन को अलग-अलग तरीकों से मार दिया और उनकी बस्तियों को नष्ट कर दिया। बैरी सी कैंट के अनुसार, "The history of Europeans and Indian confrontation is one of conflict between a highly evolved culture civilisation and an agglomeration of Stone Age societies. By and large, the Europeans used the Indians so long as it was economically advantageous; then they eventually dispersed or destroyed them." कनाडा में तो गोरे लोगों ने इंडियन को मारने के नए-नए यूरोपीय तरीके ईजाद किए और उनका इस्तेमाल किया। इंडियन बच्चों को शिक्षित करने के लिए उनके लिए आवासीय स्कूल खोले गए। ये स्कूल सरकार द्वारा और चर्च द्वारा इंडियन बच्चों के लिए चलाए जाते थे। लेकिन इनमें अपने बच्चों को भेजना इंडियन के लिए वैकल्पिक नहीं था, बल्कि अनिवार्य था। यहाँ आ जाने के बाद इन बच्चों का क्या हश्र होता था? वहाँ उन्हें हजारों की संख्या में मारकर दबा दिया गया था। आज इक्कीसवीं शताब्दी में अभी तक भी खुदाई में वे सामूहिक कब्रिस्तान मिल रहे हैं, जहाँ उन बच्चों की हड्डियाँ भरी पड़ी हैं। कनाडा के आज के प्रधानमंत्री जस्टिन ट्रूडो यह कहकर छुटकारा पाने की कोशिश कर रहे हैं कि "it was a painful reminder of a shameful chapter of our country's history". लेकिन क्या उपनिवेशवादियों का व्यवहार इंडियन के प्रति अब भी बदला है या फिर यह शाब्दिक आडंबर मात्र ही है? यह सबसे बड़ा प्रश्न है। इसका उत्तर प्रो. जेम्स डासचुक देते हैं—"The gap between the health, living conditions and other social detriments of health life of First Nations (Indians) people and the mainstream canadians continues as it has since the end of the nineteenth century."

४. इंडियन नाम बदलने का प्रयास और उसका उद्देश्य : नई खोजबीन से यह सामने आता गया कि उत्तरी अमेरिका के इंडियन धोखे या भ्रम के कारण इंडियन नहीं कहे जाते थे, बल्कि एशिया के मूल निवासी होने के कारण ही उन्हें इंडियन की संज्ञा प्राप्त हुई है। उत्तरी अमेरिका के इंडियन और जंबू द्वीप/एशिया के लोगों की सांस्कृतिक साँझ के बारे में खोजबीन होने लगी और दोनों में अनेक समानताएँ दिखाई देने लगीं। उनका 'इंडिया दैट इज भारत' के भारतीयों से मेल-जोल ही नहीं बढ़ने लगा, भाषाई समानताएँ भी तलाशी जाने लगीं तो उपनिवेशवादी शासकों और विद्वानों को 'इंडियन' शब्द को लेकर चिंता होने लगी। जंबू द्वीप/भारतीय संस्कृति और उत्तरी अमेरिका की इंडियन संस्कृति के सूत्र यदि आपस में मिलने लगे तो दोनों में एक नई साँझ

विकसित हो सकती है। भविष्य की रणनीति को देखते हुए उन्हें लगने लगा कि इस शब्द से छुटकारा भी पाया जाए और इतना ही नहीं, इसे अपमानजनक भी बताया जाए, ताकि इंडियन स्वयं ही इस शब्द से छुटकारा पाने की कोशिश करें। लेकिन इंडियन के स्थान पर किस शब्द का प्रयोग किया जाए? यह प्रश्न इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हो गया, क्योंकि उत्तरी अमेरिका में आज के भारत/इंडिया से भी लाखों की संख्या में लोग जाकर बस गए। इन्हें भी इंडियन ही कहा जाता है। ये दोनों इंडियन मिलकर उत्तरी अमेरिका में अपनी नई साझी सांस्कृतिक पहचान बना सकते हैं। इसलिए शुरू में यू.एस.ए. ने वहाँ के मूल निवासियों के लिए American Indian और आज के भारत से गए लोगों के लिए ईस्ट इंडियन शब्द प्रचलित करने का प्रयास किया। ईस्ट इंडियन में वे भारतीय भी शामिल थे, जो भारत से कीनिया, सूरीनाम इत्यादि देशों में गए थे और वहाँ से उत्तरी अमेरिका आकर बसे थे। लेकिन बाद में शायद सोचा होगा कि किसी ढंग से अमेरिका के मूल लोगों की पहचान के नाम से किसी भी तरह इंडियन शब्द को हटाया जाना चाहिए। तब वहाँ के मूल इंडियन के लिए native Americans शब्द को प्रचलित करने का प्रयास शुरू हुआ। इसके लिए aboriginals, indigenous कई शब्दों का प्रयोग भी शुरू किया गया।

सबसे पहले इन सभी शब्दों के अर्थ को समझना जरूरी है। aboriginal शब्द का क्या अर्थ है? कैंब्रिज शब्दकोश के अनुसार aboriginal का अर्थ member of a race of people, who were the first people to live in a country, before any colonists arrived है। अन्य शब्दकोशों में aboriginal के अनेक अर्थ हैं, लेकिन मोटे तौर पर सभी का एक ही भाव है, किसी देश या क्षेत्र में उपनिवेशवादी यूरोपीय लोगों के आने से पहले जो लोग रहते थे, जिनकी अपनी अलग भाषा और संस्कृति थी। indigenous शब्द का क्या अर्थ है? शब्दकोश के अनुसार indigenous का अर्थ, people inhabiting or existing in a land from the earliest times or from before the arrival of the colonists है। native Americans का अर्थ तो स्पष्ट ही है। अमेरिका महाद्वीप में यूरोपीय उपनिवेशवादियों के आने से पहले जो लोग रहते थे, वे Native American कहे जाते हैं। इसी प्रकार शब्दकोश में Native का अर्थ an original or indigenous inhabitant है। कुल मिलाकर aboriginals, native Americans, indigenous का अर्थ समान ही है। वैसे इन सभी को प्रगति की दौड में पिछड़े लोग भी कहा जाता है। यानी तथाकथित प्रगति की दौड में कुछ लोग आगे बढ़ गए, जो पीछे छूट गए, उनके लिए ये नए-नए शब्द ईजाद किए गए। इसलिए उत्तरी अमेरिका के परिप्रेक्ष्य में के सभी शब्द समानार्थी ही हैं।

गोरे उपनिवेशवादियों ने सबसे पहले इंडियन के लिए native Americans शब्द को चलाकर देखा। लेकिन इस शब्द के प्रचलन में सबसे बड़ी बाधा यही थी कि क्या उत्तरी अमेरिका में रह रहे उपनिवेशवादी यूरोपीय समुदाय के लोग, जो अब तक हर लिहाज से स्वयं को 'अमेरिकी' कहलाने लगे थे, इन इंडियन को सचमुच अपने बराबर के अमेरिकी मानने लगे थे? सांविधानिक दस्तावेजों में चाहे इसका जिक्र बार-बार किया जाता रहा और अब भी किया जा रहा है, लेकिन धरातल पर इंडियन उत्तरी अमेरिका में दोयम दर्जे के नागरिक बनकर रह गए। यूरोपियों की स्थिति मालिक की हो गई थी। पंजाबी में मुहावरा है, "अग्ग लैण आई, घर दी मालिकन बन बैठी"। इस मुहावरा से अमेरिका में उपनिवेशवादी और इंडियन की स्थिति को बेहतर समझा जा सकता है। इसलिए इंडियन के लिए 'नेटिव अमेरिकी' ज्यादा देर चल नहीं सका। दरअसल यह शब्द 'इंडियन' का अपमान करने जैसा था। उसके बाद aboriginal शब्द का सहारा लिया गया। लेकिन यह शब्द भी ज्यादा देर तक टिक नहीं पाया।

अब तक यूरोप के प्रवासियों ने उत्तरी अमेरिका के विशाल भू-भाग पर कब्जा कर लिया था और इंडियन को उन्हीं के घर में बेगाना घोषित कर दिया था। इस प्रकार उपनिवेशवादी इंडियन की ओर से निश्चिंत होकर बैठ गए थे, क्योंकि अब इंडियन संख्या बल में यूरोपीय लोगों से पिछड़ गए थे और उनके आधुनिक हथियारों का मुकाबला करने में अक्षम ही थे। १४९२ में जब कोलंबस आया था, तब उत्तरी अमेरिका में रहने वाले इंडियन की जनसंख्या पचास लाख से लेकर डेढ़ करोड़ के बीच कही जाती है।

तब अंग्रेजी भाषा के शब्दकोश से एक दूसरा शब्द निकाला गया। यह शब्द indigenous था। इस शब्द का अर्थ 'इंडियन' को सही ढंग से पारिभाषित तो करता है, लेकिन इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि उत्तरी अमेरिका में इंडियन को उन्हीं उपनिवेशवादी लोगों ने गुलाम बनाया, जो अब उनके शासक बन बैठे हैं। स्कूल में ही 'इंडियन' बच्चा सोचना शुरू कर देता है कि साथ बैठे गोरे बच्चे के पूर्वजों ने ही उन्हें गुलाम बनाया था। जब वही बच्चा बड़ा होकर कॉलेज पहुँचता है तो उसे अनुभव होने लगता है कि पूर्वजों के समय से चला आ रहा मामला खत्म नहीं हुआ, लेकिन अभी तक उसके साथ भेदभाव हो रहा है, जिसका वह प्रत्यक्ष अनुभव कर रहा होता है। तब उसका ध्यान कोलंबस की ओर मुड़ता है, जिसने 'इंडियन' को गुलाम बनाने की शुरुआत की थी। परिणाम यह होता है कि जब पूरा उत्तरी अमेरिका 'कोलंबस आगमन दिवस' को राष्ट्र दिवस के तौर पर मनाने में मशगूल होता है तो इंडियन युवक कोलंबस की मूर्तियों को तोड़ना शुरू कर रहे होते हैं। इससे उत्तरी अमेरिका का उपनिवेशवादी समाज स्वयं को असुरक्षित महसूस करने लगता है। इसलिए यह जरूरी हो गया कि किसी तरह से इंडियन शब्द ही हटा दिया जाए और गोरे इस अमानवीय कलंक से भी मुक्त हो जाएँ। साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। लेकिन यह कैसे हो सकता था? इसका एक ही रास्ता था कि indigenous शब्द का साधारणीकरण

कर लिया जाए। इसे अमेरिका के संदर्भ से निकालकर विश्व इतिहास के समग्र अध्ययन में कहीं-न-कहीं एडजस्ट कर लिया जाए। संयुक्त राष्ट्र संघ में Indigenous Populations पर एक वर्किंग ग्रुप का गठन किया गया। ९ अगस्त, १९८२ को इस ग्रुप की एक महत्त्वपूर्ण बैठक बुलाई गई। इस बैठक में सबसे पहले तो इस बात को स्थापित किया गया कि दुनिया के हर देश में Indigenous लोग बसते हैं। उसके बाद चिंता प्रकट की गई कि इनकी हालत बहुत दयनीय है। जब एक बार पता चल गया कि हर देश में Indigenous लोगों की हालत दयनीय है, तो उसको सुधारना भी जरूरी था। अंत में संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा ने यह हालत सुधारने का बोझ अपने ऊपर ले लिया। यह कुछ-कुछ whitemen's burden वाला मामला ही था। साधारण सभा ने यह हालत सुधारने का रास्ता भी निकाल लिया। रास्ता था कि ९ अगस्त को हर देश में 'अंतरराष्ट्रीय Indigenous People दिवस' मनाया जाए। स्वाभाविक ही यह प्रश्न भी उठा होगा कि इस मामले को लेकर ९ अगस्त की ऐतिहासिक महत्ता क्या है? इसका उत्तर तो तैयार ही था कि बारह साल पहले संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्संबंधी वर्किंग ग्रुप की बैठक इसी दिन हुई थी। वैसे केवल रिकॉर्ड के लिए क्रिस्टोफर कोलंबस Bahamas island में १२ अक्तूबर, १४९२ को पहुँचा था, जिसे स्थानीय इंडियन Guanahani कहते थे। कायदे से यदि अमेरिका के उपनिवेशवादियों को सचमुच प्रायश्चित्त करना था तो यह दिन १२ अक्तूबर को मनाया जा सकता था।

इससे अमेरिकी उपनिवेशवादियों को दो लाभ हुए। सबसे पहला तो यह कि किसी देश में Indigenous जनसंख्या का होना कोई अनहोनी बात नहीं है। जिस प्रकार नॉर्थ अमेरिका में Indigenous लोग हैं, उसी प्रकार दुनिया के हर देश में Indigenous लोग हैं। यही कारण है कि दुनिया के सारे देश Indigenous People दिवस मनाते हैं। उपनिवेशवादियों ने प्रचारित किया कि Indigenous People मानवीय विकास यात्रा का एक स्वाभाविक पड़ाव हैं। इसमें अपमानजनक कुछ नहीं है। इंडियन को यह समझाया गया कि विश्व की मुख्य धारा में जुड़ने के लिए उत्तरी अमेरिका के Indian को स्वयं को Indigenous कहना चाहिए। यह गोरे उपनिवेशवादियों का अपने ऊपर लगे कलंक को मिटाने का दूसरा असफल प्रयास था। लेकिन इसमें भी उन्हें सफलता नहीं मिली। कनाडा में रेगिना विश्वविद्यालय में kinesiology और स्वास्थ्य अध्ययन विभाग के प्रो. जेम्स डासचुक ने इंडियन को लेकर एक पुस्तक लिखी थी, जिसका नाम 'Clearing the plains : Disease, politics of starvation, and the loss of aboriginal life' था। २०१९ में पुस्तक का नया संस्करण छपा। इस बार प्रकाशक ने नाम में थोड़ा परिवर्तन कर दिया। उसमें aboriginal के स्थान पर indigenous कर दिया गया। प्रकाशक ने अपना स्पष्टीकरण देते हुए लिखा—"The change to the book's subtitle, replacing the word aboriginal with indigenous, for instance, is to reflect the current preferred terminology where the publisher deemed it possible."

परंतु कुछ समूहों द्वारा नाम बदलने के इन तमाम प्रयासों के बावजूद, जिन लोगों के बारे में हम चर्चा कर रहे हैं, वे स्वयं अपने आप को क्या कहते हैं? यह प्रश्न प्राथमिकता रखता है। इसका उत्तर इन मूल निवासियों पर, कोलंबस के आने से पूर्व और उसके बाद की स्थिति पर १४९१ और १४९३ नाम की दो पुस्तकें लिखने वाले चार्ल्स सी मैन ने दिया है। वे लिखते हैं—"Through out this book, I use the word 'Indian' to refer to the first inhabitants of the Americas. No question about this, Indian is a confusing and historically inappropriate name. Probably the most accurate descriptor for the original inhabitants of the Americas is Americans. Actually using it, though, would be risking worse confusion. In this book I try o refer to people by the names they call themselves. The overwhelming majority of the indigenous peoples whom I have met in both north and South America describe themselves as Indians." लेकिन मूल प्रश्न यही था कि जब इंडियन एशिया के ही निवासी थे तो वे अपनी पहचान का सांस्कृतिक शब्द Indian क्यों त्यागें? यह प्रश्न भी किया जाता है कि जब ये लोग मूल रूप से जंबू द्वीप/एशिया के रहने वाले हैं तो नाम इंडियन ही क्यों? इसका उद्देश्य एक ही है कि यह घटना पंद्रह-बीस हजार साल पुरानी है। उन दिनों सांस्कृतिक लिहाज से यह वृहत्तर भारत ही था।

५. इंडियन के लिए नगरों के बाहर बस्तियाँ : गोरे उपनिवेशवादियों को लगता था कि एशिया/जंबू द्वीप मूल के ये इंडियन गोरे समाज में रहने के लिए 'मिसफिट' हैं। अत: इनको गोरे लोगों की बस्तियों से दूर उजाड़ में शिफ्ट कर दिया जाए। इसलिए इंडियन के रहने के लिए गोरों की बस्तियों से दूर स्थान निश्चित किए गए, जिन्हें 'रिजर्वेशन' का नाम दिया गया। इंडियन को जगह-जगह से लाकर इन रिजर्वेशन में पटक दिया गया। इन रिजर्वेशन में शुरू में तो जीवन की मूल सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं थीं। आज भी उनकी हालत तुलनात्मक दृष्टि से बेहतर नहीं कही जा सकती। इन रिजर्वेशन को यू.एस.ए. के विशाल क्षेत्रफल में छितरा दिया गया है, ताकि ये संगठित होकर अपने लिए अलग देश की माँग न कर सकें। यू.एस.ए. में संघीय सरकार से स्वीकृत इस प्रकार की ३२६ रिजर्वेशन हैं। इसी प्रकार कनाडा में भी रिजर्वेशन बने हुए हैं। यू.एस.ए. सरकार इनको अनुपयोगी मानकर समाज पर भार समझती है। उसका मानना है कि दया भावना से वशीभूत वह इनको मानवीय आधार पर पाल रही है।

६. इंडियन का पुनर्जागरण : लेकिन पिछले कुछ दशकों से इंडियन में जागृति आ रही है। इसे इंडियन का 'पुनर्जागरण काल' कहा जा सकता है। अपनी पहचान को बचाए रखने का प्रयास। ९/११ के बाद यू.एस.ए. का गोरा समाज अपनी अमेरिकी पहचान की तलाश करने में जुट गया, वहीं इंडियन समाज अपनी पुरानी पहचान को बचाने के प्रयास में पहले से ही लगा हुआ था। इंडियन समुदाय के कुछ लोग

भी अब तक विश्वविद्यालयों में पहुँच ही गए हैं। उन्होंने अपनी विशिष्ट संस्कृति, भाषाओं और जीवन-मूल्यों को बचाने की पहल वहीं से शुरू की। इतना ही नहीं, इस इंडियन संस्कृति, भाषाओं और जीवन-मूल्यों को लेकर गोरे समाज ने इंडियन के मन में जो हीन भाव भर दिया था, उससे इंडियन समुदाय ने स्वयं को मुक्त करना शुरू कर दिया। इंडियन समुदाय अपने जीवन-मूल्यों को लेकर गोरे समाज के मुकाबले गौरव भाव अनुभव करने लगा। उसने अपने-अपने समुदायों को और भी गहरी निष्ठा से मनाना शुरू कर दिया। उसने स्वयं को संगठित करना शुरू किया, खासकर विश्वविद्यालयों में पढ़ रहे इंडियन छात्रों। पैनसिल्वानिया विश्वविद्यालय के विधि विभाग के इंडियन छात्र Brooke Parmalee के अनुसार, "the glorification of Christopher Columbus is disturbing, and the destructive effects of the colonial era he ushered in continue to harm Indigenous communities to this very day.It's frustrating to put him as discovering America when he discovered land where Natives were here hundreds of years before he was," she says. "And beyond that, he enslaved and devastated the Native population. Hundreds of thousands of Natives were enslaved and killed due to his discovery process."

दरअसल उत्तरी अमेरिका का इतिहास अभी तक उन शिकारियों ने ही लिखा था, जिन्होंने यहाँ के इंडियन का शिकार किया था। अब जिनका शिकार हुआ था, उन्होंने स्वयं अपना इतिहास लिखना शुरू कर दिया है। अब तक का इतिहास एक पक्षीय इतिहास था। चार्ल्ज सी मैन ने ठीक ही कहा, "many indigenous cultures had no writing, and so much of the information about them comes from the chronicles of the first Europeans who saw them. Colonial accounts are distorted by cultural myopia, to be sure, but they are still eyewitness descriptions of the other ways of life." लेकिन मुख्य प्रश्न तो वही था कि इन उपनिवेशवादियों ने दूसरे पक्ष की जीवन-शैली को किस प्रकार समझा? उसी प्रकार का वर्णन इस तथाकथित इतिहास में मिलता है। इंडियन की जीवन-शैली को समझने की यह दृष्टि थी कि "केवल धनुष-बाण और गदा-कुल्हाड़ी से सज्जित, युद्धकला से कोरे, केवल मुठभेड़ में पारंगत, ये इंडियन अपने से अधिक कुशल, युद्ध संचालन कला में पारंगत, वे सैनिक शिक्षा से दक्ष शस्त्र सज्जित यूरोपीय लोगों के सामने खेत की मूली की तरह थे।" इसमें कोई शक ही नहीं कि यूरोपीय उपनिवेशवादी आधुनिक युद्ध कला के जानकार थे। लेकिन आखिर उनका इन इंडियन से क्या झगड़ा था। ये इस विशाल क्षेत्र में भी अपनी बस्तियाँ बसा सकते थे। लेकिन यूरोपीय उपनिवेशवादियों की जीवन-दृष्टि व जीवन-मूल्य इन इंडियन से अलग थे। इंडियन प्रकृति से तालमेल बनाकर चलने वाले लोग थे। प्रकृति से तारतम्य ही सुखद विकास का मूल है। यूरोपीय जीवन-मूल्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का है। प्रकृति को पराजित करने की लालसा। तभी उसकी दृष्टि में इंडियन की सबसे बड़ी कमजोरी थी कि "इसके अलावा इन लोगों ने कभी भी प्रकृति पर विजय प्राप्त करनी नहीं चाही। वे मुख्यत: शिकार व मछली मारकर ही निर्वाह करते थे।" यूरोपीय उपनिवेशवादी उस समय के इंडियन के बारे में क्या सोचते और समझते थे, शायद इसका अब तक कभी पता नहीं चला, क्योंकि उन्होंने कभी अपना पक्ष नहीं लिखा। लेकिन उसकी धुँधली छाया उस लोक-साहित्य और लोक-कथाओं में कहीं-न-कहीं मिल ही जाती है, जिसे इंडियन पीढ़ी-दर-पीढ़ी दोहराते और सुनाते रहते हैं।

लेकिन अकादमिक क्षेत्रों में एक दूसरी बहस भी तेजी से उभर रही है। कोलंबस के समय उत्तरी अमेरिका में बसे इंडियन क्या सचमुच पिछड़े हुए और बर्बर थे? अभी तक यूरोप और अमेरिका के इतिहास में इसी पर विश्वास करने के लिए कहा जा रहा है। सदियों की खोज और बहस के बाद अमेरिका और वहाँ बसने वाले इंडियन की एक नई तस्वीर सामने आ रही है। चार्ल्स सी मैन के अनुसार इंडियन के बारे में वह नई तस्वीर है कि वे "they were not nomadic, but built up and lived in some of the world's biggest and most opulent cities. For from being dependent on big game hunting, most Indians lived on farms. Others subsisted on fish and shellfish." इसका अर्थ यह हुआ कि इंडियन न तो असभ्य थे और न ही पिछड़े हुए। वे १५०० ई. से पहले ही एक विकसित सभ्यता और संस्कृति के धारक थे, लेकिन गोरे उपनिवेशवादियों ने विश्व भर में उनके बारे में झूठी धारणाएँ फैलाईं।

अब इंडियन के उठ खड़े होने से अमेरिका के इतिहास का वह दूसरा अध्याय खुल रहा है, जो अभी तक इंडियन की कब्रों में दबा पड़ा था, उनके श्मशान घाटों के वृक्षों पर छाया हुआ था। शिकार हुए लोगों में अपने इतिहास को लेकर जो जागृति आई है, उससे अमेरिका में गोरे उपनिवेशवादियों का नायक कोलंबस खतरे में पड़ गया है। इंडियन ने कोलंबस को लेकर जरूर 'कोलंबस मुक्ति अभियान' छेड़ दिया। यू.एस.ए. में कोलंबस के अमेरिका आगमन को राष्ट्रीय दिवस के तौर पर मनाया जाता है। वहाँ इसके लिए सार्वजनिक छुट्टी होती है। लेकिन इंडियन का कहना है कि कोलंबस का अमरीकी महाद्वीप में आना वहाँ के इंडियन के लिए गुलामी का दिन था। इसलिए यह सार्वजनिक छुट्टी रद्द होनी चाहिए और कोलंबस आगमन दिवस को राष्ट्रीय दिवस कहना बंद होना चाहिए। यू.एस.ए. सरकार इसके लिए सहमत नहीं हुई। तब इंडियन ने जगह-जगह पर लगे कोलंबस के बुतों का या तो मुँह काला करना शुरू कर दिया या फिर उनको तोड़ना शुरू कर दिया। कुछ विश्वविद्यालयों में इंडियन अध्ययन विभाग खुलने शुरू हुए।

(लेखक हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय के कुलपति रह चुके हैं।)

एच.एम. १२७, फेज-४
मोहाली-१६००५९ (पंजाब)
दूरभाष : ९४१८१७७७७८

इक्कीसवाँ मिनट

● संतोष श्रीवास्तव

जानी-मानी लेखिका। कहानी, उपन्यास, कविता, स्त्री विमर्श एवं संस्मरण की अब तक बाईस पुस्तकें प्रकाशित। चार अंतरराष्ट्रीय (मॉरीशस, कंबोडिया, ताशकंद, बैंकॉक) तथा २० राष्ट्रीय स्तर के पुरस्कार से पुरस्कृत। संप्रति स्वतंत्र पत्रकारिता।

नीलाभ रस्तोगी अपने बगीचे के लॉन में बैठे थे। उनके पैरों के पास उनका कुत्ता जेरी बैठा था। लॉन से बहुत दूर कंपाउंड के आसपास किले जैसी दीवार में बने बड़े गेट की छोटी सी खिड़की खुली। आगंतुक ने गार्ड के हाथ में अपना विजिटिंग कार्ड देते हुए कहा, "सर से मिलना है।"

गार्ड ने वह कार्ड नीलाभ रस्तोगी को देते हुए कहा, "आपसे कोई मिलना चाहते हैं।"

नीलाभ रस्तोगी ने कार्ड उलट-पुलटकर देखा। नाम सुना हुआ सा लगा—"भेज दो।"

अजनबी आगंतुक को देखकर जेरी भौंकने लगा। उन्होंने उसे चुप कराया, "आइए देवेश कुमारजी, बैठिए।"

देवेश कुमार खूबसूरत नौजवान, सपने देखने की उम्र। आँखों में दृढ़ संकल्प। सुपरस्टार नीलाभ रस्तोगी के सामने रखे बेंत के सोफे पर बैठते हुए बोला, "कैसे हैं सर आप? मैं आपका बहुत बड़ा फैन हूँ, लेकिन आपसे मिलने का अवसर आज मिला है।"

"बतलाइए, किस सिलसिले में आना हुआ। सिर्फ मेल-मुलाकात या कुछ खास?"

अभी पिछले हफ्ते स्वप्न समीर की फिल्म के मुहूर्त पर मैं भी था आपके साथ।"

"जानता हूँ देवांशजी, पहचान लिया था मैंने आपको देखते ही।" देवांश कुमार के चेहरे पर हल्की मुसकराहट थी।

"फिल्मी दुनिया में नए हो?"

"कुछ फिल्मों में छोटे-मोटे रोल भी कर चुका हूँ। लेकिन आप देखिए, टैलेंट से ज्यादा नाम की पहुँच है फिल्मी दुनिया में।"

नीलाभ रस्तोगी ने गौर से देवांश कुमार को देखा। एक चैलेंजिंग व्यक्तित्व लगा उन्हें। साथ ही एक खीझ भी उसकी आँखों में थी। जैसे इन सबका जिम्मेदार नीलाभ रस्तोगी ही है। क्योंकि वह सुपरस्टार है। उसकी कोई फिल्म अभी तक फ्लॉप नहीं हुई, इसीलिए निर्माता-निर्देशक उसके आगे-पीछे घूमते हैं। न्यूकमर्स के टैलेंट पर उनका ध्यान ही नहीं जाता।

"सर, अभी-अभी आपने स्वप्न समीर के बड़े बजट की फिल्म साइन की है। मैं उसमें साइड रोल में हूँ। मगर आपके रहते मेरी तरफ कौन ध्यान देगा। मेरा फ्लॉप होना तो तय है।"

"ओह, तो यह बात है।" देवांश कुमार के आने का उद्देश्य उनकी समझ में आ गया।

"तो आपको मेरे उस फिल्म में रहने पर एतराज है। यानी कि मैं वह फिल्म न लूँ। आपको पता है, आप क्या कह रहे हैं?"

"सर, ६० से अधिक हिट फिल्में देकर क्या फर्क पड़ेगा आपको। लेकिन मुझे पड़ेगा। मेरे कॅरियर को बड़ा ब्रेक मिलेगा। मेरे पिछले ३ साल के संघर्ष को दर्शक समझेंगे, पहचानेंगे। निर्माताओं को मेरे टैलेंट का पता चलेगा, जो आपके साथ रहने से संभव नहीं है।"

नीलाभ रस्तोगी बहुत गहराई से देवांश कुमार के हर शब्द को महसूस कर रहे थे। गुन रहे थे। एक न्यूकमर के लिए बॉलीवुड में मौका मिलना किसी डिजिटल शो को हासिल करने से भी ज्यादा कठिन है।

"सर, मुझे विश्वास है कि यह अवसर आप मुझे दे सकते हैं। प्लीज सर।"

अचानक जेरी फिर भौंका। बड़े गेट की खिड़की खुलने की आवाज फिर हुई। लेकिन इस बार गार्ड के जूतों की ठक-ठक लॉन की ओर नहीं, बल्कि बँगले के बरामदे की ओर मुड़ गई। उसके थोड़े समय बाद ही पत्नी जयंती को उन्होंने अपनी ओर आते देखा। उसके पीछे सेवकराम ट्रे में दवा और पानी लिये आ रहा था।

"आपकी दवा का टाइम हो गया। ज्यादा एग्ज़रशन भी मत लीजिए। अभी-अभी तो लंबी बीमारी से छुटकारा मिला है आपको।" कहते हुए जयंती ने अपने हाथों उन्हें दवा खिलाकर पानी पिलाया।

देवांश कुमार समझ गया। यह उसकी ओर भी संकेत है कि अब नीलाभ रस्तोगी और अधिक नहीं बैठ पाएँगे। उसने इजाजत माँगी—"चलूँ सर, कल मिलता हूँ इसी वक्त यहीं।"

इतने बड़े अभिनेता, सुपरस्टार से मिलने का वक्त यह नौजवान खुद तय कर रहा है! आश्चर्य से जयंती ने उसकी ओर देखते हुए कहा, "आप नीलाभजी के ऑफिस में असिस्टेंट को फोन करके अपॉइंटमेंट ले लेना।"

और नीलाभ रस्तोगी का हाथ पकड़कर उन्हें उठाया—"चलो नील, तुम्हारी वॉक का समय हो गया है।" नीलाभ रस्तोगी को लगा, जयंती देवांश के प्रति ज्यादा ही कठोर हो गई है। वे देवांश के चेहरे पर की बेचारगी साफ देख रहे थे। उनसे रहा नहीं गया। उन्होंने उसे आश्वस्त करते हुए कहा, "डोंट वरी, ईश्वर पर भरोसा रखो। सब अच्छा ही होगा।"

उनके और जयंती के चले जाने के बाद भी देवांश कुमार ५ मिनट तक लॉन पर खड़ा रहा। स्वप्न, महत्त्वाकांक्षा और सफल होने के प्रयास में जैसे जंग सी छिड़ गई। बड़े गेट की ओर जाते कदम मन भर-भर के हो उठे थे। वैसे तो उसे दो वेब सीरीज में काम मिल चुका है। नेटफ्लिक्स की फीचर फिल्म में भी साइड रोल मिला है। डिजिटल मनोरंजन के विकास से भी उसके जैसे न्यूकमर्स को काफी काम मिला है, लेकिन पैसा कमाना ही उसका उद्‌देश्य नहीं है। उसे तो ७० मिमी की भव्यता आकर्षित कर रही है। जिसे कभी किसी चीज से नहीं बदला जा सकता और अब जब अवसर मिला है तो नीलाभ रस्तोगी आल्प्स पर्वत की तरह उसके सामने खड़े हैं, जिसे नेपोलियन बोनापार्ट की तरह ही सूझबूझ से पार किया जा सकता है। वह जानता है, नीलाभ रस्तोगी बहुत बड़े सदमे से गुजरे हैं। कोरोना की दूसरी लहर में वे अपने जवान बेटे ईशान को खो चुके हैं। ईशान की मृत्यु से वे कटे पेड़ की तरह धराशायी हो गए। धीरे-धीरे वह छीजते रहे। बीमारियाँ उन्हें घेरती रहीं। ६ महीने के अंदर वे कई बार अस्पताल में एडमिट हुए। उनकी बीमारी की पल-पल की खबर समाचार पत्रों, टी.वी. चैनलों से मिलती रही। उनके स्वास्थ्य के लिए प्रशंसकों द्वारा हवन, प्रार्थनाएँ की गईं। महामारी का वह दौर ही ऐसा था। कोरोना उन्हें भी हुआ, जयंती और बेटी ईरा को भी हुआ। लेकिन अस्पताल में एडमिट होने की नौबत नहीं आई। लेकिन ईशान! उसकी तो बॉडी तक घर नहीं आई। दाह संस्कार भी करने को नहीं मिला। इतने बड़े फिल्म अभिनेता के जीवन की हर बात जगजाहिर हो जाती है। उनका जीवन अपना कहाँ रहता है। सुनने में यह भी आया कि गिरते स्वास्थ्य और ईशान के सदमे से नीलाभ रस्तोगी लगातार फिल्में ठुकरा रहे हैं। वे भारी कर्ज में डूबते जा रहे हैं। सारी बातें पता हैं देवांश कुमार को, लेकिन इस अहसास में उसकी अपनी कई सोच ने उसे स्वार्थी बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

इवनिंग वॉक से लौटकर नीलाभ रस्तोगी अपने कमरे में सोफे से टिककर बैठ गए। सेवकराम जूस लेकर आया तो उन्होंने इनकार कर दिया। वह आग्रह करता रहा—"दो घूँट पी लीजिए न साहब। तरावट आ जाएगी।"

बरसों पुराने उनके नौकर सेवकराम और उसकी पत्नी घर के सदस्य जैसे हो गए हैं। वह सोचते हैं, उन्हें प्यार करने वाले अनेक हैं, फिर चाहे घर के नौकर हों या उनकी फिल्मों के दर्शक। यही तो उनकी कमाई है। उन्होंने जूस का गिलास हाथ में पकड़ा, होंठों से लगाया। अनिच्छा होते हुए भी पूरा पी गए। सेवकराम ने खुश होते हुए खाली गिलास ट्रे में रखा और वहाँ से चला गया। अब वे अकेले थे। उनकी सोच पर फिर देवांश कुमार हावी हो गया। उन्हें अपने संघर्ष के दिन याद आए। जब फिल्मी दुनिया में प्रवेश पाने के लिए कैसे-कैसे पापड़ बेलने पड़े थे। लोकल ट्रेन की टिकट का किराया न होने से वहीं स्टूडियो में जमीन पर अखबार बिछाकर कितनी ही रातें गुजारी हैं। लेकिन कभी किसी अभिनेता से यह नहीं कहा कि तुम पीछे हटो, क्योंकि मुझे आगे आना है। जमाना कितना बदल गया है। कुछ ही वर्षों में खुद को साबित करने के लिए इनसान किस हद तक जा सकता है। बखूबी समझ आ रहा है उन्हें।

पिछले कई महीनों से कोई शूटिंग नहीं की उन्होंने। साइन की हुई बड़े बजट की तीन फिल्में उनके स्वस्थ होने का इंतजार कर रही हैं और यह चौथी फिल्म निर्माता स्वप्न समीर की है। स्वप्न समीर घर आकर फिल्म की कहानी सुना गया। साइनिंग अमाउंट भी दे गया। जाते-जाते उसने ईश्वर से प्रार्थना भी की हो, जैसे—"सर स्वस्थ रहें ईश्वर से यही दुआ है, आप पर निर्माताओं का भविष्य टिका है।" नीलाभ रस्तोगी ने भरोसा दिलाया, "सब ऊपर वाले के हाथ में है। हमें उस पर भरोसा करना चाहिए।"

वैसे उनकी आदत है, कहानी पढ़ने के बाद अगर उन्हें पसंद आ जाती है तो लिखे हुए को वे फिर से अपनी लिखाई में लिखते हैं। फिर वह संवादों को याद नहीं करते। लिखने से ही उन्हें संवाद याद हो जाते हैं।

स्वप्न समीर ने ज्योतिषी से पूछकर फिल्म का मुहूर्त निकलवा लिया था। फिल्म का निर्माता, लेखक और प्रोड्‌यूसर स्वप्न समीर ही था। दादा साहब फाल्के चित्र नगरी में फिल्म के सीन पर क्लिप दिखाकर मुहूर्त संपन्न हुआ। उसी दौरान उनका देवांश कुमार से परिचय हुआ था। उसकी आँखों में दुनिया को मुट्‌ठी में कर लेने का जज्बा दिखा उन्हें। यह नहीं पता था कि उसे अपने जज्बे पर भरोसा ही नहीं।

रात दबे पाँव नीलाभ रस्तोगी के कमरे में प्रवेश कर चुकी थी। जयंती डिनर तैयार करवा के नील को बुलाने आईं।

"भूख नहीं है जयू, बस दूध लूँगा। जल्दी सोना चाहता हूँ।"

जयंती जानती है, जब से ईशान गया है, नील ऐसे ही हो गए हैं। जीवित तो हैं, पर जिंदगी रूठ गई है उनसे। "थोड़ा तो खाना पड़ेगा नील,

दवाइयाँ स्ट्रांग हैं, फिर एसिडिटी हो जाती है और सुबह तुमने कहा था कुरकुरी भिंडी खाओगे डिनर में। कुक ने बनाई है, चलो।" कहते हुए जयंती जबरदस्ती नील को डिनर के लिए ले गई। कुरकुरी भिंडी के संग सब्जियों वाला दलिया और सूप था।

"तुम भी दलिया लोगी क्या डिनर में? यह तो ठीक नहीं। अपनी तरफ भी ध्यान दो।"

"ध्यान तो तुम अपनी तरफ खींचे रहते हो। जिस बात पर इनसान का कोई वश नहीं, उसे सोचते रहते हो। देखो नील, इस दुनिया में उम्र तो पूरी करनी ही होगी। आओ आज फैसला कर लें। तुम मेरे लिए जियो, मैं तुम्हारे लिए।"

नीलाभ रस्तोगी को जयंती पर प्यार उमड़ आया। प्यार से अधिक इस बात पर गर्व कि जयंती उनकी पत्नी है।

ईरा से २ साल बड़ा था ईशान। ईरा अपने पति के साथ पर्यावरण पर काम कर रही है। पर्यावरण के प्रोजेक्ट की भरमार है दोनों के पास। वे उसी में दिन-रात जुटे रहते हैं। भारत के ग्रामीण इलाकों, जंगलों में उनका ज्यादा समय बीतता है। ईशान फिल्म प्रोडक्शन में जाना चाहता था। अभिनय की ओर न ईरा की रुचि रही, न ईशान की। जबकि जयंती ईशान के भविष्य में नीलाभ रस्तोगी को देख रही थी। इस बात पर दोनों बहस में डूबे रहते। नीलाभ रस्तोगी इस बात से तटस्थ थे। अपने बच्चों पर उन्होंने अपनी पसंद नहीं थोपी। लेकिन जयंती को मनाने में ईशान उनकी मदद चाहता था।

ईरा से २ साल बड़ा था ईशान। ईरा अपने पति के साथ पर्यावरण पर काम कर रही है। पर्यावरण के प्रोजेक्ट की भरमार है दोनों के पास। वे उसी में दिन-रात जुटे रहते हैं। भारत के ग्रामीण इलाकों, जंगलों में उनका ज्यादा समय बीतता है। ईशान फिल्म प्रोडक्शन में जाना चाहता था। अभिनय की ओर न ईरा की रुचि रही, न ईशान की। जबकि जयंती ईशान के भविष्य में नीलाभ रस्तोगी को देख रही थी। इस बात पर दोनों बहस में डूबे रहते। नीलाभ रस्तोगी इस बात से तटस्थ थे। अपने बच्चों पर उन्होंने अपनी पसंद नहीं थोपी। लेकिन जयंती को मनाने में ईशान उनकी मदद चाहता था।

"पापा, मम्मा को मेरी पसंद के काम के लिए मना लीजिए न, अभिनय में कहीं मैं आप से कमतर हुआ तो खिल्ली नहीं उड़ेगी?" ईशान ने कहा तो हल्के मूड में था, पर चौंक गए थे नीलाभ रस्तोगी। क्या उनकी सफलता ईशान के आड़े आ रही है? उन्होंने कई तरीके से कई बार ईशान से पूछा था कि क्या वह अभिनेता बनना चाहता है। अपनी मरजी तो बताए।

"अरे नहीं पापा, वह तो मैंने मजाक में कहा था। किसी की योग्यता कभी किसी के आड़े नहीं आती। आप ही तो कहते हैं।"

लेकिन वे डिस्टर्ब हो गए थे। महीनों लगे थे खुद को समझाने में। आज वैसे ही स्वर देवांश कुमार की बातों में थे। उनकी लंबी गैरमौजूदगी के बावजूद फिल्म निर्माताओं ने उनका इंतजार किया। उनकी हर पल की खबर रखी और जैसे ही वे काम करने लायक हुए स्वप्न समीर ने झटक ली उनकी रजामंदी।

फिल्म साइन करने की सूचना से जयंती रिलैक्स महसूस कर रही थी—"नील, अब हम जल्दी ही कर्ज से मुक्त हो जाएँगे।"

नीलाभ रस्तोगी जल्दी किसी बात पर निर्णय नहीं लेते। वे हर बात का बारीकी से अध्ययन करते हैं, आगे-पीछे सोचते हैं। तब नतीजे पर आते हैं। वैसे जयंती ठीक कह रही है किसी हद तक। लग्जरी जीवन के लग्जरी खर्चे और महँगे इलाज ने उन्हें जो कर्जों से लाद दिया है, वह भी तो तनाव का कारण है। ईरा ने कई बार कर्ज पटा देने का उनके सामने प्रपोजल रखा था—

"पापा, क्या ईशान होता तो आप उससे नहीं लेते रुपया? बेटी हूँ तो क्या, आपने बेटे-बेटी में कभी फर्क नहीं रखा, फिर..."

"नहीं बेटा, मुझे परेशानियों में जीने दो। परेशानियाँ ही तो मुझे जीने का हौसला देती हैं, वरना ईशान को खोकर मैं खुद को भी तो खो चुका हूँ।"

कहने को कह तो दिया उन्होंने, पर फिर पछतावा भी हुआ। ईरा का तिरस्कार करने की या उसकी अहमियत कम आँकने की उनकी मंशा न थी। उन्होंने ईरा को गले लगा लिया—"जानती है ईरा, बेटियाँ वरदान होती हैं। पुण्य कर्मों से मिलती हैं। तुमसे ही तो मेरा और जयंती का वजूद है।"

कुछ नहीं कहा ईरा ने, बस उनकी हथेलियाँ सहलाती रही।

ठंडी हवाएँ बगीचे में लगे हरसिंगार के फूलों को बिखेरती खिड़की पर दस्तक दे रही थीं, जो बारिश का संकेत थी।

जाती हुई ईरा की चाल उदास लगी नीलाभ को। वे स्वयं को कोसने लगे। फिर घंटों नींद नहीं आई थी।

देवांश कुमार का उन्हें फिल्म छोड़ देने के लिए मनाने का प्रयास जारी था। वे जानते है, अगर विश्व अपने समीर से उसकी फिल्म में काम करने में असमर्थता जताते है तो इनकार करने की वजह भी तो बतानी होगी, देवांश कुमार की मंशा उसे बताने से देवांश कुमार का भविष्य खतरे में पड़ जाएगा और स्वप्न समीर भी निराश हो जाएगा। पहली बार उन्होंने उसकी फिल्म साइन की है। आस उसकी भी बँधी है उनसे।

जयंती भी बार-बार देवांश के आने से परेशान हो चुकी थी। पता नहीं, यह क्या चाहता है। कई बार तो विनय (असिस्टेंट) उसे दरवाजे से ही लौटा चुका है कि सर बिजी हैं, फिर भी।"

वे खामोशी से जयंती को सुनते हैं, जानते हैं, जयंती के लिए यह फिल्म कितनी मायने रखती है। कर्ज के बोझ से जयंती भी परेशान है।

वे ठीक से सो नहीं पाते। नींद पूरी नहीं होने से तबीयत बिगड़ने लगी। बदन दर्द, बदहजमी...

एक ओर देवांश कुमार है, दूसरी ओर कर्ज और तीसरी ओर स्वप्न समीर। फिल्म ठुकराने की ब्रेकिंग न्यूज उसे भी ले डूबेगी।

उन्होंने जयंती से पूरी सिचुएशन डिस्कस की, पूरी बात गंभीरता से सुनकर उसने पूछा, "तुमने क्या सोचा है, नील?"

"ऐसी स्थिति में बस एक ही उपाय बचता है कि स्वप्न समीर को समझा दें कि हम पहले डेढ़ वर्षों से प्रतीक्षारत साइनिंग अमाउंट ली हुई फिल्में करेंगे और फिर उसकी अगली फिल्म।"

जयंती जानती है, नील के निर्णय को कोई टाल नहीं सकता। इस वक्त उनसे कर्ज की चर्चा करना भी व्यर्थ ही होगा, क्योंकि वे अतिरिक्त तनाव में आ जाएँगे। तबीयत वैसे ही ऊपर-नीचे होती रहती है उनकी।

उसने जवाब में बस इतना ही कहा, "जैसा ठीक समझो।"

लेकिन जब यह बात स्वप्न समीर ने सुनी तो उसकी आवाज बुझ गई थी—"सर, मुझे इस फिल्म से बहुत आशा थी।"

उसकी आवाज ने उन्हें भीतर तक भेद दिया था। स्वप्न समीर को लेकर उनका मन भर आया। न जाने किस मुहूर्त में उन्होंने यह फिल्म साइन की कि सभी के भविष्य दाँव पर लग गए। अत्यधिक तनाव से ब्लड प्रेशर भी हाई रहने लगा। डॉक्टर ने उन्हें पूर्णतया आराम करने की सलाह दी।

अब तक देवांश कुमार के धैर्य का बाँध टूट चुका था। महाबलेश्वर में शूटिंग की तारीख भी नजदीक आ चुकी थी। उसने विनय से प्रार्थना सी की—"प्लीज, सर से मिलने दीजिए। वरना वह बहुत मुश्किल में पड़ जाएगा।"

जयंती के मना करने के बावजूद नीलाभ रस्तोगी ने देवांश कुमार से मिलने की हामी भर दी।

आज उनकी तबीयत स्थिर थी। सभी परिस्थितियों की उन्होंने गहनता से समीक्षा कर ली थी और नतीजे पर पहुँच गए थे।

वे हॉल में आरामकुरसी पर अपनी चिर-परिचित मुद्रा में बैठे थे। उनकी इसी मुद्रा पर तो मर मिटते हैं प्रशंसक उनके। देवांश कुमार ने देखा, हॉल राजसी ठाठ से सुसज्जित था। पर उसकी भव्यता से उसे कोई सरोकार न था। वह करोड़पति पिता के तीन पुत्रों में से एक था, जिसका सपना फिल्में थीं, बस फिल्में। वह रात-दिन सुपर स्टारों की पंक्ति में खुद को खड़ा देखने की कल्पना करता। सोते-जागते, उठते-बैठते बस यही सपना, यही जुनून, यही नशा कि लोग उसे सुपरस्टार के नाम से जानें। जैसे नीलाभ रस्तोगी को जानते हैं। जैसे निर्माता नीलाभ रस्तोगी के आगे-पीछे घूमते हैं, उसके भी आगे-पीछे घूमें। जैसे फिल्म नीलाभ रस्तोगी की है, सुनते ही बॉक्स ऑफिस की खिड़कियाँ टूट जाती हैं और फिल्म करोड़ों कमा लेती है, उसी तरह देवांश कुमार के साथ भी हो। उसे अपनी योग्यता, अभिनय के हुनर पर यकीन है। लेकिन बाजी तो नीलाभ रस्तोगी के फिल्म में होते ही पलट जाती है।

"आज भी वही आग्रह लेकर आए हो या कुछ और?"

नीलाभ रस्तोगी ने खामोश बैठे देवांश कुमार से पूछा।

"आग्रह वही है, लेकिन कुछ और भी कहना है।"

"कहो न, तुम्हें सुनने के लिए ही आज की शाम रखी है। आज के बाद यह मैटर क्लोज।"

"जी सर, मैं भी यही चाहता हूँ। मैंने डैड से बात की थी। मेरे डैड इस फिल्म की पूरी फीस आपको देने को तैयार हैं। बस शर्त यही है कि आप यह फिल्म छोड़ दें।"

नीलाभ उत्तेजित हो गए—"तो मुझे रिश्वत दे रहे हो? चालीस सुपरहिट फिल्मों में काम करने वाला नीलाभ रस्तोगी तुमसे रिश्वत लेगा फिल्म छोड़ने की।"

देवांश कुमार सकपका गया।

"सर, मेरा यह मतलब नहीं था। मैं तो डैड के ऑफर···"

"शटअप, एक शब्द भी आगे नहीं। अभी नीलाभ रस्तोगी में काम करने की ताकत है। काम का पैसा लेता है नीलाभ रस्तोगी, काम छोड़ने का नहीं।"

तेज आवाज सुनकर जयंती हॉल में आई, लेकिन नीलाभ के तेवर देखकर वापस चली गई। कुछ देर हॉल में सन्नाटा रहा। खिंचाव भरा दिल थाम के बैठे रहने का सन्नाटा। जिसमें नीलाभ आँखें बंद किए थे और देवांश कुमार बिना पलक झपकाए उनके चेहरे को देख रहा था। उसे लग रहा था, बाजी उसके हाथ से गई। उसे अपना भविष्य डूबता नजर आया। उसे डैड के इस प्रस्ताव पर पछतावा हो रहा था। काश, वह रुपयों की बात न रखकर केवल आग्रह करता, विनती करता, बार-बार उनके घर आता, बार-बार विनम्रतापूर्ण व्यवहार से उनके मन में अपनी जगह बनाता, पर अब तो···घबराहट के कारण उसकी हथेलियाँ पसीजने लगीं। खुद पर से विश्वास उठने लगा।

नीलाभ रस्तोगी कुछ बोलते क्यों नहीं! अब तो २० मिनट हो गए उनकी चुप्पी को। मन हुआ पूछे, मन हुआ माफी माँग ले, मन हुआ चले जाने की इजाजत माँग ले।

कठिन मानसिक द्वंद्व से गुजरकर २१वें मिनट नीलाभ रस्तोगी ने आँखें खोलीं। टेबल पर रखा पानी उठाकर पिया, फिर एक-एक शब्द को तौलते हुए बोले—

"वह सामने ईशान की तस्वीर देख रहे हो? वह भी तुम्हारी तरह जिद्दी था। अपनी बात मनवाकर रहता था।"

सहसा देवांश कुमार उठा और उनके चरणों में लोट गया।

"सर, विश्वास नहीं हो रहा, सर। आपने मुझे जीने का हौसला दिया।" उसकी आँखें छलकी पड़ रही थीं।

"उठो देवांश, इतना याद रखो, सफलता किसी से माँगी नहीं जाती। राह खुद बनानी पड़ती है।" वे आराम कुरसी से उठकर खड़े हो गए। अपने कमरे की ओर जाते हुए वे मुड़े—"और हाँ, यह भी कि योग्यता बिकाऊ नहीं होती। यह फिल्म मैं तुम्हारी नजर करता हूँ। खुश रहो।"

सा अ

५०५ सुरेंद्र रेजिडेंसी,
दाना पानी रेस्टोरेंट के सामने, बावड़ियाँ कलाँ,
भोपाल-४६२०३९ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९७६९०२३१८८

हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी, विश्वभारती

● अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी

खड़ी बोली हिंदी के उत्कर्ष में बीसवीं सदी का महत्त्वपूर्ण योगदान है। सदी का आरंभ 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन के साथ हुआ तथा इस प्रकाशन के साथ हिंदी ने नया कलेवर धारण किया। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने एक युग का प्रवर्तन किया। कुछ आगे चलकर हिंदी भाषा तथा साहित्य का अभिवर्धन एक उल्लास विश्वभारती, शांतिनिकेतन में हुआ। बंगप्रदेश, जिसे डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र ने हिंदी का तीर्थराज कहा है, हिंदी के प्रति सुमुख रहा। गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर की कर्मभूमि विश्वभारती में हिंदी-भवन की स्थापना के साथ ही यह उल्लास फूटा। विश्वभारती का हिंदी-भवन हजारीप्रसाद द्विवेदी का तपस्थल रहा। यहीं बैठकर उन्होंने हिंदी भाषा-साहित्य पर गवेषणाएँ कीं तथा सर्जनात्मक साहित्य सरजा। हजारीप्रसाद द्विवेदी की स्थापनाओं ने परंपरा में दीक्षित समाज को चौंकाया ही नहीं, अपना युगांतरकारी प्रभाव भी डाला।

(१९ अगस्त, १९०७-१९ मई, १९७९)

हम जानते हैं कि हजारीप्रसाद द्विवेदी काशी में ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन कर रहे थे तथा आर्थिक कठिनाइयों से जूझ रहे थे। अकस्मात् उनका शांतिनिकेत स्थित विश्वभारती आना हुआ। यहाँ स्वाध्याय, सत्संग तथा नवोन्मेष के जो अवसर उपलब्ध थे, उन्होंने उसका भरपूर उपयोग किया। विश्वभारती की सांस्कृतिक चेतना से हिंदी प्रदेश की सांस्कृतिक चेतना को प्रभावित करने में हजारीप्रसाद द्विवेदी के अवदान का समुचित मूल्यांकन अभी किया जाना बाकी है। इस निबंध में यह दिखलाने की चेष्टा की जा रही है कि विश्वभारती के परिवेश ने हजारीप्रसादजी को जो दृष्टि दी, उससे उन्होंने हिंदी भाषा, साहित्य तथा राष्ट्रीय संस्कृति को समझने का प्रयास किया। सबकुछ अविशुद्ध है, शुद्ध है तो बस मानुषी जिजीविषा—यह बोध तब तक हिंदी परिवेश के लिए विजातीय था। हजारीप्रसाद के आने के बाद यह विषय विमर्श के केंद्र में आ गया। हिंदी क्यों पढ़ी जाए? हिंदी की भूमिका क्या हो? हिंदी साहित्य का मूल्यांकन किस प्रकार किया जाए? उसमें कितना कुछ उदात्त है? इन प्रश्नों पर उन्होंने विचार किया तथा कुछ चौंकाने वाले समाधान दिए। ये समाधान उनके संपादन में निकलने वाली 'विश्वभारती' पत्रिका, उनके व्याख्यानों (यथा साहित्य का मर्म) कालिदास की लालित्य योजना, कबीर आदि में लिपिबद्ध है। हिंदी की हित-चिंता में लगे लोगों को ये कृतियाँ मार्ग दिखाती हैं। हम कह सकते हैं कि आज हिंदी की जो प्रभाविता दिख रही है और उसमें यदि हजारीप्रसाद द्विवेदी का कोई योगदान है तो उस योगदान में विश्वभारती का महत् योगदान है।

हजारीप्रसाद द्विवेदी आर्ट्स कॉलेज (सेंट्रल हिंदी कॉलेज) काशी के छात्र थे। संस्कृत के महानीय प्राध्यापक आचार्य बलदेव उपाध्याय वहाँ प्राध्यापक थे। अपने कृती छात्र हजारीप्रसाद द्विवेदी को याद करते हुए उन्होंने लिखा है—'दर्शन विभाग के तत्कालीन अध्यक्ष प्रो. फणीभूषण अधिकारी गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर के स्नेही मित्र थे। प्रो. अधिकारी की पुत्री आशा अधिकारी शिक्षा विभाग, विश्वभारती की प्राचार्य थीं। प्रो. अधिकारी अकसर शांतिनिकेतन चले जाया करते थे। एकबार शांतिनिकेतन से लौटकर उन्होंने संस्कृत के कुछ अध्यापकों को अपने पास बुलाया। फणीबाबू ने कहा कि गुरुदेव अभी शांतिनिकेतन के छात्रों की संस्कृत भाषा की शिक्षा के लिए काशी का संस्कृत विद्वान् नियुक्त करना चाहते हैं।...अपने किसी सुयोग्य शिष्य को इस धर्म के लिए आप लोग चुनकर बताएँ।' फणीबाबू ने स्पष्ट कर दिया था कि वहाँ वेतन कम मिलेगा, आर्थिक लाभ नहीं होगा, परंतु बड़े विद्वानों का संपर्क प्राप्त होगा। स्वकीय अध्ययन के लिए भी विशेष अवसर मिलेगा। आचार्य बलदेव उपाध्याय आगे लिखते हैं, 'हजारीप्रसादजी के समान कोई छात्र हम लोगों की दृष्टि में नहीं आया।' उनसे कहा गया। उन्होंने यह प्रस्ताव स्वीकार किया और इस प्रकार वे हिंदी-संस्कृत के अध्यापक के रूप में शांतिनिकेतन गए।

७ नवंबर, १९३० को हजारीप्रसाद द्विवेदी शांतिनिकेतन पहुँचे तथा अगले दिन से ही उन्होंने अध्यापन शुरू कर दिया। डॉ. नामवर सिंह से पता चलता है कि आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी शांतिनिकेतन की सेवा में आने के दिन को अपने द्विजत्व-प्राप्ति का दिन कहते थे तथा इस दिन को वे बड़ी निष्ठा से मनाते थे। शांतिनिकेतन पहुँचकर हजारीप्रसादजी

सुपरिचित लेखक। हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नलों में निबंध, शोध-आलेख प्रकाशित। संप्रति मुख्य प्रबंधक (राजभाषा), यूको बैंक।

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर के दर्शनार्थ गए। पहली मुलाकात में गुरुदेव ने उन्हें 'पंडितजी' कहकर संबोधित किया। इसके बाद द्विवेदीजी सबके लिए पंडितजी हो गए। नामवरजी भी उन्हें पंडितजी ही कहते थे। काशी से शांतिनिकेतन आए ये पंडित आगे चलकर विश्वभारती में हिंदी विभाग (हिंदी-भवन) के निदेशक बने। विश्वभारती की अकादमिक उपलब्धियों से अनुप्राणित होकर उन्होंने सर्जनात्मक साहित्य में अनूठा योगदान देकर तथा हिंदी आलोचना के क्षेत्र में मौलिक कार्य करके हिंदी भाषा तथा साहित्य को आनेवाली सदी के एक हुनऔटियों के लिए तैयार किया।

द्विवेदीजी बीस वर्ष शांतिनिकेतन में रहे। ये बीस वर्ष उनके जीवन के निर्माण के वर्ष थे। इस काल में पंडितजी का स्फटिक सा दृढ़ पांडित्य तथा कुसुम-सा कोमल भाव-जगत् निर्मित हुआ। इस निर्मिति से समृद्ध हुआ हिंदी भाषा साहित्य का भंडार। विश्वभारती में रहकर द्विवेदीजी को गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर, आचार्य क्षितिमोहन सेन, विधुशेखर भट्टाचार्य, दीनबंधु एंड्रूज, उपेंद्रनाथजी आदि का सान्निध्य प्राप्त हुआ। संत साहित्य की आलोचनात्मक परीक्षा करने तथा कबीर के अवदान को रेखांकित करने के उल्लेखनीय कार्य के लिए यदि हम आचार्य द्विवेदी को श्रेय देते हैं तो हमें याद रखना चाहिए कि वे इस दिशा में प्रेरित करने तथा मार्गदर्शन देने के लिए गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर, आचार्य क्षितिमोहन सेन तथा उपेंद्रनाथजी के कृतज्ञ थे।

> **शांतिनिकेतन ने आचार्य द्विवेदी को एक अलग तेवर का हिंदी प्राध्यापक बना दिया। काशी की हिंदी अध्यापक मंडली इस तेवर को पसंद नहीं करती थी। गुरुदेव की प्रेरणा से विश्वभारती में भारतीय संस्कृति के सर्वसमावेशी चिंतन की सरणी को आगे बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा था। गुरुदेव की विश्वभारती में सिल्वां लेवी, मारिस विंटरनिट्ज, सी.एफ. एंड्रयूज, डब्ल्यू. डब्ल्यू. पियर्सन, स्टेला क्रामरिस, स्टेन कोनो, सदृश यूरोपीय विद्वानों तथा भारत के सुदूर प्रांतों, मिथिला, काशी, पंजाब, गुजरात से भारतीय चिंतकों का समागम हुआ था।**

'हिंदी साहित्य की भूमिका' नामक अपनी पुस्तक द्विवेदीजी ने आचार्य क्षिततिमोहन सेन को समर्पित की है। आचार्य द्विवेदी ने शांतिनिकेतन में रहते हुए 'सूर साहित्य', 'हिंदी साहित्य की भूमिका', 'कबीर', 'बाणभट्ट की आत्मकथा' तथा 'अशोक के फूल' की रचना की। यहीं से इन्होंने विश्वभारती पत्रिका का संपादन किया और इसके लिए उन्होंने रवींद्रनाथ के साहित्य का अनुवाद किया। शांतिनिकेतन में रहते हुए द्विवेदीजी ने जो काम किया, उसके लिए गुरुदेव की प्रेरणा, समानधर्मा अध्यापकों का अहैतुक सहयोग तथा 'विशाल भारत' के तत्कालीन संपादक पं. बनारसीदास चतुर्वेदी का औदार्य प्राप्त हुआ। विश्वभारती के वातावरण ने उनमें जो ऊर्जा भरी, उसका प्रकटीकरण उनके वहाँ से चले जाने के बाद भी उनकी रचनाओं में हुआ है। शांतिनिकेतन से उनके जाने के प्राय: ७० वर्षों के बाद भी वहाँ के वातावरण में उनके होने को हम अनुभव कर रहे हैं।

संत साहित्य पर आचार्य द्विवेदी की पुस्तकें, यथा 'सूरसाहित्य', 'कबीर', 'नाथ संप्रदाय', 'सिक्ख गुरुओं का पुण्य स्मरण' संबंधित विषय पर तब तक हुए अध्ययन तथा शोध को एक नई दिशा देती हैं। डॉ. विवेकी राय ललित-निबंधों के क्षेत्र में आचार्य द्विवेदी को मानदंड मानते हैं। आचार्य द्विवेदी के ललित-निबंधों के एक संग्रह की भूमिका में नामवरजी ने माना है कि द्विवेदीजी के उपन्यासों के कुछ स्थल भी स्वतंत्र निबंध के तेवर के हैं। आलोचकों ने उनके निबंधों में कहानीपन की उपस्थिति, निर्बंध उड़ान की अदा, परिवेश की सहज उपस्थिति तथा विनोद के स्निग्ध प्रवाह को लालित्य के तत्त्व के रूप में रेखांकित किया है। आचार्य द्विवेदी का निबंध 'अशोक के फूल हिंदी' ललित-निबंध के चरमोत्कर्ष का सूचक है। ऐसे ही उनके उपन्यासों की छटा भी अनोखी है। मिथक तथा शास्त्रों से सामग्री जुटाकर उपन्यास का प्रसाद खड़ा करने में गजब का गल्पविधान रचा है, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने। शास्त्र-चर्चा में सकारात्मक हस्तक्षेप करने तथा अपने गुरु का खुलकर विरोध करने में हिचक के साथ वे व्योमकेश शास्त्री बन जाते हैं। कल्पना, गल्प तथा शास्त्रसम्मत तथ्यों का आधार लेकर आचार्य द्विवेदी ने जो संसार रचा, उसकी बनावट पर पीढ़ियाँ न्योछावर होती रही हैं।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निर्माण में विश्वभारती तथा बंगाल की जाग्रत् मनीषा के योगदान का मूल्यांकन प्रसंग-प्रसंग में समय-समय पर होता रहा है। यह माना जाता है कि गुरुदेव के व्यक्तित्व से द्विवेदीजी बहुत प्रभावित थे। द्विवेदीजी की कबीर-जिज्ञासा गुरुदेव का ही प्रसाद है। भारतीय संस्कृति की बनावट को समझने में रवींद्रनाथ ठाकुर का निबंध 'भारतवर्षे इतिहासेर धारा' एक प्रस्थान है। यह निबंध बँगला पत्रिका 'प्रवासी' में वर्ष १९१२ में प्रकाशित हुआ। इसमें गुरुदेव ने स्थापित किया है कि भारतीय इतिहास में सिर्फ आर्यों का ही नहीं अनार्य, द्रविड़ तथा अन्य जातियों का भी योगदान है। उनकी स्थापना के अनुसार भारत की इतिहास की धारा इस सभी के योगदान से पुष्ट हुई है। इस स्थापना को ध्यान में रखकर जब हम आचार्य द्विवेदी द्वारा विवेचित गंधर्वों, यक्षों और नागों आदि आर्येतर जातियों के कला-अवदानों के विषय में पढ़ते हैं तो पता चलता है कि उनके चिंतन को नया आयाम देने में गुरुदेव की प्रतिभा का प्रकाश कितना महत्त्वपूर्ण था।

शांतिनिकेतन ने आचार्य द्विवेदी को एक अलग तेवर का हिंदी प्राध्यापक बना दिया। काशी की हिंदी अध्यापक मंडली इस तेवर को

पसंद नहीं करती थी। गुरुदेव की प्रेरणा से विश्वभारती में भारतीय संस्कृति के सर्वसमावेशी चिंतन की सरणी को आगे बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा था। गुरुदेव की विश्वभारती में सिल्वां लेवी, मारिस विंटरनिट्ज, सी.एफ. एंड्रयूज, डब्ल्यू.डब्ल्यू. पियर्सन, स्टेला क्रामरिस, स्टेन कोनो, सदृश यूरोपीय विद्वानों तथा भारत के सुदूर प्रांतों, मिथिला, काशी, पंजाब, गुजरात से भारतीय चिंतकों का समागम हुआ था। इस समागम ने यत्र विश्वं भवत्येकनीडम् का आदर्श चरितार्थ किया था। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जब विश्वभारती में थे, तब वहाँ भारत की प्रखर ज्ञानधारा के साथ मुखर कलाधारा एवं पुष्ट कर्मधारा की त्रिवेणी लहरा रही थी। इस लहर में स्नात आचार्य द्विवेदी का आर्ष रूप निखर आया। आचार्य द्विवेदी यदि मनुष्य की जय यात्रा का उद्घोष कर सके तथा न लोक से न शास्त्र से डरो—ऐसा कह सके तो यह उनके शांतिनिकेतनीय परिवेश का ही प्रसाद था। शांतिनिकेतन ने उन्हें शोध की साधना तथा लालित्य की ऊष्मा से अभिमंत्रित किया। शांतिनिकेतन में जो पाथेय द्विवेदीजी को मिला उसे लेकर वे आगे बढ़े और हिंदी साहित्य, भाषा चिंतन, सौंदर्य शास्त्र (जिसे वे लालित्य कहते थे) के क्षेत्र में आजीवन सक्रिय रहे। हिंदी को उनके अवदान को रेखांकित करते हुए डॉ. नामवर सिंह की पुस्तक दूसरी परंपरा की खोज में इस विषय में द्रष्टव्य है।

संपादक के रूप में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की संभावना–भूमि भी विश्वभारती ही है। अनेक ग्रंथों के संपादन के साथ-साथ 'विश्वभारती' पत्रिका का संपादन कार्य अकेले ही हिंदी जगत् को चकित कर देने वाला कार्य है। इन सबमें विश्वभारती पत्रिका आरंभ करना तथा उसके संपादक का दायित्व निभाना अलग ही किस्म का चुनौतीपूर्ण कार्य था। पत्रिका १९४२ में आई। गुरुदेव तबतक दिवंगत हो चुके थे, हिंदी-भवन बन चुका था। विश्वभारती का हिंदी-भवन हिंदी-भारती का मंदिर था।

विश्वभारती का हिंदी-भवन गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर की हिंदी-निष्ठा का स्मारक तो है ही आचार्य द्विवेदी के भगीरथ प्रयत्न सुफल भी है। शांतिनिकेतन में वर्ष १९३७ में चीना-भवन (चीन भवन) बना और १६ जनवरी, १९३८ को हिंदी-भवन का शिलान्यास हुआ। इस अवसर पर गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर उपस्थित थे। आचार्य क्षितिमोहन सेन द्वारा प्रस्तुत स्वागत संबोधन के बाद गुरुदेव ने वैदिक मंत्रों का पाठ किया। अपने संबोधन में गुरुदेव ने कहा, 'हिंदी भाषा के प्रति मेरा आंतरिक अनुराग है। इसके माध्यम से लक्ष-लक्ष मनुष्य अपने मनोभाव प्रकट करते हैं। शांतिनिकेतन में हिंदी-भवन की स्थापना में जिन्होंने सहायता की है, उनके प्रति मैं धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ।' अपनी अस्वस्थता की वजह से वे इतना कहकर अपने भवन को लौट गए तथा कार्यक्रम की अध्यक्षता दीनबंधु एंड्रूज ने की। अपने वक्तव्य में दीनबंधु ने कहा कि हिंदी-भवन केवल हिंदी भाषा की शिक्षा देने के लिए ही नहीं प्रतिष्ठित होगा, यहाँ अतीत की हिंदी भाषा की गवेषणा का कार्य होगा तथा भविष्य की हिंदी भाषा बनेगी। यह समाचार 'आनंदबाजार' पत्रिका में १९ जनवरी, १९३८ को प्रकाशित हुआ था।

विश्वभारती में हिंदी-भवन की स्थापना की प्रेरणा गुरुदेव की थी तथा प्रयास आचार्य द्विवेदी तथा पं. बनारसीदास चतुर्वेदी का था। इन महानुभावों ने तत्कालीन कलकत्ता के श्रीमंतों से भवन के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त की। इनमें सेठ सीतारामजी सेकसरिया, सेठ भागीरथ कानोडिया तथा राय बहादुर बिसेसरलाल मोतीलाल हलवासिया ट्रस्ट अग्रणी रहे। हिंदी-भवन बनकर तैयार हो गया, आचार्य हजारीप्रसादजी उसमें बैठकर काम भी करने लगे। पर विभाग के लिए यथोचित अध्यापकों की कमी बनी रही। इस कमी को हजारीप्रसादजी ने रात-दिन श्रम करके दूर करने का प्रयास किया।

हिंदी-भवन के रूपायन के बाद गुरुदेव ने द्विवेदीजी को काम में लगने की प्रेरणा दी। इस संबंध में द्विवेदीजी ने पं. बनारसीदास चतुर्वेदी को दिनांक १०/०७/१९३६ के पत्र में लिखा, 'गुरुदेव ने परसों इस विषय पर बहुत सी बातें कीं। उन्होंने फिलहाल मुझे अपनी पुस्तक बँगला भाषा-परिचय के आधार पर हिंदी भाषा-परिचय नाम से पुस्तक लिखने को कहा है। वे चाहते हैं कि पुस्तक में हिंदी की भिन्न-भिन्न बोलियों से ऐसे शक्तिशाली प्रयोगों को स्टैंडर्ड भाषा में परिचित कराया जाए, जो उसमें प्राप्त नहीं हैं। यह कार्य है तो बहुत महत्त्वपूर्ण, पर मुझे अपनी शक्ति के संबंध में संदेह है। मैंने अध्ययन शुरू कर दिया है। देखें, सफलता कहाँ तक मिलती है।' इन वाक्यों से हमें हिंदी के प्रति गुरुदेव की चिंता तथा द्विवेदीजी के समर्पण का अंदाजा लग सकता है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी-भवन को सक्रिय करने के लिए कुछ अध्यापक तथा कुछ शोधार्थियों की आवश्यकता का अनुभव कर रहे थे। हलवासिया ट्रस्ट फिर आगे आया। पं. बनारसीदास चतुर्वेदी को १०/०७/१९४४ के पत्र में द्विवेदीजी लिखते हैं, 'श्री कानोडियाजी और श्री पुरुषोत्तम हलवासियाजी की कृपा से इस वर्ष से कुछ ठोस कार्य करने की व्यवस्था हो रही है। दो विद्वान् स्कॉलरों और एक अध्यक्ष का खर्च देना हलवासिया ट्रस्ट ने स्वीकार लिया है।' धीरे-धीरे काम आगे बढ़ा। द्विवेदीजी ने हिंदी-भवन के तत्त्वावधान में ऐसे क्षेत्र चुने, जिसमें अन्य संस्थानों की अपेक्षा शांतिनिकेतन में काम करना सुकर हो। इसके लिए पुरानी मध्यकालीन बँगला की सगोत्री पुरानी मध्यकालीन हिंदी के क्षेत्र में काम करने का निश्चय किया गया। विश्वभारती में बँगला पक्ष को उपस्थित कर सकने वाले आचार्य और ग्रंथ उपलब्ध थे। यह प्रयत्न फलप्रसू हुआ। द्विवेदीजी की पुस्तक हिंदी साहित्य की भूमिका इसी का एक फल है। नाथ संप्रदाय तथा आदिकालीन हिंदी साहित्य भी इसी प्रयत्न के पके फल हैं।

संपादक के रूप में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की संभावना—भूमि भी विश्वभारती ही है। अनेक ग्रंथों के संपादन के साथ-साथ 'विश्वभारती' पत्रिका का संपादन कार्य अकेले ही हिंदी जगत् को चकित कर देने वाला कार्य है। इन सबमें विश्वभारती पत्रिका आरंभ करना तथा उसके संपादक

का दायित्व निभाना अलग ही किस्म का चुनौतीपूर्ण कार्य था। पत्रिका १९४२ में आई। गुरुदेव तबतक दिवंगत हो चुके थे, हिंदी-भवन बन चुका था। विश्वभारती का हिंदी-भवन हिंदी-भारती का मंदिर था। विश्वभारती पत्रिका की घोषणा की थी, विश्वभारती पत्रिका, विश्वभारती, शांतिनिकेतन के तत्त्वावधान में प्रकाशित होती है। इसलिए इसके उद्देश्य वही हैं, जो विश्वभारती के हैं। किंतु इसका कार्यक्षेत्र वहीं तक सीमित नहीं। संपादक मंडल उन सभी विद्वानों और कलाकारों का सहयोग आमंत्रित करता है, जिनकी रचनाएँ एवं कलाकृतियाँ जाति-धर्म-निर्विशेष समस्त मानव जाति के कल्याण-बुद्धि से प्रेरित हैं और समूची मानवीय संस्कृति को समृद्ध करती हैं। इसलिए किसी विशेष मत या वाद के प्रति मंडल का पक्षपात नहीं है। 'विश्वभारती' पत्रिका ने हिंदी क्षेत्र की रचनाओं के साथ-साथ रवींद्र-साहित्य को हिंदी में प्रकाशित किया। विश्वभारती ने हिंदी प्रदेश को रवींद्र साहित्य तथा चिंतन से लाभान्वित किया। पत्रिका का संपादन द्विवेदीजी के लिए एक अवसर था। इस अवसर का उन्होंने सजगता से उपयोग किया।

शांतिनिकेतन के पूर्व आचार्य मोहनलाल बाजपेयी ने एक संस्मरण में लिखा है, 'शांतिनिकेतन को इस बात का गर्व है कि पंडितजी की विशिष्ट रचनाओं का प्रणयन अथवा काम-से-काम बीजारोपण वहीं हुआ था। दरअसल शांतिनिकेतन के साथ उनका जो संबंध था, वह नाड़ी का संबंध था। दूर जाने पर भी वह कहीं से छिन्न नहीं हुआ। कम-से-कम मैं ऐसा ही मानता हूँ।' सत्य है कि विश्वभारती ने आचार्य हजारीप्रसाद के रूप में हिंदी को एक ऐसा अवतार दिया, जिसके पराक्रम से हिंदी-भारती का ही नहीं, भारत-भारती का सिर गर्व से उन्नत हुआ। अनेक क्षेत्रों में चिंतन पर पड़ी काई को धो-पोंछकर हजारीप्रसादजी ने सत्य का संधान किया। अपने शोध से उन्होंने हिंदी भाषा-साहित्य को गौरव मंडित किया तथा उस पर लगे आरोपों-आक्षेपों का निराकरण किया। संस्कृत-साहित्य के आकार ग्रंथों, खासकर कालिदास के साहित्य का अन्वेषण करके दिखलाया कि भारत में भी सौंदर्य-शास्त्र की परंपरा रही है। सौंदर्य चिंतन के क्षेत्र में विमर्श को आगे बढ़ाने के लिए उन्होंने देशज पारिभाषिक शब्दावली की खोज की। यहीं रहकर उन्होंने हिंदी उपन्यासों के एक अभिनव शिल्प गढ़ा। समासत: वे भारतीय आर्ष मनीषा के नवावतार के रूप में समस्त हिंदीजगत् में प्रतिष्ठित हुए। आधुनिक हिंदी साहित्य तथा आलोचना को प्रौढ़ बनाने में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की साधना योगदान को सभी सादर स्वीकार करते हैं। हमें तब नतशिर हो जाना पड़ता है, जब हम उन्हें इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर तथा उनके पार्षदों के अकुंठ प्रोत्साहन के विषय में जानते हैं। हम आज यह निश्चयपूर्वक कह नहीं सकते कि द्विवेदीजी यदि विश्वभारती न आते तो हिंदी को क्या देते। पर हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि यह विश्वभारती ही है, जिसने आचार्य हजारीप्रसाद को एक परिवेश दिया, जिसमें अपने विनोदी स्वभाव तथा अक्षत स्वाभिमान के साथ अपूर्व विद्यानिष्ठा लेकर द्विवेदीजी ने आधुनिक हिंदी साहित्य, आलोचना तथा सौंदर्यशास्त्रीय चिंतन की उत्तुंग प्राचीर पर कालजयी इबारत लिख दी।

सा अ

मुख्य प्रबंधक, राजभाषा
यूको बैंक, प्रधान कार्यालय
१०, बीटीएम सरणी, कोलकाता-७००००१
दूरभाष : ६२८९३५२७३४

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

रेमसिंग हँस रहा है

● तरुण दांगोड़े

सुपरिचित लेखक। आदिवासी लोक-साहित्य के अध्येता। हिंदी के विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नलों में निबंध, शोध-पत्र एवं शोध-आलेख प्रकाशित। संप्रति माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खंडवा में अध्यापन कार्य।

दुबली-पतली छरहरी काया और काला रंग होंठों पर निश्चल गुलाबी मुसकान लिए रेमसिंग हँस रहा था। उसकी हँसी जंगल में छिपे झरने सी एकांत में इतरा-इतराकर मस्ती के गीत गा रही थी। उसकी हँसी दूधिया भुट्टे के झबरीले बालों से झलक रही थी। उसकी हँसी पके करेले के लाल दानों सी दहक रही थी। उसकी वह हँसी कपास के फूल सी फूट पड़ी थी। उसकी हँसी में वह सब रस घुला था, जो हाय-तोबा मचाते, दिन-रात भागते-दौड़ते नाम, पद, पैसे के लिए हाय-हाय करते लोगों के पास भी नहीं होता। उसकी हँसी चूल्हे की राख में सोते कुत्ते के सुख-सी गरमाहट दे रही थी। उसकी हँसी संतुष्टि और संतोष के सारे पैमानों को पूरा कर रही थी। बरबस ही उसकी उस हँसी पर मेरी आँखें गड़ गई। अभी नए किराए के घर में हमारी शिफ्टिंग चल रही थी, गाँव से भाई हमारे बरतन-भांडे ले आया। हमारी पिकअप को देख बिन बुलाए ही वह हमारी मदद के लिए आ खड़ा हो गया। बकरी के बच्चे-सा कुलाँचें मार-मार वह भारी-से-भारी सामान उठा-उठाकर ले जाता।

पड़ोस के प्लॉट पर भवन-निर्माण कार्य चल रहा था। रेत, ईंट, गिट्टी, बल्लियाँ, तरापे, सीमेंट, बालू, रेत सभी मिल-जुलकर उस भवन को आकार दे रहे थे। जड़ वस्तुएँ भी मेल-मिलाप, एकता और संघटन की शक्ति को जानती हैं। वह हिंदू, मुसलिम, सिख, ईसाई और अलग-अलग धर्मों-संप्रदायों जैसी नहीं हैं। अगर इन जड़ चीजों में भी मनुष्यों के धर्म-संप्रदाय वाले भाव आने लगे तो हो चुका निर्माण। चाहे भवन निर्माण हो या राष्ट्र निर्माण, नींव अच्छी होनी चाहिए। नींव तो आदमजात की भी अच्छी होनी चाहिए, नहीं तो जीवन में जरा सा उतार-चढ़ाव क्या आया, साहब मरने के लिए कोना और रस्सी ही ढूँढ़ते हैं। जिस भवन का निर्माण रहने के लिए कराया था, वहाँ साहब बकरे जैसी आँखें फाड़, जुबान निकाल पंखे पर लटके मिलते हैं। आज हमारे देश में ही नहीं, विश्व में आत्महत्याएँ करने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। समाचार पत्रों और न्यूज चैनलों में तीन-चार बातें ही चलती रहती हैं। फलाँ व्यक्ति ने आत्महत्या कर ली, फलाँ बाबा ने दिए प्रवचन, सिखाई जीवन-जीने की कला। फला नेता ने राष्ट्र-निर्माण और देशहित में कार्य किया।

निम्न वर्ग का दिहाड़ी-मजदूरी वाला व्यक्ति तो केवल रोटी और गरीबी रेखा का राशन कार्ड पाने के लिए संघर्ष कर रहा है। लेकिन उसकी गरीबी तो रेखा जैसी आज भी जवान है। मध्यवर्ग रोटी के लिए भी संघर्ष कर रहा है और दिखावटी लाइफ-स्टाइल के लिए भी संघर्षरत है। बचा उच्च वर्ग, उसे भारत से क्या मतलब, वह तो इंडिया में रहता है। उस इंडिया में गरीबी नहीं है। गरीबी तो भारत में है। इंडिया में रहने वालों को सरकारी-दरबारी लोग हाथ जोड़ सलाम करते हैं। मंत्री-संतरी उसके छोरा-छोरी की ब्याह-शादी में ठुमका लगाते हैं। रेमसिंग हँसे या रोए, उससे इन इंडिया वालों को क्या लेना-देना? लेकिन एक बात तो तय है, रेमसिंग जैसी हँसी तो इन इंडिया वालों के पास भी नहीं है।

भवन-निर्माण की सामग्री से चार बल्लियाँ, तरापे, नारियल-रस्सी, तार, टिन की चादरें लेकर दस-बाय-दस की एक अस्थायी रावटी (झोंपड़ी) तैयार कर ली थी। आधे में सीमेंट-सरिया और आधे में चौकीदार के रूप में रेमसिंग ने अपनी गृहस्थी जमा ली। दिनभर हाड़-तोड़ मेहनत। माथे का पसीना एड़ी तक और एड़ी का दम माथे तक, रेमसिंग का पूरा जिस्म बिना जिम जाए ही साँचे में ढल रहा था। उसके साथ उसकी नई लाड़ी भी तगारी उठाती। सीमेंट की छारी से धूल-धूसरित हुआ उसका गौरवर्ण। तेल, साबुन, शैंपू के अभाव में सन से सुनहरी होती उसकी काली लटें। दोनों को देखकर ऐसा लगता, जैसे महादेव-गौरा कैलाश छोड़ धरती पर विचरण करने आए हों।

आज जब पति-पत्नी के रिश्ते लड़ाई-झगड़े, विवाहोतर, नाजायज संबंध, तलाक, हत्या, कत्ल शक-संदेह जैसे भँवर में फँसकर टूट रहे हैं, वही रेमसिंग और नूरली के प्रेम की प्रगाढ़ता, दांपत्य की हाँड़ी में दही-सी जम रही थी। दिनभर दोनों काम करते। रेमसिंग सीमेंट, रेत, गिट्टी से माल बनाता, नूरली तगारी लेकर आती, रेमसिंग फावड़े से तगारी में माल

डालता। कभी इशारे, से कभी मुसकराकर, कभी छूकर, वह उसके प्रेम का प्रदर्शन करता रहता। उस समय उसकी चमकीली आँखों में प्रेम का पानी ओस की बूँदों-सा चमक उठता और होंठों पर गुलाब की पँखुड़ियों-सी हँसी झरने लगती। उसकी उस प्रणय लीला को देख, बिहारी, घनानंद, पद्माकर जैसे रीतिकालीन कवियों की सारी कविताएँ कानों की खिड़कियों में दौड़ने लगती। "कहत-नटत, रीझत-खिजत, मिलत-खिलत, लजियात। भरे भौन में करत हैं नैननु सो बात।" रेमसिंग अपनी प्रिया नूरली को देख हँसता और नूरली लजाकर तगारी ले भागती। दोनों एक-दूसरे की आँखों से ओझल नहीं होते। प्रेम में अपने प्रिय के सामीप्य की चाह होती है और दूरी खलती है, जुदाई का नाम सुनकर पीड़ा होती है।

आधुनिकता की दौड़ में हम इतना तेज भाग रहे हैं कि हमारे हृदय का प्रेम सरोवर सूख रहा है। मानस के स्रोतों से संवेदनाओं का पानी बूँद-बूँद करके ही टपकता है। उसमें अब पहले जैसा बहाव नहीं है। अब तो पर्सनल लाइफ का बाँध हर कोई बाँध लेता है। दिल-दिमाग में विचारों का पानी डबरा रहा है, इसलिए समाज में सड़ाँध फैल रही है। लोग-बाग नाक-मुँह सिकोड़-सिकोड़कर चलते हैं। असंवेदनशीलता की बीमारी सबको लगने लगी है। किसी-ने-किसी से जरा-सा हँसी-मजाक क्या कर लिया, उसके एक-एक शब्द की व्याख्या कई अर्थों में की जाती है। सब लड़ाई के मूड में ही बैठे रहते हैं। कब कोई तुम्हारी सरल-सहज बोली-बातों को दिल पर ले ले, यह पता ही नहीं चलता। सरल-सहज होने के अपने लाभ भी हैं और हानि भी अब तुम्हारे हृदय की पीड़ा तथा व्यवहार का सीधा व भोलापन कोई नहीं देखेगा। वह तो वही देखेगा, जो उसका नजरिया है। इसलिए हमें दूसरों के नजरियों से बचना है। हमें तो खुद के विचारों की डोर पकड़ लोक-समाज के आकाश में अपने नजरियों की पतंग उड़ानी है। दूसरे के नजरिए को तो पतंग में लगी पूँछ-सा लगाकर केवल अपनी उड़ान में संतुलन ही बनाना है।

रेमसिंग ने सादगी और संतुलन की नींव पर अपनी गृहस्थी जमा ली। हम दोनों की गृहस्थी साथ में ही शायद शुरू हुई। मैं दौड़कर गैस चूल्हा ले आया। उसने तीन ईंटों को जमाकर चूल्हा बना लिया। मैं चाय के लिए दूध लेने गया। उसने 'पठानी चाय' जिसे आज के जमाने वाले ग्रीन-टी कहते हैं, बनाई और गिट्टी के ढेर पर बैठकर बड़े शान से पीने लगा। मेरा मन हुआ उससे झगड़ा करूँ, लेकिन किस बात को लेकर झगड़ता। झगड़े का कोई मूल-माथा, कोई कारण तो मिले। वह मुझे देखकर मुसकरा देता। उसकी वह निरीह हँसी मुझे अपनी सी लगती और इस अपनेपन के गमछे को मैं झट से अपने गले में डाल लेता। कितना अच्छा लगता है, जब हम किसी दूसरे की हँसी को अपने होंठों के बगीचे में सजाते हैं। कितना अच्छा लगता है, दूसरे के सुख-दुःख को अपना बनाना। किसी के दुःख को सुनकर अपनी आँखों से आँसू बहाना और किसी की खुशी को अपनी खुशियाँ बनाना। जब भी रेमसिंग हँसता, मुझे अपना सा लगता है। उसकी हँसी मुझे अपनी सी ही लगती। लेकिन मेरे नसीब में रेमसिंग जैसी हँसी कहाँ थी।

गाँव से आए मुझे साल भर हो गया था। लेकिन इस साल भर में मैं कितनी बार खुलकर हँसा, यह मुझे भी पता नहीं। तहसील पाटी (बड़वानी) के छोटे से कॉलेज में, मेरे साथी और मेरी हँसी के ठहाके सतपुड़ा की गंजी पहाड़ियों के सर से टकरा-टकराकर मांदल (आदिवासी ढोल) की थाप से बजते। सबसे हँसना-बोलना और कार्यस्थल पर मिल-जुलकर काम करना, कर्मचारी को और क्या चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं होता। सीनियरिटी के सींग लगाकर हर कोई मरखने बैल सा घूमता है। सहकर्मी देखा और हुमड़ी मार देता है। पद की गाड़ी का बोझ लिए घूमते इन बैलों ने हमेशा षड्यंत्रों का गोबर ही किया है। चापलूसी का चारा चरते-चरते ये लोग कब इनसानों से बैल बन गए, पता ही नहीं चला। इन्होंने सबसे हँसना-बोलना छोड़ा और अंगारे पर जमी राख सी गंभीरता ओढ़ ली। भीतर दुर्भावनाओं की अंगार और बाहर निर्मोहिता की राख। ऐसे इनसानमय अधिकारी लकीर के फकीर होते हैं। यह नियम और सिद्धांत के सख्ती से पालन करने, करवाने पर विश्वास रखने का नाटक करते रहते हैं। नियम सिद्धांतों का भय दिखा-दिखाकर ये लोग सहकर्मियों पर तानाशाहों सी हुकूमत करते और अपनी ही आत्ममुग्धता में जीते। इन्हें कर्मचारियों के मानवीय पक्ष से कोई रिश्ता-नाता नहीं। यह तो मशीनों के जैसे काम करते, जिसमें भाव-संवेदनाओं का कोई स्थान नहीं होता और आदमी की कोई कीमत नहीं।

रिश्तों की कीमत और आदमी का मान-सम्मान रेमसिंग की नूरली भी करना जानती थीं। रेमसिंग से बातचीत से पता चला कि वह मेरे ही पैतृक गाँव के पास का रहने वाला है। उस दिन से नूरली और मेरा रिश्ता जेठ और बहू का हो गया। मुझे गेट या गली में आते-जाते देख नूरली हाथ भर का घूँघट निकाल मुझे सम्मान देती। मुझे अगर पता रहता कि मेरे सम्मान में घूँघट निकल रहा है, तो मैं नूरली को कभी भी घूँघट निकालने नहीं देता। नारी का चेहरा तो हमेशा आस्था का सूरज और श्रद्धा का चाँद जैसा रहा है। प्रेमी और रसिक भाव तो किसी एक चेहरे के लिए होना चाहिए और एक के प्रति प्रेम सही भी है, लेकिन जमाने भर की स्त्रियों के चेहरे को आस्था और श्रद्धा से देखना चाहिए। पुरुष-स्त्री के

गाँव से आए मुझे साल भर हो गया था। लेकिन इस साल भर में मैं कितनी बार खुलकर हँसा, यह मुझे भी पता नहीं। तहसील पाटी (बड़वानी) के छोटे से कॉलेज में, मेरे साथी और मेरी हँसी के ठहाके सतपुड़ा की गंजी पहाड़ियों के सर से टकरा-टकराकर मांदल (आदिवासी ढोल) की थाप से बजते। सबसे हँसना-बोलना और कार्यस्थल पर मिल-जुलकर काम करना, कर्मचारी को और क्या चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं होता। सीनियरिटी के सींग लगाकर हर कोई मरखने बैल सा घूमता है।

मान-सम्मान की रक्षा करें और स्त्रियाँ धरती-सा हृदय लिए, दया, माया, ममता, प्रेम, स्नेह और अथाह वात्सल्य की निधि लेकर जिरोती (निमाड़ अंचल म.प्र. का सौभाग्य सूचक भित्ति चित्र) सा सौभाग्य बन पुरुष की हृदय भित्ति पर त्योहारों की खुशहाली सी सजती रहे। पुरुष व स्त्री का रिश्ता हमेशा ही मर्यादा पूर्ण रहना चाहिए। पुरुष और स्त्रियों को मर्यादा के धागे में बाँधने का यह कार्य भारतीय समाज में पहले से ही चला आ रहा है। अतीत में कई ऐसे प्रसंग आए हैं, जिसमें नारी की रक्षा के लिए पुरुषों ने अपने खून का कतरा-कतरा नारी के मान-सम्मान और रक्षा के लिए बहा दिया। पत्नी, प्रिया को छोड़कर संसार भर की स्त्रियों को माँ-बहन समझा गया है। ऐसे पुरुषों के हृदय में भगवान् का वास हो जाता है। यह सच बात तो तुलसी यों ही नहीं कह गए—'जननी सम जानहिं पर नारी। तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारी।'

नूरली को जब भी देखता, तब-तब यह पाता कि उसमें आदर्श गृहणी के वे सारे गुण भरे हैं। उसका सौंदर्य बागड़ पर लग गए गिलकी के फूल की ताजगी-सा खिल रहा है। वह अपने चौके-चूल्हे का एक भी काम रेमसिंग से नहीं करवाती। सुबह से ही वह ज्वार-मक्के की रोटी बना लेती। रोटी सिंकने की महक को सूँघ मैं मस्त हो जाता हूँ। तब मेरे लिए यह लोक कहावत सटीक बैठती—'हलवाई का कुत्ता गंध में ही मस्त रहता है।' चाहे नलके से पानी लाना हो या शाम के वक्त रेमसिंग के दिनभर फावड़ा चलाने से दुखते कंधों को दबाना हो, नूरली एकाग्रचित्त होकर अपना काम करती है। नूरली की उम्र की लड़कियाँ और वह भी नई दुलहनें, कितना सजती-सँवरती हैं, लेकिन नूरली तो नूरली है। उसके तो नाम में ही नूर छुपा हुआ है। सच में नूरली का चेहरा सादगी के सौंदर्य से दमकता था। नूरली बिन साजो-श्रृंगार के ही खूबसूरत लगती, तभी तो ठेकेदार उसे खा जाने वाली नजरों से देखता है और किसी-न-किसी बहाने वह नूरली से ही सामान मँगाता। रेमसिंग ठेकेदार की उस बुरी नियत को जान गया था, इसीलिए ठेकेदार के नूरली पुकारने से पहले ही रेमसिंग ठेकेदार के सामने चला जाता और बिजली की भाँति ठेकेदार के बताए काम को पूरा कर देता। अपनी गंदी नजरों की हवस को पूरा होता न देख ठेकेदार पागल कुत्ते सा भौंकता। साले एक भी काम सही ढंग से नहीं करते और अपने मुँह से गुटखा थूकते हुए कुरसी पर बैठ जाता।

नूरली को जब भी देखता, तब-तब यह पाता कि उसमें आदर्श गृहणी के वे सारे गुण भरे हैं। उसका सौंदर्य बागड़ पर लग गए गिलकी के फूल की ताजगी-सा खिल रहा है। वह अपने चौके-चूल्हे का एक भी काम रेमसिंग से नहीं करवाती। सुबह से ही वह ज्वार-मक्के की रोटी बना लेती। रोटी सिंकने की महक को सूँघ मैं मस्त हो जाता हूँ।

समाज में कुरसी पर बैठे लोगों की ही तो नीयत खराब है। जिसको पद, पैसा और कुरसी की ताकत मिली, वह ठेकेदार बना फिरता है। नूरली जैसी आम जनता हर रोज ऐसे ठेकेदारों के लिए मांस के टुकड़े जैसी होती। छीना-झपटी, मार-काट, साजिश-षड्यंत्र, इनके श्वान संविधान में सबकुछ जायज है। मेरे लिए रेमसिंग उन तमाम मजदूरों का चेहरा था, जो हमारे आसपास भव्य इमारतों के निर्माण में, सड़क किनारे खोदे जाने वाली केबलों की नालियों में, भारी-भरकम सामानों को लादते, पसीने से तरबतर, मेहनतकशों के रूप में काम करते दिखाई देते हैं। मेरे लिए रेमसिंग की हँसी केवल रेमसिंग की हँसी नहीं थी, वह तो तमाम उन मजदूरों की हँसी थी, जो रेमसिंग जैसे हर हाल में खुश और मदमस्त रहते। रेमसिंग की हँसी संतोषी भाव और संतुष्टि के मंत्र को जानने वालों की हँसी थी। रेमसिंग की हँसी मजदूरों पर होते रहते उन सारे शोषण, अत्याचार और अन्याय के विरुद्ध गांधीवादी आमरण अनशन की हँसी लगती।

कभी-कभी तो मुझे ऐसा लगता कि रेमसिंग की हँसी गीता का उपदेश देती, जीवन और संसार की असारता की व्याख्या करते हुए योगेश्वर श्रीकृष्णा की हँसी हो, ऐसी लगती। जब ठेकेदार बेवजह के कारणों से रेमसिंग की धाड़की-मजदूरी काट लेता तो रेमसिंग कुछ नहीं कहता, वह बुद्ध सी आँखें बंद कर करुणा की हँसी हँस देता। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है, यह रेमसिंग रेमसिंग नहीं है, कोई और है। खुले आसमान में उघड़ा (निर्वस्त्र) पड़ा रहता। जो मिलता, वह खा लेता। किसी से शिकवा-शिकायत नहीं। ऐसा लगता है, जैसे दिगंबर महावीर ध्यानमुद्रा में बैठे हों और रेमसिंग जितेंद्रिय हो गया हो। कोई दु:ख नहीं है। कोई संताप नहीं है। अपने पर हुए किसी भी अत्याचार का कोई प्रतिकार नहीं। ऐसी स्थिति में रेमसिंग मुझे जीजस क्राइस्ट लगता। मुझे रेमसिंग कभी रेमसिंग नहीं लगा। सदा एक पूरी दुनिया लगा। जो हमारे आसपास ही रहते हैं। जिसे हम हमारी आँखों से नहीं देखते। उस दुनिया को देखने के लिए तो छाती में रेमसिंग जैसा दिल, होंठों पर हमेशा रेमसिंग जैसी हँसी रखनी होगी।

पड़ोस वाली तिरोले भाभी, रेमसिंग की झोंपड़ी के पास कचरा फेंकती है। उस कचरे में हिंदी वर्णमाला की फटी हुई किताब को रेमसिंग उठा लेता है और गिट्टी के ढेर पर बैठ वर्णमाला जोर-जोर से बाँचता है। अनार का, आम का, इमली का, ईख का उल्लू, ऊन, ऋषि, एड़ी ऐनक, ओखली, औरत, अंगूर और अ:अ:अ:। रेमसिंग को बाँचते हुए देख उसकी उच्चारित वर्णमाला के अक्षर मेरी आँखों से आँसू बन टपक रहे थे। रेमसिंग पढ़ रहा था। रेमसिंग हँस रहा था। शिक्षा ही रेमसिंग जैसों को हँसाएगी और उनको उनका हक दिलाएगी। रेमसिंग अभी भी हँस रहा था और जोर-जोर से बाँच रहा था-अ:,अ:,अ:।

सा
अ

माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय
स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खंडवा (म.प्र.)
दूरभाष : ९००९०९३३४९

वैदिक सनातन धर्म

• प्रमोद कुमार अग्रवाल

आई.ए.एस. (रिटा.) व प्रतिष्ठित साहित्यकार। हिंदी और अंग्रेजी में कुल ७५ पुस्तकें प्रकाशित; राम साहित्य पर तीन पुस्तकें 'रामचरितमानस-नाट्यरूप', 'मैं राम बोल रहा हूँ' तथा 'चित्रकूट में राम-भरत मिलाप' उ.प्र. हिंदी संस्थान से पुरस्कृत तथा उ.प्र. हिंदी संस्थान से 'साहित्य भूषण' पुरस्कार प्राप्त।

धरती पर सभी ज्ञान का स्रोत वेद ही हैं। वेद का शाब्दिक अर्थ है—विज्ञान, ज्ञान, विचार और लाभ। हम यह विश्लेषण करें कि वेदों ने सनातन धर्म के विषय में क्या कहा है।

यजुर्वेद में कहा गया है—

'यत्र विश्वं भवत्येकनीऽम्'। (३२/८)

यहाँ सब जगत् एक आश्रम वाला होता है, अर्थात् 'वसुधैव कुटुंबकम्'। ऋग्वेद के अंतिम सूक्त १९१ में घोषणा की गई है—

'सङ्गच्छध्वं संवद्ध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानांना उपासते॥ २॥

हे मनुष्यो! तुम परस्पर मिलकर चलो, परस्पर मिलकर बात करो। तुम्हारे मन एक समान होकर ज्ञान को प्राप्त करें। जिस प्रकार पूर्व विद्वान् ज्ञानी जन सेवनीय प्रभु को जानकर उसकी उपासना करते आए हैं, वैसे ही तुम भी किया करो।

समानो मन्त्र समितिः समानी समानं मनः सह चिन्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥ ३॥

सब मनुष्यों का विचार समान हो। इनकी समिति और सभा समान हो, इनका मन समान हो और चित्त एक साथ समान हो। तुम्हें समान विचार वाला बनाता हूँ। तुम्हें समान खानपान से युक्त करता हूँ।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥ ४॥

हे मनुष्यो! तुम्हारे संकल्प समान हों, तुम्हारे हृदय परस्पर मिले हुए हों। तुम्हारे मन समान हों, जिससे तुम लोग परस्पर मिलकर एक होकर रहो।

ऋग्वेद में ही संदेश है—

आ मित्रे वरुणे वयं गीर्भिर्जुकुमो अत्रिवत्।
नि बर्हिषि सदतं सोमपीतये॥ ५॥

जो मित्र के सदृश बरताव करके संपूर्ण जगत् का सत्कार करते हैं, उनके अनुसार सबको बरतना चाहिए। यही सार्वभौमिक मित्रता, समन्वय, सहिष्णुता एवं परस्पर प्रेम शाश्वत तत्त्व हैं, जो विश्व को बाँधे हुए हैं।

ऋग्वेद में ही आगे संदेश है—

आ यद्दमीय चक्षसा मित्रं वयं चं सूरयः।
व्याचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये॥ ६॥

मनुष्यों को चाहिए कि मित्रता करके अपने और दूसरों के राज्य की न्याय से रक्षा करके धर्म की उन्नति करें। अथर्ववेद में व्यावहारिक स्तर पर सलाह है—

एता एना त्यकरखिले गा विष्ठिंता इव।
रमन्ता पुण्या लक्ष्मीर्याः पापीस्ता अनीनशम॥ ७॥

मनुष्य भले और बुरे कर्मों के लक्षण समझकर भलों का स्वीकार और बुरों का त्याग करें। अतः मित्रता का अर्थ यह नहीं है कि व्यक्ति बुरे मनुष्यों के साथ रहे। उसे सत्संग में ही रहना चाहिए, तभी वह कर्मयोगी और उद्योगी पुरुष बन सकता है, जो ऋग्वेद का परामर्श है—

ऋतस्य तन्तुर्विततः पवित्र आ जिह्वाया अग्रे वरुणस्य मायवा।
घोराश्चित्तत्स मिनक्षत्त आशतात्रं कर्ममेव पदात्यप्रभुः॥८॥

जो कर्मयोगी और उद्योगी पुरुष हैं, उन्हीं के अंतःकरण में परमात्मा निवास करता है। यही संदेश सभी धर्मों से सभी युगों में निकलता है।

उपर्युक्त सार्वकालिक सिद्धांतों का पालन करने से समाज, देश एवं विश्व में धन-धान्य की वर्षा होती है। अथर्ववेद के अंत में यही अवधारणा व्यक्त की गई है—

मधुमती रोषधीर्घाव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम्।
क्षेत्रस्य पतिर्मघुमान्नो अस्त्वरिण्यन्तो अन्वेनं चरेम्॥ ९॥

अर्थात् जैसे किसान खेत में बीज बोकर धूप, जल, भूमि आदि से काम लेता हुआ अन्न उत्पादन करके उपकार करता है, वैसे ही विद्वान् लोग सब पदार्थों का उपयोग करके संसार का उपकार करें।

अतः सर्व कल्याण की भावना ही सनातन धर्म के मूल में है, जो पवित्र वेदों में विभिन्न प्रकार से व्यक्त की गई है, ताकि मनुष्य मात्र उन सिद्धांतों का अनुपालन करके जीवन और जगत् का भला कर सके।

यही सार्वजनीन एवं सार्वकालिक सर्वकल्याण फलीभूत होता तथा यह विश्व उत्तम निवास स्थान होता है, जब मनुष्य वेद में वर्णित सनातन धर्म का पालन करता है। यजुर्वेद के कथन में यही परिलक्षित होता है—

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतात।
आ राष्ट्रेराजन्य: शूर इषव्योऽति व्याधी महारथो जायताम्।
दोग्ध्री: धेनुर्वोढाऽनऽवान् आशु: सप्ति पुरन्धिर्योषा निष्ठुरथेष्ठा:।
सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम॥
निकामे निकामे न: पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न औषधय पच्यन्ताम योगक्षेमो न: कल्पताम्॥ ७७॥

हे ईश्वर! हमारे राष्ट्र में ब्रह्मवर्चसी ब्राह्मण उत्पन्न हों। हमारे राष्ट्र में शूर, बाण वेधन में कुशल, महारथी क्षत्रिय उत्पन्न हों। यजमान की गायें दूध देने वाली हों, बैल भार ढोने में सक्षम हों, घोड़े शीघ्र गमन करने वाले हों, स्त्रियाँ सुशील और सर्वगुण संपन्न हों, रथवाले जयशील, पराक्रमी और सभ्य युवा उत्पन्न हों। हमारे राष्ट्र में आवश्यकतानुसार समय-समय पर मेघ वर्षा करें। फसलें और औषधियाँ फल-फूल से लदी होकर परिपक्वता प्राप्त करें और हमारा योगक्षेम उत्तम रीति से होता रहे। सारांश में यजुर्वेद ने कहा है कि मनुष्य जीवन में भौतिक एवं आध्यात्मिक, दोनों पक्षों का समुचित सम्मिश्रण होना चाहिए—

विद्या चाविद्यां च यस्तद्देदोभयं स:।
अविद्या मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृत मश्नुते॥ १३॥

अर्थात् जो मनुष्य पदार्थ विद्या एवं अध्यात्म विद्या दोनों को साथ-साथ जानता है, वह मनुष्य पदार्थ विद्या के समुचित और सर्वहितकारी उपयोग के द्वारा तथा शरीर और जगत् के नश्वर होने के ज्ञान द्वारा मृत्यु भय एवं अन्य सभी दु:खों को पार करके यथार्थ अध्यात्म विज्ञान के द्वारा परमानंद को प्राप्त करता है।

साथ-साथ वह संकुचित न हो, विश्वमृत हो अर्थात् अपने राष्ट्र की उन्नति के साथ ही विश्व-कल्याण और विश्व-बंधुत्व की स्थापना करे—

विश्वमृत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रम अगुण्मै दत्त॥ १४॥

यजुर्वेद का अंतिम अध्याय ही ईशा उपनिषद् का प्रथम वाक्य है, जिसमें दो बातें मुख्य हैं—ईश्वर सर्वव्यापक है तथा सौ वर्ष तक निष्काम भाव से कर्म करते रहें—

ईशावास्यमिदं सर्व यत् किं च जगत्यां जगत।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधा: कस्यविद् धनम्॥ १५॥

और जीवन में लालच न करें। दूसरों की संपत्ति के लिए इच्छा न करें। गांधीजी के अनुसार यही सनातन धर्म का सार है। इस एक मंत्र के सहारे विश्व सही मार्ग पर चल सकता है।

कुर्वन्नेवेह कर्मणि जिजीविषेत् शमं समा:।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥ १६॥

अर्थात् कर्मों में आसक्त न हो, जो भगवद्गीता का भी केंद्रबिंदु है।

ये शाश्वत सिद्धांत हैं तथा देश और काल से परे शाश्वत हैं। वेदों और उपनिषदों में इन सिद्धांतों को सभी मनुष्यों के लिए उद्घाटित किया है एवं कहीं भी हिंदू या भारत का संकेत नहीं आया है। ये मानव मात्र के लिए सनातन धर्म के सिद्धांत हैं, जो अन्य धर्म में भी विभिन्न प्रकार से उद्भासित हैं। उपनिषदों को ही अनेक मनीषियों ने वेदांत की संज्ञा दी है।

समदर्शिता अर्थात् सभी प्राणियों को समान भाव से देखना भारतीय संस्कृति में एक प्रमुख मूल्य रहा है। पुराणों में भी इसके पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हैं। जैसे जब कोई पुरुष किसी के लिए भी पापमयी दृष्टि नहीं रखता, तब उस समदर्शी के लिए सभी दिशाएँ आनंददायिनी हो जाती हैं। (विष्णु पुराण १, २५/५३)

जो महान् वैभव का आकांक्षी हो, उसे पुण्यों का संचय करना चाहिए तथा जो मोक्ष की कामना करता हो, उसे समत्व लाभ में लगना चाहिए। मनुष्य, पशु-पक्षी, वृक्ष, सरीसृप आदि भगवान् से विभिन्न होते हुए भी यथार्थ में उन्हीं अनंत भगवान् के स्वरूप हैं, इस बात के ज्ञाता पुरुष को संपूर्ण विश्व आत्मवत् देखना चाहिए, क्योंकि यह एक सम विश्व रूप धारण किए हुए भगवान् रूप ही हैं। (विष्णु पुराण २, ४५-४७, पृ. २१६)

विष्णु पुराण ने समस्त के प्रति कल्याण भावना व सौहार्द को सनातन धर्म माना है—

"सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:खभाग भवेत।"

ब्रह्म पुराण में तो सनातन धर्म की सीधी परिभाषा इस प्रकार दी गई है—

"अपने दु:ख के समान ही दूसरे प्राणधारियों को दु:ख हुआ करता है। उसी भाँति सब प्राणधारियों को अपने प्राण प्रिय हुआ करते हैं—ऐसा ही अपने मन में समझ लो। आप जिनका हनन किया करते हैं, उनकी भी व्यथा इसी प्रकार हुआ करती है और अन्य प्रकार की नहीं होती है। प्राणी मात्र की हिंसा न करना ही सनातन, अर्थात् सदा से चले आना वाला धर्म है। (ब्रह्म पुराण १, ४९-५१/१५०-१५१)

पुराणों के पश्चात् भारतीय वाङ्मय में धर्मशास्त्रों की महत्ता है। परिवर्तनशील समाज में नई चुनौतियों के साथ धर्मशास्त्रों की नई टीकाओं की रचना होती रही है। धर्मशास्त्रों की परंपरा सदियों से भारतीय समाज को सुचारू रूप से संचालन का विश्वकोष है। आइए, हम सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मनु के धर्मशास्त्र में अवगाहन करें कि उसमें सनातन धर्म का क्या स्वरूप लक्षित होता है। मनु स्वयं कहते हैं कि धर्म का मूल श्रुति (वेद) है, इसके बाद स्मृति है, फिर विद्वानों का मत, तत्पश्चात् साधु पुरुषों का चरित्र और अंत में आत्मतुष्टि। यदि कोई बात सब तरह से पुष्ट हो रही हो, किंतु उसका पालन करने वाले की आत्मा उस कृत्य से संतुष्ट न हो रही हो तो वह धर्म नहीं है। (मनुस्मृति २:६)

मनुस्मृति को मानव धर्मशास्त्र भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें मानव मात्र के लिए सार्वभौमिक प्राकृतिक नियम हैं। यह हिंदुओं के लिए आचार संहिता है। मनु ने आश्रम व्यवस्था स्थापित की। उसके अनुसार गृहस्थ जीवन ही सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि गृहस्थाश्रम में कर्म करने के सबसे अधिक अवसर आते हैं। जीवन की सार्थकता कर्म में ही मानी जाती है, परंतु कर्म की जो भारतीय दर्शन की परिभाषा है, वह कर्म शब्द के साधारण अर्थ से

पृथक् है। कर्म की इस अवधारणा के अनुसार कर्म वह ही है, जो समष्टि को दृष्टि में रखकर किया जाए। इस प्रकार का कर्म मनुष्य के कल्याण का एकमात्र मार्ग है। मनु के सामाजिक दर्शन में एक बात स्पष्ट है कि उनके लिए प्रत्येक का व्यक्तिगत जीवन तपस्या होना चाहिए और सबका एकमात्र लक्ष्य सुदृढ़, नैतिक और धर्म पर आधारित व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाते हुए मोक्ष की प्राप्ति होना चाहिए। मनु की वर्ण-व्यवस्था भी मूल रूप से गुण और कर्म पर आधारित है।

धर्म भारतीय समाज का प्राण है। भारतीय समाज और चिंतन की धुरी ही धर्म है। धर्म की स्थापना के उद्देश्य की पूर्ति के लिए राजा मात्र साधन है। धर्म का अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने नियत कर्मों या कर्तव्यों का समुचित रूप से पालन करे एवं अपने अधिकारों को प्राप्त करे। 'धर्म की स्थापना के लिए दंड आवश्यक है और दंड धारण करने के लिए राजा की आवश्यकता होती है।'

४६९, सी.पी. मिशन कंपाउंड,
झाँसी-२८४००३ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९६५०००२५६५

कविता

उत्सव रंगों का

● सुधा कुमारी

सुपरिचित रचनाकार। अंग्रेजी कविता-संग्रह 'द टाइड' एमेजॉन सहित विश्व की ४५ वेबसाइट पर उपलब्ध। हिंदी लेख, व्यंग्य, कहानी-संग्रह 'परिष्कृत और सुखी वातावरण'। '२१वीं सदी के १३१ श्रेष्ठ व्यंग्यकार' में व्यंग्य संकलित। छोटे-बड़े अनेक सम्मानों से सम्मानित।

दीप बनकर जलो

किस अनवरत यात्रा में हो पथिक?
साथ मुझको ले चलो।
मैं तुम्हारी ऊर्जा, जिजीविषा
मेरे संग मंजिल चलो।

एक दिव्य प्रकाश बन नभ में जला
एक तपता मरुस्थल है दिलजला
दीप बनकर तुम जलो।

रेत में बनती है, मिटती है कथा
चिह्न सारे मिटाती चंचल हवा
तुम अमिट कथा बनो।

क्या हुआ, जो छूट कोई साथी गया
साथ किसके कब भला कोई गया?
तुम निडर राही बनो।

किस अनवरत यात्रा में हो पथिक?
उमंग संग में ले चलो।

कब जलेगी गंदगी?

बेदिली में सुकून
तलाशती है जिंदगी
उत्सव रंगों का
मनाती है जिंदगी।

होली-मिलन में भी
मन मिल न पा रहे
होलिका जल गई,
कब जलेगी गंदगी?

कहीं इश्क से लबरेज
कहीं खून की होली
दुनिया में हर तरह की
होली है जिंदगी!

चंदा से माँगे पानी

सागर
किया प्रदूषित
नदियाँ मैला ढोतीं,
धरती पर बमवर्षा।
अंतरिक्ष
में जाकर
चंदा से माँगे
पानी, मानव
दीवाना।

सो रहा था चैन से
मैं बादलों को ओढ़कर,
यहाँ भी सताने आ गए
किसने पता बता दिया?

पहले धरती, अब यहाँ
कचरा, फिर तबाही
वहाँ हिमगिरि छोड़कर ये
खोजने जल आ गया!

चाँद : कुछ बिंब

यह जीवन का उजियारा
भ्रम का हर ले अँधियारा
थोड़ा प्रकाश, शीतलता भी
सुंदर सुमनोहर प्यारा।

चाँद गगन में तैर रहा
जैसे लहरों में नैया
रूप अपरूप दिव्य हाथों
से खेता जगत् खेवैया।

दिन में दहक, रात में जमकर
शीतलता बरसाते हो,
जीवनहीन स्वयं होकर भी
सबको अमिय पिलाते हो।

डी-१७ ए, प्रथम तल
कैलाश कॉलोनी, नई दिल्ली-११००४८
दूरभाष : ९२८९१४७९७५

देश के पारिवारिक पेशे

● गोपाल चतुर्वेदी

यदि कोई राजनीति को पेशा माने तो सबसे प्रबल परिवार तंत्र सियासत है, पर कुछ लोग कहते हैं कि ऐसा है नहीं। स्वतंत्रता-संग्रामियों के लिए भारत की आजादी उनके जीवन का एक मिशन था। बहुतों ने इसके लिए पीड़ा-आपदा झेली, कुछ ने जीवन न्योछावर कर दिया। कोई कैसे इसे इस सेवा-भावना को भी संसार का पेशा माने? संभव है कि एक के बाद दूसरे परिवार के सदस्य इससे बच के रहे। या यों कहें कि उनमें देश को स्वतंत्र करवाने का जज्बा न था। यह भी सच है कि कई वकीलों ने इस मुहिम में भाग लिया। इसमें भी संदेह नहीं है कि अधिकतर जाने-माने स्वतंत्रता संग्रामी वकालत के पेशे की शोभा थे। गांधी से लेकर जवाहरलाल, पटेल, राजेंद्र प्रसाद, आंबेडकर आदि सभी वकील थे।

स्वतंत्रता के पश्चात् देश की राजनीति में परिवर्तन आया। इसे प्रारंभ करने का श्रेय जाने-अनजाने या गैर-इरादतन जवाहरलालजी को जाता है। उनके पश्चात् उनकी पुत्री इंदिराजी ने उनका पदभार सँभाला। फिर तो यह नेहरू-गांधी परिवार की एक आम परंपरा हो गई। नहीं तो कोई सोचे कि क्या कहीं और ऐसा संभव होता कि धंधे से एक हवाई जहाज उड़ाने वाला देश का पॉयलट बन जाए? उनकी दुर्भाग्यपूर्ण हत्या के बाद उनकी इटैलियन पत्नी, जिनका सियासत से कोई ताल्लुक नहीं है, वह दल की सर्वोच्च नेता बन बैठीं। कई जानकार बताते हैं कि ऐसा संसार के इतिहास के सामंत-युग के बाद किसी लोकतंत्र में न हुआ है, न हो सकता है। यह अजूबा भारत में ही संभव है। परिवार जिसका कठपुतली के खेल से न कोई वास्ता है, न ताल्लुक। वह आदर्श, त्याग और सिद्धांत की कठपुतली को नचा रहा है और पूरा देश इस तमाशे को रुचि के साथ ताक रहा है। पारिवारिक प्रजातंत्र का इससे आदर्श उदाहरण और क्या होगा कि राजीव के पुत्र और पुत्री बिना किसी अनुभव सिर्फ संपन्न वंशगत आधार पर देश का नेतृत्व करने लगे? उनका पूरा दल इसे स्वीकार भी कर ले और उनकी वाहवाही में लग जाए? इतना ही नहीं, उनको स्वयं भी भ्रम हो कि वह सर्वोच्च कुरसी के सुपात्र हैं, भले ही वह संख्या-बल में काफी पीछे हैं? पर इससे क्या?

कई ऐसे दल भी हैं, जो इस परिवार की देखा-देखी प्रजातंत्र के प्रमुख पद को पुश्तैनी विरासत मानते हैं। ऐसे सब नेता अपने इस प्रेरक आदर्श परिवार के साथ हैं। सबका समान आशय गान है। वह चुनाव में हारकर भी जीते हैं। बस मूल भाव यह कि शासकीय दल का पावन कर्तव्य है कि उनको शीघ्रातिशीघ्र सत्ता सौंपे वरना यह जनादेश की अवहेलना है? देश की आम जनता का अपमान है? जनतंत्र के मूल उसूलों का उल्लंघन है। आश्चर्य तो तब होता है, जब देश के तथाकथित ज्ञानी और बुद्धिजीवी भी इस विषय पर वैचारिक बहस गोष्ठी और परिचर्चा करें? प्रजातंत्र के इस सामंती तत्त्व का समर्थन करें। इसे भारत की उपलब्धि मानें। इसे लोकतंत्र का जायज नमूना बताएँ। हम तो हैरान हैं, ऐसे व्यक्तियों की सामान्य बुद्धि से। सिर्फ अल्पसंख्यक वोट की खातिर वह अगड़े-पिछड़े को बाँटने में लगे हैं। क्या पता उन्हें लगता है कि देश का एक विभाजन पर्याप्त नहीं है? यह दुर्दशा तो तब है, जब देश में राजनीति कोई पेशा न होकर सेवा की भावना का पर्याय है। फिर भी सच्चाई यह है कि जब हम विश्व की सबसे पुरानी नगरी 'काशी' का काया-पलट करने में समर्थ हैं तो हमारी अभूतपूर्व कार्य-क्षमता का अनुमान लगाना भले कठिन हो, असंभव नहीं है।

राजनीति के भ्रामक और विवादित पेशे के अलावा देश में कुछ ऐसे धंधे हैं, जो सबको स्वीकार्य हैं कि पारिवारिक प्रमुख है। इनमें से सबसे लोकप्रिय वकालत है। घर का एक वकील सफल हुआ तो काले कोट का परिवार में प्रचलन बढ़ जाता है। पता लगा कि 'वर्मा एंड संस' में कुल जमा बारह वकील हैं और सब एक ही परिवार के हैं। कोई क्रिमिनल केसों का विशेषज्ञ है तो कोई अन्य कंपनी लॉ का। कोई सिविल के मुकदमे देखता है कोई कंटैम्प्ट के। संक्षेप में कहें कि वकालत का कोई दायरा ऐसा नहीं है कि 'वर्मा एंड संस' से छूटा हो। कभी-कभी शक होता है कि वर्मा परिवार में बच्चे क्या काले कोट पहनकर ही जन्म लेते हैं? तीन भाइयों और दो बहनों के विस्तृत परिवार में वकालत के धंधे को समृद्ध किया है। बहन ब्याही गई तो वह सक्सेना या माथुर हो गई, पर उसके पुत्रों ने भी 'वर्मा एंड संस' की ही शोभा बढ़ाई। कौन कहे, वह यहाँ प्रशिक्षण लेकर 'वर्मा एंड संस' के कर्ता-धर्ता बन बैठें?

हमने एक सज्जन से इस पेशे को परिवार द्वारा अपनाए जाने का कारण जानना चाहा तो उन्होंने बताया कि "कई मुकदमे ऐसे हैं, जो चलते ही रहते हैं, फैसले के बजाय तारीखें पड़ती रहती हैं। न वकील

साहब चाहते हैं कि निर्णय शीघ्र हो, न उनके मुवक्किल। मुकदमेबाजी कुछ मुवक्किलों का शौक है। उन्हें पता है कि पड़ोसी की जमीन उन्होंने अपनी हवेली बनाते समय हड़पी थी। तर्क-कुतर्क दोनों पक्ष के हैं। पड़ोसी के पास खानदानी दौलत है।

प्रश्न अब जमीन का न होकर प्रतिष्ठा का है। वह कैसे हार मान ले? समाज में सम्मान का सवाल है। दोनों पक्ष और उनके काले कोटधारी शीघ्र निर्णय के विरुद्ध हैं। काले कोट को अदालत में मुँह खोलने की फीस मिलती है। वह जब भी जज साहब को 'मिलॉर्ड' संबोधित करता है तो कभी सब्जी का प्रबंध होता है, कभी रोटी का, कभी पाँचतारा होटल का। वह क्यों चाहेगा कि निर्णय या केस का निबटारा त्वरित हो? इसके अलावा मुकदमे के दोनों पक्ष भी जल्दी फैसले के पक्ष में नहीं हैं।

वह पेशेवर मुकदमेबाज हैं। केस निबटा तो उनके पास करने को क्या रहेगा? अभी तो केस के कागज सँभालते हैं, वकील को 'ब्रीफ' करना है, कोई नया गवाह या सबूत तलाशना है, पुराने को पटाए रखना है कि वह कहीं और न फूट ले। यानी उन्हें व्यस्त रखने को ढेरों बहाने हैं। खेती अधबटाई पर हो रही है। घर बैठे पैसे आ रहे हैं। पुश्तैनी जमीन इतनी है कि खासी आमदनी है। वकील की फीस उन्हें अखरती नहीं है।

लड़का शहर में पढ़ाई के नाम पर प्रेमिकाएँ बदल रहा है, कभी बी.ए. में नींव पक्की कर, कभी एम.बी.ए. में। कौन कहे 'मास्टर ऑफ बिजनैस एडमिनिस्ट्रेशन' की डिग्री लेकर उसे कौन सा व्यापार करना है? व्यापार के विषय में भले संशय हो, पर दहेज की राशि तो डिग्री के अनुरूप तै है। उसकी बिक्री की राशि हर डिग्री के अनुरूप बढ़ती जाती है। अब तक वह चार-पाँच लाख में बिकने योग्य हो गया है। वकालत के समान शादी भी एक सौदा है। इसे लोग जल्द-से-जल्द निबटाना चाहते हैं। लड़की वालों को एक खरीदारी करनी है लड़के की। फिर जिंदगी भर इस शादी की सजा भोगनी है। दहेज एक ऐसी मान्य संस्था है कि इससे किसी को छुटकारा नहीं है। सब इसके दोषों से परिचित है। पर इसमें सुधार के हर प्रयास असफल रहे हैं। सब एक मत हैं कि यह समाज का कलंक है, पर कैक्टस की तरह हर समय फल-फूल रहा है।

यदि मुकदमेबाजी एक लोकप्रिय धंधा न होता तो भारत में पंद्रह-सोलह लाख वकील क्यों होते? इस संख्या से वकालत की परीक्षा पास कर साल-दर-साल साठ-सत्तर हजार की वृद्धि क्यों होती? इसमें कुछ हैं, जो करोड़पति हैं, कुछ सत्तापक्ष के नेता भी। उन्हें धन का आनंद भी है और सत्ता-सुख भी।

अंग्रेजों के समय और आजादी के प्रारंभ में सरकार नौकरी भी एक पारिवारिक धंधा थी। साहब को किसी का बनाया भोजन पसंद आ गया तो वह फौरन से पेश्तर उनका 'चपरासी कम कुक' हो गया। इसी प्रकार बाबू-परिवार भी थे। बड़े बाबू के बेटे ने बाबू बनने की न्यूनतम शिक्षा हासिल की कि वह बड़े साहब की अनुकंपा से बाबू बन बैठा। कई बार बाबू-परिवारों की शान-शौकत, दिखावा, प्रदर्शन यह आभास देता है कि सरकार यही चला रहे हैं। धीरे-धीरे हर क्षेत्र में प्रतियोगिता बढ़ी और शिक्षित जनसंख्या भी। तभी योग्यता के आधार पर चयन की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। जैसा सर्व-विदित है, इसमें भी आरक्षण है, कभी किसी जात का जोर, कभी भ्रष्टाचार का।

अंग्रेजों के समय और आजादी के प्रारंभ में सरकार नौकरी भी एक पारिवारिक धंधा थी। साहब को किसी का बनाया भोजन पसंद आ गया तो वह फौरन से पेश्तर उनका 'चपरासी कम कुक' हो गया। इसी प्रकार बाबू-परिवार भी थे। बड़े बाबू के बेटे ने बाबू बनने की न्यूनतम शिक्षा हासिल की कि वह बड़े साहब की अनुकंपा से बाबू बन बैठा। कई बार बाबू-परिवारों की शान-शौकत, दिखावा, प्रदर्शन यह आभास देता है कि सरकार यही चला रहे हैं। धीरे-धीरे हर क्षेत्र में प्रतियोगिता बढ़ी और शिक्षित जनसंख्या भी। तभी योग्यता के आधार पर चयन की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। जैसा सर्व-विदित है, इसमें भी आरक्षण है, कभी किसी जात का जोर, कभी भ्रष्टाचार का।

हमें विश्वास था कि पैसा निर्जीव है। पर इधर जिस प्रकार हर विभाग में वह चलने लगा है, तो हमें अपना दृष्टिकोण बदलना पड़ा है। पैसे के प्राण हैं और गतिशील हाथ-पैर भी। उसी के धक्के से सरकार में ठप फाइलें कभी चलती, कभी दौड़ती हैं। एक ज्ञानी सज्जन ने हमें अपने सरकारी अनुभव का सार सुनाया, "पहले कभी सरकार न्याय और निष्पक्षता, योग्यता से चलती थी। अब फाइल में, पैसे के पहिये लगे हों, तभी वह आगे बढ़ती है।" उनका आगे का कथन ज्ञानवर्धक है—"क्षमता योग्यता के आधार पर ही हर स्तर के चयन के मानक बने हैं। उनमें भी उचित राशि के आधार पर योग्यता तौली जाती है। यदि रकम चाल दर के अनुरूप है, तभी प्रत्याशी योग्य है। उसका चयन होना-ही-होना। इस प्रक्रिया में परीक्षा के कई टॉपर घर रह जाते हैं और फिसड्डी चुने जाते हैं। वह चयन के आकाश में उड़ने योग्य है, उनमें पैसे के पर जो लगे हैं। उनका निष्कर्ष है, "इधर पैसा ही योग्यता का पर्याय है।"

नौकरी से जो पैसे से पाते हैं, उसकी भरपाई भी अपने शासकीय जीवन में पैसा कमाकर ही करते हैं। वेतन तो केवल उनके कार्यालय आने-जाने के अनुग्रह की भरपाई है, वहाँ किसी काम का खर्च अलग है। कई व्यक्ति भुलक्कड़ किस्म के हैं। वह हर कार्य के खर्च की सूची बनाकर जेब में रखते हैं। उसमें फाइल बनाने, उस पर टिप्पणी लगाने, हस्ताक्षर कर आगे बढ़ाने जैसे कार्यों की निश्चित दर है। वह मिलें, तब ही कागज की प्राण-प्रतिष्ठा होती है। नहीं तो कागज निर्जीव का निर्जीव बाबू की मेज की शोभा बढ़ाता पड़ा रहता है। निर्धारित दर से पैसा ही उसमें प्राण फूँकने का इकलौता साधन है। यही सरकार में

भ्रष्टाचार की छवि का अहम कारण भी है।

सरकार जनता के सन्मुख ईमानदारी का दंभ भरती है। कई बार तो 'केस' के निबटाने की समय-सीमा भी निर्धारित रहती है। इसका एक ही आशय है। उसी समय-सीमा में पैसे का भुगतान भी होना है। सरकार के कर्णधार भी प्रसन्न हैं कि उन्होंने कार्य-कुशलता का नया नमूना पेश किया है। बाबू भी इस तथ्य से गद्गद हैं कि अब आवश्यक ऊपरी कमाई भी एक समय-सीमा के अंतर्गत होनी है। न बहानेबाजी चलेगी, न देने वालों की सौदेबाजी। निश्चित रकम का उधर त्वरित भुगतान होगा, इधर केस का निबटान। यदि 'रकम' में देर लगी तो केस के कागज गुम हो जाएँगे, वरना यह भी संभव है कि उनके दफ्तर में प्रवेश पर ही प्रश्न-चिह्न लग जाए। जब बिल आया ही नहीं तो भुगतान कैसे हो? जो सच है, वह केवल इतना है कि रेट की निर्धारित राशि मिली तो कोई देर संभव नहीं है। हर सरकार का दावा है कि उसके कार्य-निष्पादन में इतनी कुशलता की ऐसी चमक है कि आँखें चौंधिया जाएँ? कुछ हद तक यह सच भी है। सरकारी कार्यालय में भ्रष्टाचार की उपस्थित कोई अंधा तक महसूस करने में सक्षम है।

अब जनता यह मानने को विवश है कि जहाँ सरकार है, वहाँ भ्रष्टाचार है। एक और धंधा डॉक्टरों का है। इधर वहाँ भी परिवार का जोर है। यदि पिता के हाथ में शफा है और उसका इलाज चल निकला तो बेटा, बेटी, दामाद, सभी डॉक्टर हैं। यों डॉक्टर होना आसान नहीं है। पाँच साल का गंभीर अध्ययन है, फिर विशेषज्ञता की पढ़ाई है, तब कहीं जाकर कुछ दवा, तो कुछ आँख, तो कई कान नाक के 'एक्सपर्ट' बनते हैं। यों हमारे मोहल्ले में एक क्लीनिक है। उसके डॉक्टर साहब की ख्याति है। उनका यश है। उनके उपचार का हल्ला है। वह सिर्फ डॉक्टर हैं, पर प्रभु-कृपा से उनके···की धाक है। एक लड़का है, उसकी बहू है। वह दोनों विशेषज्ञ हैं, एक नाक-कान के, दूसरे पेट के रोगों के। प्रमुख डॉक्टर की पत्नी क्या करे? वह बिना पीएच.डी. करे, खान-पान की सलाहकार है। वह मरीजों को 'क्या खाएँ' का पाठ पढ़ाती है। वहाँ आए बीमार दवा-जाँच के बाद उनके पास पधारते हैं। 'किस रोग में क्या खाएँ' का ज्ञान प्राप्त करने। कुछ सफलता के लिए जन्म लेते हैं। शायद इस परिवार की किस्मत बुलंद है। सुबह से कतार लगकर पर्चियाँ बनती हैं। पर्चियाँ बनाने वाले से लेकर डॉक्टर तक पहुँचाने वाले तक व्यस्त हैं। न डॉक्टर को फुरसत है, न दूसरे कर्मचारियों को। फिर भी प्रतीक्षा का कक्ष भरा-का-भरा है। हमें कभी-कभी ताज्जुब होता है कि क्या इस देश में सिर्फ बीमार बसते हैं? लगता है कि डॉक्टर हैं तो बीमार हैं। अच्छे खासे स्वस्थ दिखनेवाले भी रोगी हैं, सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि डॉक्टर स्वस्थ हैं? क्या पता, वह भी किसी डॉक्टर की शरणागत हों?

यह तो डिग्री प्राप्त है। दूर-दराज के कई कंपाउंडर भी डॉक्टर बन बैठे हैं। वह रंग-बिरंगी दवाओं के धनी हैं। पूरे गाँव के स्वास्थ्य का जिम्मा-उठाएँ हैं। उनमें अनुमान लगाने की विलक्षण प्रतिभा है। कोई-न-कोई रंग की गोली देकर मरीज को चलता करते हैं। कमाल यह है कि वह स्वस्थ भी हो जाता है। वह नाम के 'एलोपैथ' हैं। यों उनके भंडार में होम्योपैथी से लेकर आयुर्वेद तक की दवाएँ हैं। वह मौके मूड और समय के अनुसार कुछ तो भी दवा देने में माहिर हैं। ऐसे खुद को डॉक्टर कहते हैं, उन पर पूरे गाँव का भरोसा है, आसपास के इलाके के लोगों का भी। ऐसे इस देश में सब राम भरोसे है तो इलाज क्यों न हो?

यों देश में पारिवारिक पेशों की कमी नहीं है। कुछ खानदानी नाई हैं तो कुछ जूता रिपेयर करने वाले तो कुछ मंत्र बुदबुदाने वाले पंडित, तो कुछ ज्योतिषी। पर ये सारे पेशे वकालत से लेकर डॉक्टर और हज्जाम तक सियासत के सम्मुख फीके हैं। सब में पढ़ाई या हुनर की दरकार है। बस एक पेशा या धंधा ऐसा है, जिसमें केवल जन्म की दुर्घटना ही महत्त्वपूर्ण है। वह है सफल सियासी परिवार में पैदा होना। यह एक ऐसी दुर्घटना है, जो उनको सत्ता, समृद्धि, प्रभाव देने में समर्थ है। भले ही ऐसों ने जीवन भर केवल सैर-सपाटा किया है। जनसेवा से इनका इतना ताल्लुक है जितना कौए का कोयल से, पर वह एक प्रजातांत्रिक वंशवाद के स्वाभाविक राजकुँवर हैं।

उनके चमचे उन्हें हर विषय का ज्ञानी बनाने में जुटे हैं। कौन कहे, उन्हें भी अपने बारे में यही भ्रम हो? वह रेल के कुली से लेकर कल्चर तक सब पर दूसरों का लिखा भाषण तक गलत-सलत पढ़ने को प्रस्तुत हैं। उनके हर झूठ के पर लगे हैं। वह उड़कर कहीं-से-कहीं जा सकता है। ऐसे भी उनके मुख से निकले हुए हर ब्रह्म वाक्य को पूरे देश में दोहराने वालों की विशाल तादाद है। यह खानदान के खैरख्वाह हैं। उसकी कृपा-दृष्टि पर ही पलते और जीते हैं।

सा अ

९/५, राणा प्रताप मार्ग,
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

इस अंक के चित्रकार

शैलेंद्र सरस्वती

सुपरिचित लेखक एवं चित्रकार। विगत ढाई दशकों से साहित्य की विविध विधाओं में लेखन तथा रचनाओं का प्रकाशन भी हुआ है। नाट्य लेखन, भ्रमण, रेखांकन में भी विशेष रुचि।

संपर्क : नारायणी निवास,
धरनीधर कॉलोनी,
बीकानेर-३३४००१ (राज.)
दूरभाष : ९११६७२७३३३

मन की बात : महिला सशक्तीकरण का नया आयाम

● हरीश चंद्र बर्णवाल

पत्रकारिता में २० वर्षों का अनुभव। ७ पुस्तकें और दुनिया की पहली vBook लिखी। 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार' तथा हिंदी अकादमी, इंडियन मेडिकल एसोसिएशन समेत दर्जनों पुरस्कारों से सम्मानित। इस समय ब्लूक्राफ्ट डिजिटल फाउंडेशन में वाइस प्रेसिडेंट।

प्रस्तावना : अर्थ और आशय

भारत ने अपनी अध्यक्षता में संपन्न जी-२० सम्मेलन में जिन छह केंद्रीय बिंदुओं को नामित किया, उनमें से एक बिंदु 'महिलाओं के नेतृत्व में विकास' भी है। इसका तात्पर्य है कि महिलाओं को विकास की सिर्फ लाभार्थी बनाने से उनका सशक्तीकरण संभव नहीं, बल्कि उन्हें सशक्त बनाने के लिए उनके नेतृत्व में विकास करना अनिवार्य है। महिला सशक्तीकरण का अर्थ और आशय निर्धारित करने के लिए सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं को ध्यान में रखना अनिवार्य है। महिला सशक्तीकरण का अर्थ महिलाओं के लिए समाज में समानता, स्वतंत्रता और सहभागिता का बराबर अधिकार सुनिश्चित करना है, ताकि वे स्वयं से सामर्थ्यवान बन सकें। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के मासिक रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' में महिलाओं को सशक्त और समर्थ बनाने जैसे विषयों को बहुत महत्त्व दिया गया है। वह चाहे उच्च शिक्षा और प्रशिक्षण हो या रोजगार, स्वास्थ्य और सुरक्षा के अधिकार का मामला हो या सामाजिक और राजनीतिक स्तर पर नेतृत्व प्रदान करना या फिर महिलाओं को संजीवनी प्रदान करने के लिए सांस्कृतिक परिवर्तन का समर्थन करना हो, इन सभी विषयों को मन की बात में प्रमुखता से उठाया गया है।

पृष्ठभूमि : शक्ति के केंद्र में सदैव नारी

आदिकाल से हमारा देश शस्त्र और शास्त्र के साथ शक्ति पूजक रहा है और शक्ति के केंद्र में सदैव नारी रही है। प्राचीन काल से ही हमारे देश में नारी का समाज में सम्मान, स्थान और योगदान अहम रहा है, जो पूरी दुनिया को अचंभित करता रहा है। वैदिक काल में वेदों में ऋचाओं की रचना हो या मध्य काल में विभिन्न साम्राज्यों की शासन शैली का विकास या फिर आधुनिक काल में विज्ञान, कला, संस्कृति और विधि-विधान का क्षेत्र, भारत की बहुत सी विदुषियों का इसमें योगदान रहा है। लोपामुद्रा, गार्गी, मैत्रेयी से लेकर, लक्ष्मीबाई और अहिल्याबाई होल्कर तक कई ऐसे नाम हैं, जिन्होंने अपने देश को दिशा दिखाने में अहम भूमिका निभाई है। आज प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अपने मासिक रेडियो कार्यक्रम के माध्यम से देश में 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान के तहत उसकी महत्ता और उपयोगिता स्थापित करने में लगे हैं। सदियों पहले हमारे शास्त्रों और पुराणों में नारी और उसकी शक्ति एवं माहात्म्य के बारे में बताया गया है। स्कंद पुराण में कहा गया है—

दशपुत्र, समाकन्या, दशपुत्रान प्रवर्धयन्।
यत् फलं लभतेमर्त्य, तत् लभ्यं कन्यकैकया॥

अर्थात् एक पुत्री दस पुत्रों के समतुल्य होती है। दस पुत्र के होने से जितना पुण्य और यश मिलता है, उतना ही पुण्य और यश एक कन्या यानि पुत्री की प्राप्ति से होता है। यह श्लोक आज भी हमारे समाज में नारी के महत्त्व को दरशाता है। यही नारी शक्ति पूरे देश को, सारे समाज को और परिवार को एकता के सूत्र में बाँधती है। हमारा देश सांस्कृतिक मूल्यों और संपन्न परंपराओं से समृद्ध रहा है, जहाँ नारी शक्ति का प्रमुख स्थान रहा है। लेकिन विदेशी शासनकाल में समाज में कई कुरीतियों व विकृतियों ने जन्म ले लिया। इन्हीं कुरीतियों के कारण ही हमारी महिलाओं का उत्पीड़न शुरू हुआ। देश के स्वतंत्र होने के साथ आए सामाजिक बदलाव से महिलाओं के उत्पीड़न और उनसे अत्याचार में कमी आई। समाज में उनका सम्मान तो बढ़ा, लेकिन उनकी दशा में जो सुधार होना चाहिए था, उसकी गति काफी धीमी रही। लेकिन आज प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सत्ता में आने के साथ न केवल स्थिति बदली, बल्कि महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए जो वातावरण चाहिए, उसमें भी गुणात्मक परिवर्तन आया। 'मन की बात' के माध्यम से देश और समाज में न केवल पहले की ही तरह महिलाओं का सम्मान और महत्ता बढ़ी है, बल्कि वह स्वयं भी सत्ता में सहायक और भागीदार बनने की ओर अपना कदम आगे बढ़ा चुकी हैं।

उद्देश्य : महिलाओं को सक्षम बनाना

'मन की बात' के माध्यम से 'महत्ता से सत्ता की ओर अग्रसर महिलाएँ' एक ऐसा विषय है, जो विभिन्न संस्थाओं, समुदायों, राज्यों और देश में महिलाओं के अधिकारों के बारे में सोचने को प्रेरित करता है।

इस शोध आलेख में हमने महत्ता से सत्ता की ओर महिलाओं का विस्तृत अध्ययन और विश्लेषण करने के साथ तथ्यात्मक रूप में विवेचना की है। सक्षमता एवं शक्ति की महत्ता अधिकार के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होती है, जबकि सत्ता राजनीतिक शक्ति के उपयोग से निर्धारित होती है। इसका अर्थ है कि महत्ता और सत्ता एक-दूसरे से बहुत गहराई से जुड़ी हुई है। यह भी सत्य है कि महिलाओं को समाज में समानता दिलाने के लिए महत्ता और सत्ता दोनों जरूरी हैं। मन की बात के माध्यम से देश में महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा और सुरक्षा के साथ उनकी महत्ता बढ़ाने पर बल दिया गया है। जिस प्रकार महत्ता मिलने से महिलाएँ सत्ता की ओर अग्रसर हुई हैं, वह अपने आप में एक शोध का विषय है। इस शोध आलेख का उद्देश्य कुछ ऐसे तथ्यों को सामने लाना है, जिनसे न केवल देश में महिलाओं की दशा और दिशा बदली है, बल्कि उनकी मनोवृत्ति में भी बदलाव आया है। देश में महिलाओं की सुरक्षा और महत्ता बढ़ने से वे सत्ता का नेतृत्व करने में सक्षम हुई हैं। आज भारतीय महिलाएँ काफी उत्साहित हैं और वे अपनी दूरदर्शिता, जीवंतता और प्रतिबद्धता से हर चुनौती का सामना करने के लिए तत्पर और सक्षम हैं। अनादि काल से मानवता की प्रेरणा रही महिलाओं की परंपरा एक बार फिर भारत में जीवंत हो उठी है, जिसका प्रेरक स्रोत प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का मासिक रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' बना है।

मन की बात की भूमिका

पी.एम. मोदी के मासिक रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' महिलाओं के सशक्तीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। इसके माध्यम से महिलाओं के मुद्दों, उनकी समस्याओं और उनके उत्कर्ष साझा किए गए हैं। इस कार्यक्रम के माध्यम से न सिर्फ महिलाओं को उनके अधिकारों के बारे में जागरूक किया जाता है, बल्कि उनके सशक्तीकरण से संबंधित मुद्दों पर भी विशेष ध्यान दिया गया है, वह चाहे महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक आत्मनिर्भरता का मामला हो या फिर उनकी उद्यमिता, सुरक्षा या भागीदारी का मामला क्यों न हो। इस कार्यक्रम के माध्यम से महिलाओं से जुड़ी विभिन्न सरकारी योजनाओं को उभारा गया है, जिनसे उन्हें आर्थिक आत्मनिर्भरता, उद्यमिता और शिक्षा के लिए ऋण की सुविधाएँ उपलब्ध हुई हैं। बेटियों की सुरक्षा और शिक्षा के लिए 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान को भी कार्यक्रम में प्रमुखता से जगह दी गई। मन की बात ने महिलाओं को सामाजिक और न्यायिक मुद्दों पर जागरूक करने का भी प्रयास किया। देश ने देखा है कि आज महिला सुरक्षा को कितना महत्त्व मिला हुआ है। महिला सशक्तीकरण को बढ़ाने के लिए नारी शक्ति केंद्र की स्थापना तक की गई है, जहाँ महिलाओं को संरक्षण, न्याय और आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। ऐसे कई विषयों को मन की बात में जोर-शोर से उठाया गया है।

महिला सशक्तीकरण का इतिहास

हमारे देश में महिलाओं के सशक्तीकरण का इतिहास अत्यंत पुराना है। समाज में महिलाओं के उत्थान और उनके सशक्तीकरण की अनेक पहल भी हुई हैं। जैसे शिक्षा के माध्यम से सशक्तीकरण। इसका आरंभ नाट्यशास्त्र से हुआ है। उस समय महिलाओं को विवाह के पूर्व और उसके उपरांत शिक्षा देने की व्यवस्था थी। इतनी बेहतर व्यवस्था के बाद भी सभी को शिक्षा मिलना संभव नहीं हो पाया। जब देश आजाद हुआ, तब लड़कियों और महिलाओं की शिक्षा पर बल दिया गया। लेकिन नीतिगत योजनाओं और उपयुक्त सुविधाओं के अभाव में मनोनुकूल सफलता नहीं मिल पाई। २०१४ में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सत्ता में आते ही लड़कियों और महिलाओं की शिक्षा पर बल देने के साथ ही उन्हें उपयुक्त सुविधाएँ उपलब्ध कराने की पहल की गई। पहली बार प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अपने मासिक रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' में महिलाओं के अधिकार को लेकर नितांत मौलिक विचार लेकर आए। उन्होंने महिला विकास की जगह महिलाओं के नेतृत्व में विकास की बात की। महिला सशक्तीकरण की जगह महिलाओं के नेतृत्व में सशक्तीकरण की बात की। 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' जैसे आंदोलन से लेकर कामकाजी महिलाओं तक, उन्होंने समग्रता में इससे संबंधित हर विषय को उठाया। इस विषय के महत्त्व का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कई एपिसोड में इस मुद्दे को उठाया। साल २०१५ में उन्होंने जहाँ जनवरी, अप्रैल, जून, अगस्त, सितंबर में इससे जुड़े विषयों को उठाया, वहीं २०१६ में जनवरी, अप्रैल, जून, जुलाई और अगस्त महीने में भी इस पर चर्चा की। २०१७ में उन्होंने फरवरी, मार्च, जुलाई, अगस्त, सितंबर और दिसंबर में, तो साल २०१८ में जनवरी, फरवरी, मई और अगस्त महीने में इस पर चर्चा की।

जून २०१५ में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने सेल्फी विथ डॉटर, यानी बेटी के साथ तस्वीर अभियान की चर्चा की। उन्होंने कहा कि जब सरकार का कार्यक्रम कोई समाज अपना लेता है तो उसकी ताकत कई गुना बढ़ जाती है। तभी तो 'मन की बात' से शुरू हुए 'सेल्फी विथ डॉटर' अभियान के साथ ही गैस सिलेंडर की सब्सिडी छोड़ने का अभियान एक मूक आंदोलन में बदल गया। इसी प्रकार अगस्त २०१५ के एपिसोड में उन्होंने तीन सुरक्षा बीमा योजनाओं की चर्चा की और सबसे आग्रह किया कि रक्षा बंधन में अपनी बहनों को ये योजना गिफ्ट करें। जनवरी २०१६ में उन्होंने हरियाणा और गुजरात में किए गए उस अनोखे प्रयोग की चर्चा की, जिसमें प्रत्येक गाँव के सरकारी स्कूल में २६ जनवरी के दिन सबसे पढ़ी-लिखी बेटियों से ध्वजारोहण कराने की बात कही गई थी। जून २०१६ में उन्होंने भारतीय वायु सेना में पहली बार महिला फाइटर पायलट के पहले बैच के शामिल होने की भी चर्चा की।

राजनीतिक सहभागिता

हमारे संविधान ने देश में महिलाओं की न सिर्फ राजनीतिक भागीदारी को सुनिश्चित किया है, बल्कि चुनाव में मतदान करने का अधिकार देकर उन्हें राजनीतिक रूप से सशक्त बनाना भी सुनिश्चित किया है। हालाँकि संविधान प्रदत्त अधिकार महिलाओं को भले ही पहले से मिला हो, लेकिन उसे वास्तविक रूप मोदी सरकार ने ही दिया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अपने मासिक रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' में जो कुछ कहते हैं,

उसे या तो जमीन पर पहले उतार चुके होते हैं या फिर उसे अमलीजामा पहनाने में लग जाते हैं। 'मन की बात' कार्यक्रम तो उनके प्रधानमंत्री बनने के बाद अक्तूबर २०१४ से शुरू हुआ और महिला सशक्तीकरण की बात को बाद में ही उठाया है, लेकिन उसके लिए जमीन पहले ही तैयार की जा चुकी थी। साल २०१४ में हुए लोकसभा चुनाव में इससे पहले हुए सभी चुनावों की तुलना में सबसे अधिक महिला सांसद चुनकर लोकसभा पहुँची। इतना ही नहीं, प्रधानमंत्री मोदी ने अपने मंत्रिमंडल में सबसे अधिक महिलाओं को मंत्री बनाया, जो एक रिकॉर्ड बना। २०१४ में सबसे अधिक ६६ महिलाएँ चुनाव जीतकर लोकसभा पहुँची थीं, जो उस समय तक सबसे अधिक संख्या थी। १७वीं लोकसभा के लिए वर्ष २०१९ में हुए आम चुनाव में सबसे अधिक ७८ महिला सदस्य चुनाव जीतकर लोकसभा पहुँचीं। इनमें से अकेले ४० सांसद भारतीय जनता पार्टी की हैं। लोकसभा चुनावों में प्रचंड जनादेश के साथ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में ६ महिला मंत्रियों ने शपथ ली। इतना ही नहीं, साल २०२० में पहली बार लोकसभा और राज्यसभा को मिलाकर महिला सांसदों की संख्या १०० के पार पहुँच गई। यह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' का प्रभाव भी है और प्रोत्साहन भी कि आज देश की महिलाओं का सिर्फ महत्त्व ही नहीं बढ़ा है, बल्कि सत्ता में हिस्सेदारी बढ़ी है, वह भी ग्रामपंचायत से लेकर पार्लियामेंट तक।

वर्ष	महिला सांसद	प्रतिशत
2004	45	8.29%
2009	59	10.87%
2014	66	12.15%
2019	78	14.6%

लोकसभा में महिलाओं की बढ़ती ताकत

हर क्षेत्र में सशक्त दस्तक : आज सिर्फ राजनीतिक क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि हर क्षेत्र में नारी शक्ति का दम दिख रहा है। रक्षा क्षेत्र की बात करें तो वर्तिका जोशी के नेतृत्व में भारतीय नौसेना के महिला क्रू सदस्यों वाली आई.एन.एस.वी. तारिणी पूरी दुनिया की परिक्रमा कर आई है। हमारे देश की तीन बहादुर बेटियाँ भावना कंठ, मोहना सिंह और अवनी चतुर्वेदी लड़ाकू विमान की पायलट बनी हैं और सुखोई-३० से प्रशिक्षण लिया है। क्षमता वाजपेयी की अगुआई में एयर इंडिया बोइंग जेट ने दिल्ली से अमेरिका के सैन फ्रांसिस्को और फिर वापस दिल्ली तक उड़ान भरी है। विशेष बात है कि उस क्रू में सभी महिला सदस्य शामिल हैं। आज हर क्षेत्र में नारी न केवल आगे बढ़ रही हैं, बल्कि आगे बढ़कर नेतृत्व भी कर रही हैं। आज जब देश में नारी शक्ति और उनकी महत्ता पर चर्चा हो रही है तो इस शक्ति का प्रतीक बने एक रेलवे स्टेशन का नाम आना सहज और स्वाभाविक है। मुंबई का 'माटुंगा' रेलवे स्टेशन एक ऐसा रेलवे स्टेशन है, जिसकी सारी जिम्मेदारी महिला कर्मचारियों ने अपने कंधे पर उठा रखी है। कहने का तात्पर्य है कि उस स्टेशन के सारे कर्मचारी महिलाएँ हैं। हमारी नारी शक्ति का नेतृत्व करना देश में उनके सशक्तीकरण और आत्मनिर्भरता का ही द्योतक है। छत्तीसगढ़ की हमारी आदिवासी नारी शक्ति ने देश के सामने एक नई तस्वीर बनाई है। वहाँ खतरनाक माने जाने वाले इलाके में भी आदिवासी महिलाएँ इ-रिक्शा चलाकर आत्मनिर्भर बन रही हैं। बहुत ही थोड़े कालखंड में कई सारी महिलाएँ इस प्रकार स्वरोजगार को अपनाकर न केवल स्वयं सशक्त बन रही हैं, बल्कि माओवाद-प्रभावित इलाकों की तस्वीर बदलने में भी सहायक बन रही हैं। वर्ष २०१४ में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सत्ता में आने के बाद सबसे बड़ा काम जो हुआ, वह यह कि जरूरतमंदों के साथ संवाद का मंच तैयार हुआ। प्रधानमंत्री के मासिक रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' ने सत्ता से सड़क के बीच संवाद स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उपसंहार : कई कुरीतियाँ बनी हुई हैं चुनौतियाँ

ऐसा नहीं है कि महिला सशक्तीकरण की राह की सारी चुनौतियाँ खत्म हो गई हैं। समाज में बाल-विवाह और बालिका भ्रूण हत्या तथा दहेज प्रथा जैसी कुरीतियाँ अभी भी हैं। कहने का तात्पर्य है कि बालिका भ्रूण हत्या हो या बाल-विवाह, महिलाओं के साथ असमानता हो या दहेज प्रथा, ये सारी कुरीतियाँ विकास की राह में चुनौतियाँ बनकर खड़ी हैं। समाज में महिलाओं की महत्ता बढ़ाने के साथ उन्हें सत्ता में सहभागी बनाने को लेकर 'मन की बात' की भूमिका प्रशंसनीय है। इस कार्यक्रम के माध्यम से सरकार पर निर्भरता को छोड़ उनके आत्मविकास और आत्मप्रयास पर बल दिया गया है। कालबाह्य को छोड़ समय के अनुरूप आवश्यक सुधार को स्वीकार करना हमारे समाज की विशेषता रही है। आत्मसुधार का सतत प्रयास, भारतीय परंपरा और हमारी संस्कृति हमें विरासत में मिली है। सदियों से हमारे देश में सामाजिक कुरीतियों और कुप्रथाओं के खिलाफ व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर पर कोशिशें होती रही हैं। 'मन की बात' कार्यक्रम भी इसी कड़ी का एक हिस्सा है। बिहार में बाल विवाह और भ्रूण हत्या जैसी सामाजिक कुरीतियों को जड़ से मिटाने के लिए दुनिया की सबसे लंबी मानव श्रृंखला बनाकर लोगों को जागरूक करने की एक रोचक पहल की गई। 'मन की बात' कार्यक्रम के तहत महिलाओं की महत्ता को प्रतिस्थापित करने का प्रयास होता है। महिलाएँ जब इन कुप्रथाओं से मुक्त होंगी, तभी तो वे स्वयं भी सशक्त होंगी और समाज को भी सशक्त कर पाएँगी।

सा अ

आई-५०२, हाय बर्ड, निहो स्कॉटिश गार्डन,
अहिंसा खंड-२, इंदिरापुरम्
गाजियाबाद-२०१०१४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८१०५७०८६२

कहानी

युवक, बेटा, पिता और वृद्ध

• रेनू सैनी

सुपरिचित साहित्यकार। 'दिशा देती कथाएँ' एवं 'बचपन का सफर'। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा चार बार नवोदित लेखन एवं अनेक बार आशुलेखन में पुरस्कृत, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों एवं आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाओं का प्रकाशन व प्रसारण।

या र राहुल, वह देख सामने से जो लड़की आ रही है, कितनी सुंदर लग रही है। चल उसका पीछा करते हैं। यह बोलकर अनुज मोटरसाइकिल से नीचे उतर गया। जैसे ही लड़की पास आई, दोनों उसके पीछे-पीछे चलने लगे। लड़कियों को प्रकृति ने छठी इंद्री प्रदान की है, जिससे वह पुरुष नजरों को तुरंत भाँप जाती है। अपने पीछे लड़कों को आता देख उसका दिल धक-धक करने लगा, लेकिन फिर भी बहादुरी से वह चलती रही। मेट्रो स्टेशन के अंदर घुसकर वह जल्दी से लेडीज कोच में घुस गई।

राहुल और अनुज दोनों हाथ मलते रह गए। राहुल तो सीटी बजाने ही वाला था, लेकिन उसकी सीटी बजने से पहले ही फुस्स हो गई। यह देखकर अनुज हँसते हुए बोला, "ये चिड़िया तो उड़ गई।" राहुल बोला, "कोई नहीं, दूसरी चिड़िया फँस जाएगी।" इस पर दोनों ने एक-दूसरे को देखकर ठहाका लगाया।

दोनों ही कॉलेज में पढ़ते थे। रात में घरवालों को झूठ बोलकर अकसर एक-दूसरे के घर पड़े रहते। रातभर उल्टी-सीधी फिल्में देखते और ठंडी आहें भरते। राहुल कहता, "यह युवावस्था भी अजीब है, ऐसा लगता है कि जैसे पूरा आसमान नाप लिया हो, सबकुछ मुट्ठी में कैद हो गया हो। सारे जमाने की ताकत बाजुओं में आ गई हो।"

"काश यह जीवन ऐसे ही चलता रहे। खाने-पीने को स्वादिष्ट भोजन मिलता रहे। ताड़ने को सुंदर-सुंदर लड़कियाँ दिखती रहें और रातभर मीठे-मीठे सपनों में खोए रहें। बस और क्या चाहिए?" यह बोलकर अनुज ने राहुल की ओर देखकर आँख मारी।

"वह सब तो ठीक है। लेकिन भाई, जीवन इसी का नाम नहीं है। कॉलेज का यह अंतिम साल है। इसके बाद क्या करना है, कुछ सोचा है?"

"क्या सोचना? मैं तो पिता का काराबोर ही सँभालूँगा। वह तो पहले ही कह चुके हैं कि कॉलेज टाइम मस्ती में बिता ले, उसके बाद तो तुझे ही सब सँभालना है।"

"मेरे पिता तो एक बैंक में सरकारी क्लर्क हैं। वे मुझे यही कहते हैं कि अभी से प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर एक अच्छी सी नौकरी प्राप्त कर ले। समय पर अच्छी नौकरी मिल जाएगी तो पूरे परिवार का जीवन सँवर जाएगा।"

"यार ये मिडिल क्लास माता-पिता बेचारे युवा लड़के पर इतना बोझ क्यों डाल देते हैं कि अगर वह सँवर गया तो पूरा परिवार सँवर जाएगा।"

"और करें भी क्या? महँगाई में गुजर-बसर करना कठिन भी है। ऐसे में वृद्ध होते माता-पिता अपनी संतान से ही आस लगाते हैं। वे जब उनकी पढ़ाई-लिखाई पर अपनी गाढ़ी कमाई लुटा देते हैं, तो फिर उनका ऐसा सोचना गलत भी कहाँ है?"

"हाँ, सही बात है। तूने क्या सोचा है?"

"सोचना क्या, मैंने कई प्रतियोगी परीक्षाओं के फॉर्म भर दिए हैं। थोड़ी-बहुत तैयारी भी कर रहा हूँ। गणित तो मेरा अच्छा है, बाकी विषय का भी अभ्यास कर रहा हूँ। एक-दो साल में कहीं-न-कहीं नौकरी लग ही जाएगी।"

दिन बीतते कौन सी देर लगती है, कॉलेज का समय भी बीत गया। दोनों मित्र पास हो गए। अनुज ने पिता का कारोबार सँभाल लिया। राहुल ने स्टॉफ सिलेक्शन कमीशन, कंबाइंड ग्रेजुएट लेवल की परीक्षा पास कर ली। उसका अस्टिटेंट ऑडिट ऑफिसर के पद पर चयन हो गया।

कुछ ही समय के अंतराल में दोनों के विवाह भी हो गए।

विवाह होने के बाद दोनों ही अपने घर-परिवार में रच-बस गए। जहाँ पहले दोनों रोज मिलते थे, वहीं ये मुलाकातें अब सप्ताह में बदल गईं। सप्ताह के बाद महीने में। एक साल के बाद राहुल के घर बेटी का जन्म हुआ और डेढ़ साल बाद अनुज के घर जुड़वाँ बच्चों ने जन्म लिया। राहुल ने अपनी बेटी का नाम देविका रखा। अनुज ने अपने बेटे का नाम शिवम और बेटी का आरवी रखा। दोनों ही मित्र पहले से भी अधिक व्यस्त हो गए। अब दोनों दो-तीन महीने में मिल पाते थे और फोन पर बातें भी सप्ताह या दस दिन में ही हो पाती थीं।

राहुल और अनुज काम में व्यस्त रहने के साथ-साथ बच्चों की परवरिश पर भी बराबर ध्यान दे रहे थे। दोनों ने अपने बच्चों के पहले

जन्मदिन बहुत धूमधाम से मनाए। फोन पर जहाँ पहले दोनों अपने काम और अपनी रुचियों की बातें करते थे, अब वे सब बातें बच्चों की रुचियों और शरारतों पर टिक गईं।

उन्नीस साल बीत गए। दोनों के बालों में सफेदी नजर आने लगी थी। राहुल और अनुज की बेटियाँ जब कॉलेज के लिए बाहर निकलतीं तो दोनों का हृदय मुँह को आ जाता था। समय को देखते हुए उन्हें बेटियों का अकेले बाहर निकलना खतरे से खाली न लगता था। वे बेटियों को समझाते थे कि सड़क पर सजगता के साथ चलो। कोई मजनू टाइप लड़का पीछे लगे या बदतमीजी करे तो उसे तमाचा मारने में देर न करो। जब वे ये बोलते तो उनके सामने अपने कॉलेज के समय के सीन घूमने लगते। किस तरह वे दोनों खूबसूरत सी लड़की को देखकर उसके पीछे लग जाते थे। अब जब वे अपनी बेटियों के बारे में ऐसा सोचते तो काँप जाते थे। उन्हें अपने कृत्यों पर शर्म महसूस होती थी।

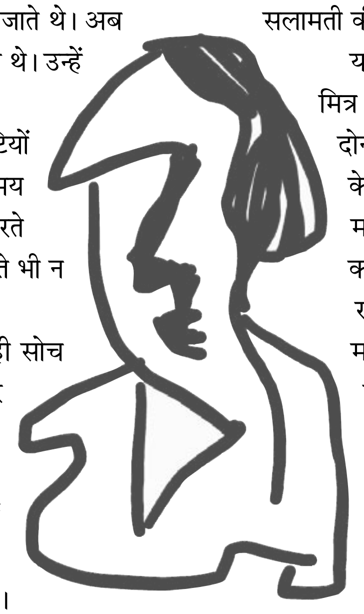

एक दिन राहुल अनुज से बोला, "यार, अपनी बेटियों की सुरक्षा की हमें कितनी ज्यादा चिंता रहती है? एक समय वह भी था, जब हम दूसरे की बहन-बेटियों का पीछा करते समय या उन पर फब्तियाँ कसते समय कभी ऐसा सोचते भी न थे। हम सदैव यही सोचते थे कि हमें क्या?"

"तूने मेरे मन की बात कह दी, राहुल। मैं भी यही सोच रहा था। हम दोनों अकसर दूसरे की बहन-बेटियों के बारे में कैसी अनर्गल बातें करते थे। तब हम कभी सोचते भी न थे कि उनके माता-पिता के दिल भी डर की भावना से ऐसे ही धड़कते होंगे, जैसे आज हमारे अपनी बेटियों के लिए धड़कते हैं।"

"उस समय तो मैं खुद को सुपरमैन समझता था। मुझे लगता था कि मर्द को दर्द नहीं होता। वह जो करे, सब सही होता है। गलती तो केवल लड़कियों और औरतों की होती है। उन्हें खुद को बचाकर रखना चाहिए। उन्हें छेड़ना और परेशान करना तो हम लड़कों का हक है।" राहुल बोला।

"अब वही धारणा अपनी-अपनी बेटियों के बाप बनने के बाद एकदम से बदल गई। अब वह सब कितना गलत लगता है न। उस समय हमारे कारण कितनी लड़कियों को लज्जा और अपमान का बोध हुआ होगा। लेकिन हमने कभी इस बात की परवाह ही न की।" अनुज ने जवाब दिया।

"मुझे लगता है कि वह उस वक्त की चढ़ती युवा उम्र का असर था। उम्र बढ़ने के साथ-साथ परिपक्वता आती है और फिर चीजों को सही तरह से देखने का नजरिया भी विकसित हो जाता है। अब देखो न, कल तक जो बातें हमें जीवन का सबसे सुंदर पड़ाव लगती थीं, आज वे बिल्कुल बकवास लगती हैं। तुम्हें पता है, अगर आज हम किसी युवा को ये कहेंगे न कि लड़कियों को ऐसे मत देखों, उनका सम्मान करो। बड़ों का आदर करो, तो युवक हमें कहेंगे कि हम बूढ़े हो गए हैं।" राहुल ने कहा।

"इसी को जनरेशन गैप कहते हैं मेरे यार। जब हमें हमारे माता-पिता यही सब समझाते थे, तो हम उनकी बातों को सुनकर मुँह बिदका देते थे। पर मैंने अपने बेटे को बचपन से यही समझाया है कि सदैव लड़कियों का सम्मान करो। हमारे समय में हमारे पिता हमसे मित्रवत् व्यवहार ही कहाँ करते थे? एक उचित दूरी सदैव बनी रहती थी।" अनुज बोला।

"पिता बनने के बाद मैं तो बहुत भावुक हो गया हूँ। कई बार आँसू आँखों से निकल पड़ते हैं। पत्नी-बेटी का दर्द बिल्कुल नहीं देखा जाता। आज लगता है कि यह बेकार की बात किसने बनाई होगी कि मर्द को दर्द नहीं होता, वह रोता नहीं। मेरे जैसे मर्द के मन से पूछे तो मैं यही कहूँगा कि एक मर्द जब पिता बन जाता है, तो उसका दिल बिल्कुल शीशे जैसा नाजुक हो जाता है। हर पल धक-धक करता रहता है। अपने बच्चों की सलामती की दुआ करता है।"

यह सुनकर अनुज बोला, "हम दोनों बचपन से गहरे मित्र रहे हैं। दोनों लगभग एक ही उम्र के हैं। एक ही समय दोनों के विवाह हुए। दोनों ने ही बेटा, युवक और पिता के पड़ाव को एक साथ पार किया और···इस बात को महसूस किया कि सबसे सुंदर पड़ाव एक बेटी के पिता का होता है।"

राहुल बोला, "बिल्कुल सही कहा तुमने। आज अपने वृद्ध माता-पिता को देखता हूँ तो एक बात और सोचता हूँ। जब हम वृद्ध हो जाएँगे, क्या तब हम भी अपने माता-पिता जैसे हो जाएँगे, जो एक ही बात को बार-बार पूछते हैं। छोटी-छोटी बात पर चिड़चिड़ करने लगते हैं।"

"हो सकता है। लेकिन मुझे लगता है कि यदि हम आशावादी रहेंगे और अपनी बातें एक-दूसरे से बाँटते रहेंगे तो शायद नकारात्मक भावों से बचे रहेंगे। आज लगता है कि वृद्धावस्था में वृद्ध लोगों को अपने जैसे लोगों का साथ मिलना बहुत जरूरी है। वृद्धावस्था का अकेलापन ही उनके अंदर नकारात्मक भाव और डर पैदा करता है।" अनुज ने कहा।

उसकी बातें सुनकर राहुल बोला, "आज तो मुझे ऐसा लग रहा है कि जीवन में कुछ भी नहीं किया। आधा जीवन ऐसे ही बीत गया। समय मुट्ठी में से रेत की भाँति निकलता चला जा रहा है। जबकि उन दिनों युवावस्था में लगता था कि छलाँग लगाते ही पूरा आसमान हमारा हो जाएगा।"

"हाँ राहुल, आज पूरा दिन हमने युवक, बेटा, पिता और वृद्ध के पड़ाव पर विमर्श करने में ही गुजार दिया। ऐसा लग रहा है, मानो हम दोनों दार्शनिक हो गए हों, जो जीवन के बारे में ऐसी बातें कर रहे हैं।"

यह सुनकर दोनों हँस पड़े। दोनों ही अपने अभी तक के रूपों के अनुभव बाँटकर दिल को हल्का कर चुके थे।

(सा अ)

३, डी.डी.ए फ्लैट्स,
खिड़की गाँव, मालवीय नगर,
नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ९९७११२५८५८

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी

● गोवर्धन दास बिन्नानी 'राजा बाबू'

अनेक प्रकार की विविधताओं से भरे हुए मेरे प्यारे भारत देश की संस्कृति बहुरंगी है, क्योंकि यहाँ हिंदू, मुसलमान, ईसाई, सिख, जैन, बौद्ध आदि विभिन्न संप्रदायों के लोग रहते ही नहीं, बल्कि वे सभी अपने-अपने धर्मों के अनुसार रीति-रिवाज, पहनावा, खान-पान और मान्यताओं के अनुसार व्यवहार करते हुए एक राष्ट्र के संविधान में आस्था रखते हैं। जिससे यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि भारतीयता हम सबमें विद्यमान है।

जैसा सभी प्रबुद्ध पाठक जानते हैं, जहाँ एक तरफ हम जनाधिक्य, अशिक्षा, बेरोजगारी, आतंकवाद और राजनीतिक तुष्टीकरण की समस्याओं से ग्रसित हैं, वहीं दूसरी ओर कुछ लोग हमारे संविधान का गलत लाभ उठाते हुए हमारी प्राचीन मान्यताओं और संस्कृति पर चोट-पर-चोट किए जा रहे हैं; आतंकवाद को राजनीतिक संरक्षण दिए जा रहे हैं। इसलिए हमारा यह दायित्व बनता है कि हम ऐसे लोगों की मानसिकता को उजागर करते रहने के साथ-साथ प्रजातांत्रिक स्वरूप को बनाए रखने के लिए अपनी सकारात्मक भूमिका अदा करते रहें। हमें ऐसा कोई भी काम नहीं करना है, जिसके चलते देश की छवि जरा सी भी धूमिल हो।

यह सर्वविदित है कि विश्व की आर्थिक ताकत के रूप में उभर रहा हमारा देश प्रगति के पथ पर अग्रसर है। मतलब भारत में विदेशी पूँजी निवेश बढ़ रहा है। देश इंफ्रास्ट्रक्चर और सेवा-सुविधाओं के मामले में आगे बढ़ रहा है। यह सब नागरिकों द्वारा चुकाए जाने वाले टैक्स से ही तो संभव हो रहा है। इसलिए जैसा हम हमेशा चर्चा में सुनते हैं कि हमारे यहाँ बेशुमार कालाधन है तो उस ओर भी हम सभी को सजग रहना है और घूसखोर लोगों का पर्दाफाश करते रहना है।

हम अवकाश प्राप्त लोगों का दायित्व है कि युवाओं को शिक्षित करें, ताकि हमारी सरकार ने बेरोजगारी दूर करने के लिए, यानी युवाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए जो-जो योजनाएँ चालू की हैं, उन योजनाओं की पूरी-पूरी और सही जानकारी उन्हें हो पाए।

इसी तरह हममें से जो भी शिक्षा क्षेत्र से अवकाश प्राप्त हैं, उन्हें अशिक्षा को दूर करने के लिए एक जिम्मेदार नागरिक की भूमिका निभाते हुए विद्यालयों में अपनी सेवाएँ देते हैं तो अशिक्षा को दूर करने में तो

'बिरला ग्रुप' से लेखाकार रहे, अब लेखनी से समाज की सेवा में जुटे हैं। उनकी रचनाएँ देश के मुख्य समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। वे सामाजिक, साहित्यिक और आर्थिक विषयों के साथ-साथ स्वास्थ्य संबंधी पक्षों पर सटीक, आँकड़ेवार लेखन करते रहे हैं। अपने सामाजिक योगदानों के लिए उन्हें समय-समय पर सम्मानित किया गया है।

उनकी भूमिका नमन योग्य होगी ही, साथ-ही-साथ उन्हें परोक्ष रूप से सक्रिय जीवन जीने का लाभ भी स्वत: ही प्राप्त होगा।

सरकार ने 'स्वच्छ भारत अभियान' शुरू किया हुआ है, जिसके तहत एक प्रचारक के रूप में इसका हिस्सा बनकर हम अपने साथियों को दैनिक कार्यों में से कुछ घंटे निकालकर भारत में स्वच्छता संबंधी कार्य करने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं, ताकि कचरामुक्त वातावरण बना पाएँ। देश में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए स्वच्छ भारत का निर्माण करना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसलिए आसपास की सफाई के अलावा सभी साथियों की सहभागिता से अधिक-से-अधिक पेड़ लगाना, शौचालय की सुविधा उपलब्ध कराकर एक स्वच्छ भारत का निर्माण करना है, क्योंकि अस्वच्छ भारत की तसवीरें भारतीयों के लिए अकसर शर्मिंदगी की वजह बन जाती हैं। इसलिए स्वच्छ भारत के निर्माण एवं देश की छवि सुधारने में हम सभी को एक सकारात्मक भूमिका निभाना पावन कर्तव्य है।

उपरोक्त के अलावा और भी ऐसे अनेक क्षेत्र हैं, जहाँ हमें अपनी सकारात्मक भूमिका, स्वयं की सुविधा, समय का ध्यान रख, निभाने का पूरा-पूरा प्रयत्न करते रहना है, ताकि हम हमारे देश को सच्चे अर्थों में एक महान् देश बनाने में अपना ज्यादा-से-ज्यादा योगदान दे सकें। यही तथ्य इस बार संपन्न हुए ओलंपिक खेलों में स्पष्ट परिलक्षित हुआ है, जब शानदार प्रदर्शन के पश्चात् पूर्व धावक अंजू बॉबी जॉर्ज के अलावा अन्य भूतपूर्व खिलाड़ियों ने सभी विजेताओं को बधाई देते हुए जो बयान जारी किए हैं, उन सभी का सार यही है कि आज के प्रधानमंत्री ने ओलंपिक में भागीदारी निभाने वाले प्रत्येक खिलाड़ी से समय-समय पर बात करके

उन सभी का जिस तरह से हौसला बढ़ाया, वह यही दरशाता है कि हमारी सरकार विश्व स्तरीय खिलाड़ी तैयार करने के लिए पूरी निष्ठा एवं ईमानदारी से संगठित एवं संचालित योजनाएँ एवं कार्यक्रम बनाकर खिलाड़ियों को प्रोत्साहित कर रही है। इस तरह न केवल खिलाड़ी, बल्कि अन्य लोग भी, जो खेलों से जुड़े हैं, वे अपना-अपना योगदान देश को गौरवान्वित करने में दे रहे हैं। इसी तरह जिनकी रुचि खेलों में है, वे खेलों को माध्यम बना देश को गौरवान्वित करने में अपना योगदान दे सकते हैं। याद रखें, सच्चे नागरिक को अपने देश से ही नहीं, बल्कि उससे जुड़ी हर वस्तु से प्यार होता है और उसके प्रति समर्पित भाव होता है।

न केवल खिलाड़ी, बल्कि अन्य लोग भी, जो खेलों से जुड़े हैं, वे अपना-अपना योगदान देश को गौरवान्वित करने में दे रहे हैं। इसी तरह जिनकी रुचि खेलों में है, वे खेलों को माध्यम बना देश को गौरवान्वित करने में अपना योगदान दे सकते हैं। याद रखें, सच्चे नागरिक को अपने देश से ही नहीं, बल्कि उससे जुड़ी हर वस्तु से प्यार होता है और उसके प्रति समर्पित भाव होता है।

उपरोक्त वर्णित भाव को ही गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने निम्न पंक्तियों के माध्यम से स्पष्ट बताया है कि जिन्हें अपने देश तथा अपनी जन्मभूमि से प्यार नहीं है, उनमें सच्ची मानवीय संवेदनाएँ नहीं हो सकतीं—

"जो भरा नहीं है भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
हृदय नहीं वह पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं॥"

उपरोक्त सभी को मद्देनजर रखते हुए आप सभी को याद दिलाना चाहता हूँ कि हमारा देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था, तब ऐसे अनेक लोग थे, जिन्होंने आजादी दिलाने के लिए अपने प्राण तक न्योछावर कर दिए थे। इसलिए हमें भी अपनी मातृभूमि के लिए कुछ भी कर गुजरने की तमन्ना रखनी चाहिए, क्योंकि अच्छे, ईमानदार व कर्मठ नागरिक ही देश को शक्ति-संपन्न, समृद्ध व संगठित बनाते हैं। याद रखें, एक आदर्श नागरिक स्वेच्छा से अनुशासन का पालन ही नहीं करता है, बल्कि वह देश के कायदों व कानूनों का पूरी-पूरी निष्ठा से निर्वहन भी करता है। कानून को बनाए रखने में सरकार की सहायता करता है। हमें बिना स्वार्थी हुए राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों को समझना चाहिए, क्योंकि यह हम नहीं, अन्य लोग हैं, जो पीड़ित और लाभार्थी दोनों हैं।

अंत में आप सभी के ध्यानार्थ त्रेतायुग वाला श्लोक, जो आज भी बहुत ही प्रासंगिक है, क्योंकि यह हमें याद दिलाता है कि माता (जननी) और मातृभूमि का स्थान स्वर्ग से भी ऊपर है। इसलिए हम सभी का मातृभूमि के लिए वह सब करना हमारा कर्तव्य बनता है, जो हम अपनी जननी के लिए करते हैं। वह श्लोक इस प्रकार है—"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"

जय नारायण व्यास कॉलोनी, बीकानेर
दूरभाष : ९८२९१२९०११

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

अपना-पराया

● उर्मिला साध

नवोदित लेखिका। एम.ए. हिंदी प्रथम श्रेणी। नेट, स्लेट, पीएच.डी. शोधकार्यरत (एम.ए. लोकप्रशासन, एम.एससी. कंप्यूटर साइंस, दर्शनशास्त्र तथा एम.एड.)। शैक्षिक अनुभव पाँच वर्ष (स्नातक एवं स्नातकोत्तर)। राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर की कई संगोष्ठियों में सहभागिता व पत्रवाचन। संप्रति व्याख्याता हिंदी, महाराज विनायक ग्लोबल यूनिवर्सिटी कुकस, जयपुर।

जीवन कोई सीधी सरल रेखा नहीं है, जिसे आसानी से समझा जा सके। हम इसके किसी भी सिरे को पकड़ें, वह किधर ले जाएगा, इसे समझना मुश्किल है। हमने इसे रिश्तों में बाँधा है और रिश्तों को बनाए रखने का प्रयास करते रहते हैं। पर जरूरी नहीं कि हर रिश्ता हमारी कसौटी पर खरा उतर जाए। अब देखिए, जब किसी माता-पिता के जीवन में किसी नवजात का प्रवेश होता है तो माता-पिता की खुशी की गहराई को नापना अत्यंत कठिन होता है। इस खुशी का वर्णन न तो माँ कर सकती है न पिता। बस एक अनिर्वच खुशी है, जिसे परिभाषित करना अत्यंत कठिन है।

जब मेरा जन्म हुआ होगा तो मेरे माता-पिता इसी अनिर्वच खुशी से गुजरे होंगे। कितने नाजों से मुझे पाला होगा। शायद ही उनके मन में कभी विचार आया हो कि अगर पुत्री की जगह पुत्र पैदा होता तो यह खुशी और बढ़ गई होती। ना···ना···ऐसा खयाल शायद ही दोनों में से किसी के मन में आया हो।

उन लोगों ने मुझे कितनी हसरतों से पाला, पिता ने मुझे कितना प्यार किया, बयान नहीं किया जा सकता। मुझे कभी लगा ही नहीं कि मेरे माता-पिता दो अलग-अलग व्यक्तित्व हैं। अब तो मैं दो बच्चों की माँ हूँ, पर समय कैसे बीत गया, पता ही नहीं चला। उल्लास और उत्सव के साथ मुझे वधू बनाकर घर से विदा किया। वे मेरी हर खुशी पर न्योछावर होते रहे।

पर समय सदा एक सा तो नहीं रहता, आज मैं दोनों बच्चों को लेकर पिता के घर आई हूँ।

यह खबर सुनकर कि पिता नहीं रहे, मैं विश्वास ही नहीं कर पाई। पति को भी गहरा धक्का लगा। उन्होंने मेरी पीड़ा को समझा और मुझे तुरंत पीहर भेजने की व्यवस्था कर दी। मुझे ढाढ़स बँधाया, 'तुम पहुँचो, मैं कुछ काम निपटाकर पीछे-पीछे आता हूँ' और वह दूसरे दिन ही ससुराल पहुँच गए। वे उस घर के दामाद थे और पुत्र भी। घर का सारा काम उन्होंने सँभाल लिया।

आज मेरे सामने पिता की अर्थी रखी थी। क्या हुआ जो मैं खुद दो बच्चों की माँ बन गई, पर पिता के लिए तो उनकी लाड़ली बेटी ही थी। मेरी हर परिस्थिति में वे दीवार की तरह खड़े रहे। क्या समाज, क्या रिश्तेदार, उनके लिए तो मुझसे बढ़कर कुछ नहीं रहा। अपनी हैसियत से आगे जाकर मुझे उच्च शिक्षा-दीक्षा दिलाई। उन्होंने अपनी लाड़ली के हाथ योग्य वर चुनकर पीले कर दिए। नए घर, नए लोगों और अनेक समस्याओं को जब भी उनके सामने रखती, वे बड़े प्यार और धैर्य से मुझे समझाते।

शायद मेरे करीब वे माँ से भी अधिक थे। पर जैसे-जैसे समय बीतता गया, धीरे-धीरे शिकायतें कम होने लगीं। शायद मैं 'शादी कैसे निभानी है' सीख गई थी और अपने घर से अलग भी हो गई थी। आज विवाह के तेरह वर्ष बाद उस अर्थी के सामने जैसे मेरा पूरा बचपन नाच उठा। हर बात मुझे रह-रहकर याद आ रही थी। यह वही आँगन था, जिससे मेरी डोली उठी थी और आज पिता की अरथी···

चारों ओर मातम छाया है। सभी दु:खी और अवसाद में हैं। धीरे-धीरे सारे संस्कार हो गए। पति ने बेटे का अभाव महसूस ही नहीं होने दिया। फिर भी माँ ने धीरे से मुझे बोल ही दिया, "जँवाई सा का ध्यान रखना, क्या कर रहे हैं,···उन्हें कोई दिक्कत न हो।" मैं आश्चर्य में थी कि इस वक्त भी उन्हें दामाद

का खयाल आ रहा है। सिर को हाँ में हिलाकर मैं आगे बढ़ गई। बड़ी मुश्किल रात थी वह मेरे लिए, पूरी रात जैसे आँखों में ही कट गई। अगले दिन सिर और बदन दोनों भारी-भारी थे, पूरा दिन आध्यात्मिक औपचारिकताओं में ही बीता, इन्हें सम्मान के अनुसार घर में सुविधा संपन्न और एसी लगा रूम दिया गया। बाकी लोगों ने समयानुसार हिसाब बिठा लिया।

पूरे दिन की थकी, रात को जब मैं उन्हें कमरे में चादर देने गई तो उन्होंने मुझे अपनी ओर खींचा। इस अप्रत्याशित व्यवहार से मैं थोड़ी चौंक गई। तभी उन्होंने धीरे से कहा, "अरे, इधर आओ, मैं तुम्हारे सिर को दबा देता हूँ, आराम मिलेगा।" मैं उनके पास चली गई, पर कुछ देर सिर दबाने के बाद उनके हाथ कुछ और दबाने के लिए आगे बढ़े, तो मैंने कहा, "आप ये क्या कर रहे हैं। यह समय इन बातों का है? थोड़ी सी लाज करो, अभी-अभी मैंने अपने पिता को खोया है।" पर न रुकने के इरादे से वे बोले, "अरे, क्या हो गया, जिसको जाना था, वह तो जा चुका है। किसी के चले जाने से कौन से काम रुकते हैं। सबकुछ तो करना ही होता है। विधि के विधान को भला कौन रोक सकता है। तुम तो बिना बात भड़क जाती हो। मैं यह सब तुम्हारे लिए ही तो कर रहा हूँ। तुम्हें अच्छा लगेगा, मन बहल जाएगा।"

पति ने बाहर आकर सबके सामने यह बात बताई और मुझे गालियाँ देते रहे। उनके साथ-साथ परिवार वालों ने भी मुझे 'कुलटा, बदचलन, अय्याश औरत न जाने किन-किन उपाधियों से नवाजा। मुझे छह माह पहले की घटना याद आई। जब मेरे पिता का देहांत हुआ था और मेरे पति ने मेरा मन हल्का किया था। इस दिन यदि मैं बाहर जाकर ये बातें सबको बोलती तो क्या कोई उन्हें आवारा, बदचलन और अय्याश आदमी कहता? क्या मेरा हाथ उठता तो सही होता? क्या मेरा बाप मेरा नहीं था? पर जानती हूँ, सब मुझे ही समझाते और पति पर लांछन न लगाते।

मैं बात को बढ़ाने का मतलब जानती थी और यह भी जानती थी कि मुझे क्या-क्या सुनना पड़ेगा इनकी बात न सुनने पर और अचानक मैं यंत्रवत् उनकी सारी बातें मानती गई और अपने पत्नीधर्म को निभा गई। भले मेरा उल्लास उतनी उद्दामता तक न पहुँच पाया हो।

कुछ दिन पीहर में रुककर मैं अपनी ससुराल लौट आई। समय ने धीरे-धीर जैसे सारे घाव भरने में ही खपा दिए। माँ की चिंता मुझे बनी रहती थी। पर जीवन तो किसी के लिए ठहरता नहीं। एक रात अचानक तबीयत खराब होने पर ससुरजी को लेकर अस्पताल भागना पड़ा। परंतु उन्होंने वहाँ पहुँचने से पहले ही दम तोड़ दिया। सभी औपचारिकताओं के बाद हम उन्हें घर ले आए। घर में बस चारों ओर मातम पसरा हुआ था। सबका रो-रोकर बुरा हाल था। पूरा दिन बिना खाए-पिए ही बीता और अगले दिन चार बजे तक अन्न का एक दाना भी किसी के पेट में नहीं गया। जैसे ही मैं थोड़े चावल कटोरी में डालकर खाने बैठी, तो सास ने टोक दिया, "हाँ, हाँ, तेरा बाप थोड़ी मरा है। जिसका मरा है, वो ही रोएगा, सही है खाओ, मजे से खाओ, मौज उड़ाओ मौज···"

कटोरी मेरे हाथ से छूट गई। मैं सोच में डूब गई। जब मेरी माँ मेहमान को तकलीफ न हो, इस सोच से ऊपर न आ पाई थी, तो क्या मैं इस घर की मेहमान नहीं थी। मेहमान राजस्थान में दामाद के लिए प्रयुक्त होता है। तीसरी रात जब मैंने अपने पति के पैर दबाते हुए उनसे थोड़ा चिपकते हुए आगे बढ़ने की कोशिश की तो वे अचानक मुझ पर उबल पड़े, बोले, "यह क्या बदतमीजी है, रेणु। तुम में थोड़ी भी शर्म नहीं है। अभी-अभी तुम्हारे पिता समान ससुर का देहांत हुआ है और तुम छी-छी···।" मुझसे तो बोला भी नहीं जा रहा था। वह उबलते हुए बोले, "तुम तो स्त्री के नाम पर कलंक हो कलंक।" मैंने उन्हें चुप रहने का इशारा करते हुए बड़े धीरे से कहा, "अरे, मैं तो बस आपका मन बहलाने···" "चुप रहो बदजुबान। मेरा बाप मरा है। आज से सारी दुनिया मुझे तो अनाथ ही समझेगी और तू चाहती है कि मैं तेरी प्यास बुझाऊँ, ले अभी बुझाता हूँ।" इतना बोलने के साथ ही उन्होंने मेरे गाल पर थप्पड़ जड़ दिया और मैं जड़ हो गई।

पति ने बाहर आकर सबके सामने यह बात बताई और मुझे गालियाँ देते रहे। उनके साथ-साथ परिवार वालों ने भी मुझे 'कुलटा, बदचलन, अय्याश औरत न जाने किन-किन उपाधियों से नवाजा। मुझे छह माह पहले की घटना याद आई। जब मेरे पिता का देहांत हुआ था और मेरे पति ने मेरा मन हल्का किया था। इस दिन यदि मैं बाहर जाकर ये बातें सबको बोलती तो क्या कोई उन्हें आवारा, बदचलन और अय्याश आदमी कहता? क्या मेरा हाथ उठता तो सही होता? क्या मेरा बाप मेरा नहीं था? पर जानती हूँ, सब मुझे ही समझाते और पति पर लांछन न लगाते।

इन सवालों का जवाब खोजते-खोजते मैं इस बिंदु पर आ खड़ी हुई, जहाँ न मेरा घर मेरा था, न जिसे 'तेरा घर हो तब करना' वाला घर मुझे मिला। मिला तो सिर्फ यह सुनने को मिला कि 'निकालो ऐसी कुलटा को, जब दो बच्चों को बिना बाप के पालेगी तो सारी अक्ल ठिकाने आएगी। बड़ी आई, चुड़ैल कहीं की।'

'कहीं की', मैं भी नहीं जानती कहाँ की? जहाँ जन्म लिया, वह घर मेरा नहीं, जहाँ परण किया, वह घर भी मेरा नहीं, पर जहाँ मरण होगा, वह सिर्फ मेरा ही घर होगा।' पर वह कहाँ है? उसी घर की खोज में आत्मविश्वास के साथ मैं अपने सामान और बच्चों के साथ उस घर से निकल गई। सामने गहरा अंधकार था, पर मैं अपना मार्ग जानती थी।

२६, माधव नगर,
दुर्गापुरा रेलवे स्टेशन के सामने,
महारानी फार्म, जयपुर-३०२०१८
दूरभाष : ९६१०३३६९९९

विश्व-पटल पर अटल हिंदी

• रूबी जुत्शी • मुदस्सिर अहमद भट्ट

'शिवानी के कथा-साहित्य का मूल्यांकन' विषय पर पीएच.डी. की उपाधि। 'मनु भंडारी के कहानी साहित्य का मनोवैज्ञानिक अध्ययन' विषय पर एम.फिल.। वर्तमान में वरिष्ठ आचार्य तथा विभागाध्यक्षा। हिंदी-अंग्रेजी कोश का निर्माण किया। दो पुस्तकें तथा ५० से अधिक शोध-आलेख विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित।

'श्रीलाल शुक्ल तथा अमृतलाल नागर के चनायित उपन्यासों में निरूपित समस्याओं का तुलनात्मक विश्लेषण' विषय पर पीएच.डी. तथा 'नागपर्व' उपन्यास में सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण पर एम.फिल.। अभी तक ३० शोध-आलेख, संपादित पुस्तकें, आलोचनात्मक पुस्तक तथा कविता-संग्रह प्रकाशित।

वैश्वीकरण और भौतिकवादी युग में संपूर्ण विश्व एक मुट्ठी में आ गया है। संचार व प्रसार के इतने उत्तम साधन उपलब्ध हैं, जिनकी सहायता से हम कभी भी, कहीं भी तथा किसी से भी तत्काल संपर्क स्थापित कर सकते हैं। यह संपर्क भाषा के माध्यम से ही अधिकांश रूप में साधा जाता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने क्या खूब कहा है—'चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वानी। यह आज भी चरितार्थ हो रहा है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में भाषा की अत्यधिक उपादेयता है। फिर चाहे व्यापार करने के लिए, संप्रेषण के लिए, भावों की अभिव्यक्ति के लिए आवश्यकतानुसार भाषा अपेक्षित होती है। वास्तव में भिन्न-भिन्न परिस्थितियों एवं परिवेश के अनुसार ही भाषा का चयन किया जाता है। वर्तमान भौतिकवादी सभ्यता एवं उपभोक्तावादी परिवेश में वस्तुओं तथा माल की बिक्री और उनके प्रचार के लिए अपनाए जाने वाले साधनों में भी भाषा की सर्वोपरि भूमिका रहती है। अंतरराष्ट्रीय भाषा के साथ-साथ स्थानीय भाषाओं का उपयोग भी किया जीता है। राष्ट्रीय तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने माल की बिक्री के लिए हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को उपयोग में लाती हैं।

सर्वविदित है कि हिंदी भाषा का जन्म संस्कृत से हुआ, अत: अनेक भाषाविद् हिंदी को आर्य भाषा की उत्तराधिकारिणी मानते हैं। संस्कृत से होते हुए पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश, अवहट्ट तक सफर तय करने के बाद आधुनिक काल में हिंदी ऐसे शिखर पर विराजमान है, जहाँ विश्व की अनेक भाषाएँ पहुँचने में असमर्थ है। हिंदी शब्द मूलत: 'सिंधी' शब्द से बना है। प्राचीनकाल में ईरानियों द्वारा 'स' की जगह 'ह' और 'ध' की जगह 'द' का उच्चारण किया जाता था, इसलिए 'सिंधी' इनके लिए 'हिंदी' बन गई।

वस्तुत: विश्वभाषा से अभिप्राय एक ऐसी भाषा से है, जो अपने भौगोलिक क्षेत्र से विस्तृत होकर आगे बढ़ चुकी हो। आज विश्व में भारत ने अपनी पहचान बना ली है। भारत एक स्वतंत्र जनतांत्रिक राष्ट्र है। सार्क परिषद् का प्रणेता और संस्कृति की दृष्टि से भी वह विश्व का पथ-प्रदर्शक है। विश्व के अधिकांश राष्ट्रों में हिंदी भाषा के महत्त्व को समझते हुए इसके अध्ययन-अध्यापन को प्रमुखता दी। रोजगार के लिए भारतवासियों के पश्चिम के राष्ट्रों में जाने से भी हिंदी का दायरा निर्मित हुआ।

भारत देश की राष्ट्रीय भाषा हिंदी का प्रचार एवं प्रसार करने में प्रवासी भारतीयों की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण है। प्रवासी भारतीय हिंदी को अपनी अस्मिता का प्रतीक मानते हैं। आर्य, द्रविड, आदिवासी, स्पेनी, पुर्तगाली, जर्मन, फ्रेंच, अंग्रेजी, अरबी, फारसी, चीनी, जापानी संपूर्ण संसार की भाषाओं के शब्द इसकी अंतरराष्ट्रीय मैत्री एवं 'वसुधैव कुटुंबकम्' वाली प्रवृत्ति को उजागर करते हैं।

वस्तुत: विश्वभाषा तो विश्व की प्रत्येक भाषा को कहा जा सकता है, जिसके प्रयोक्ता एकाधिक देशों में बसे हुए हैं, किंतु विश्वभाषा पद की वास्तविक अधिकारिणी वे भाषाएँ हैं, जो विश्व के अधिकतर देशों में पढ़ी, लिखी, बोली, सुनी और समझी जाती हैं। उसमें कुछ गुण निहित होने चाहिए, जैसे—उस भाषा को बोलने वालों में व्यापकता, जो देश और दुनिया के बीच संवाद तथा संचार का माध्यम बन सके। दूसरा, जो भाषा ज्ञान-विज्ञान के विविध आयामों को अभिव्यक्त करने की क्षमता रखती हो। वस्तुत: प्रत्येक विश्व भाषा के प्रमुख कार्य होते हैं—बोलचाल एवं जनसंपर्क, साहित्य सृजन, शिक्षा एवं जनसंचार माध्यम, प्रशासनिक कामकाज, व्यावसायिक और तकनीकी अनुप्रयोग तथा विश्वबोध या वैश्विक चेतना। हिंदी भाषा इन सब कार्यों में सक्षम है।

कुछ विद्वानों का मानना है कि विश्व में हिंदी भाषा के प्रणेता अंग्रेज थे। तत्कालीन समय में आर्थिक स्थिति को मजबूत करने हेतु अंग्रेज अपने अधीनस्थ उपनिवेश जैसे फिजी, त्रिनिदाद तथा अन्य क्षेत्रों में उत्तर प्रदेश व बिहार आदि हिंदीभाषी क्षेत्रों से मजदूरों को ले जाते थे, जिससे उनके साथ-साथ हिंदी भाषा को भी एक नवीन दिशा मिलती चली गई। ये लोग

अपने साथ अपनी भाषा और अपनी संस्कृति को आत्मसात् करते हुए विदेशों में उसे प्रचारित करते हैं।

डॉ. सुकुमार भंडारे हिंदी के वैश्वीकरण के संदर्भ में लिखते हैं कि "हिंदी विश्व में तीन सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में परिगणित है। डॉ. जयंतीप्रसाद नौटियाल के वर्ष २००५ के 'भाषा शोध रिपोर्ट' के अनुसार विश्व में हिंदी जानने वालों की संख्या १,१०,२९,९६,४४७ है।" आज हिंदी भारत के बाहर—भूटान, मलेशिया, नेपाल, सिंगापुर, फीजी, हांगकांग, थाईलैंड, सूरीनाम, मॉरीशस, इंग्लैंड, कनाडा और अमेरिका आदि देशों में प्रचुर मात्रा में प्रयोग में लाई जाती है। वास्तव में विश्व की जनसंख्या में चीनी के बाद सर्वाधिक संख्या में बोली व समझी जाने वाली यदि कोई भाषा है तो वह है हिंदी।

हिंदी सही अर्थों में सौहार्द, समन्वय, सहिष्णुता तथा व्यापकता की विश्वभाषा बनी है। मॉरीशस देश में भारतीय लोगों का जाना सन् १७३६ से प्रारंभ हुआ था। रोजगार हेतु भारतवासी यहाँ आकर बसे। मॉरीशस में भोजपुरी, हिंदी बोलने वाले लोग अधिक अनुपात में गए। वहाँ की मूल भाषा क्रियोली है तथा फ्रेंच का प्रभाव भी उस देश पर है। इसलिए यहाँ की भोजपुरी क्रियोली तथा फ्रेंच का प्रभाव भी इस देश पर है। मॉरीशस में हिंदी लेखकों के दो वर्ग हैं—एक भारतीय लेखक, जैसे पंडित आत्माराम विश्वनाथ, नरसिंहदास, पंडित रामअवध शर्मा। दूसरे वर्ग के लेखक मॉरीशस के मूल निवासी हैं, जिनमें पंडित काशीराम किस्टो, प्रोफेसर वासुदेव विष्णुदयाल, रामदेव अभिमन्यु अनत प्रमुख हैं। सन् १९८१ में मॉरीशस की प्रसिद्ध लेखिका भानुमवी ने अपने एक पत्र में लिखा था—"इन दिनों मॉरीशस में हिंदी का स्तर काफी नीचे चला गया है, इसे अपने स्थान पर कुछ हद तक पुन: लाने के लिए हम परिषदों में आंदोलन चलाने का प्रयास कर रहे हैं।" इसी के चलते सन् १९६१ में 'मॉरीशस हिंदी लेखक संघ' की स्थापना हुई थी। सन् २००१ में यहाँ 'विश्व हिंदी सचिवालय' की स्थापना भी हुई। आज परिस्थितयाँ विपरीत हैं और हिंदी के बढ़ते कदमों को यहाँ गति मिली है। डॉ. चिंतामणि, पह्लाद रामशरण, डॉ. ठाकुरदत्त पांडेय, डॉ. उदय नारायण गंगू ने भारत में आकर शिक्षा ग्रहण की और अनुसंधान कार्य किया है।

फिजी देश में तीन लाख से अधिक हिंदी भाषा-भाषी लोग रहते हैं। 'फिजी भारत से हजारों मील दूर एक छोटा भारत है, जहाँ कुछ वर्ष पहले तक वहाँ की जनसंख्या में आधे से अधिक भारतीय थे। इस देश में ७० प्रतिशत से अधिक जनता हिंदी भाषा बोलती और समझती है।' यहाँ की हिंदी में भोजपरी, अवधी तथा अंग्रेजी के शब्द मिलते हैं। कमलापभाठ मिश्र एवं डॉ. विवेकानंद शर्मा फिजी के प्रमुख हिंदी लेखक हैं। जोगिंदर सिंह को फिजी का प्रेमचंद कहा जाता है।

सूरीनाम दक्षिण अमेरिका का एक छोटा देश है। चार लाख लोगों की जनसंख्या वाले देश की आधी आबादी हिंदू है, जो हिंदी भाषी है। ये लोग अधिकांशत: भोजपुरी के थे। सूरीनाम की राष्ट्रभाषा डच है, इसलिए यहाँ की हिंदी पर भोजपुरी के साथ डच का पर्याप्त प्रभाव देखा जा सकता है। सूरीनाम में हिंदी के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान देने वालों में प्रमुख हस्ताक्षर हैं—डॉ. ज्ञान अधीन, डॉ. उमादत्त शर्मा 'सतीश', जानकी प्रसाद सिंह, शेर बहादुर झा इत्यादि।

त्रिनिदाद देश में हिंदी की कई पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। हरिशंकर आदेश, निर्मला आदेश, लक्ष्मीनारायणा शर्मा, कुमार सत्यकेतु यहाँ के प्रमुख हिंदी लेखक हैं। हरिशंकर आदेश को हिंदी सेवा हेतु विश्व हिंदी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। गयाना द्वीप में हिंदी को 'टूटल' भाषा कहते हैं। यहाँ के.एल. मामनानी हिंदी के सुप्रसिद्ध लेखक हैं। अमर ज्योति, ज्ञानदा आदि पत्र-पत्रिकाएँ हिंदी में गयाना से प्रकाशित होती हैं।

दक्षिण अफ्रीका, विशेषकर नाटाल में भवानी दयाल संन्यासी ने आर्यसमाज के माध्यम से हिंदी के प्रचार-प्रसार का कार्य किया। सन् १९१६ में उन्होंने हिंदी साहित्य सम्मेलन का आयोजन 'लेडी स्मिथ' नगर में किया तथा 'हिंदी' नाम से साप्ताहिक पत्र भी निकाला।

लंदन और कैंब्रिज विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन-अध्यापन एवं अनुसंधान की अच्छी व्यवस्था की गई है। अमेरिका के लगभग ३० विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन हो रहा है। अमेरिका से हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं तथा आकाशवाणी से भी कई हिंदी कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। वास्तव में कनाडा में हिंदी का प्रचार प्रवासी भारतीयों के द्वारा हुआ है। यहाँ के विश्वविद्यालयों में भी हिंदी पठन-पाठन का कार्य होता है। 'भारती', 'हिंदी संवाद' नामक हिंदी पत्रिकाएँ कनाडा से प्रकाशित होती हैं।

वर्तमान समय में चीन भारत को गौरव की दृष्टि से देखता है। बीजिंग के रेडियो से हिंदी प्रसारण चलते हैं और यहाँ के विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग भी है। ल्यूकोनान यहाँ से जुड़े हैं, इन्होंने 'मैला आँचल' का हिंदी अनुवाद किया है। प्रो. रुइलिन चीन के पहले हिंदी विद्यार्थी हैं। प्रो. जिनडीगहॉन ने प्रेमचंद के 'निर्मला' उपन्यास और गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरितमानस' का पद्यानुवाद चीनी भाषा में किया है। इनके साथ ही जर्मनी, फ्रांस, रूस, हंगरी, पोलैंड, जापान में भी हिंदी का प्रचार-प्रसार, अनुसंधान कार्य व्यापक पैमाने पर हो रहा है।

विश्व में हिंदी का विकास और इसे प्रचारित-प्रसारित करने के उद्देश्य से विश्व हिंदी सम्मेलनों की शुरुआत की गई। १० जनवरी, १९७५ को नागपुर में प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया, जिसकी पहल तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने की थी। प्रारंभ में इसका आयोजन हर चौथे वर्ष में किया जाता था, लेकिन अब यह अंतराल घटाकर तीन वर्ष कर दिया गया है। अब तक १२ विश्व हिंदी सम्मेलन हो चुके हैं।

निष्कर्षत: हिंदी पूर्णरूपेण विश्व भाषा बनने के योग्य, समर्थ तथा सक्षम है। इसका विपुल तथा समृद्ध वाङ्मय है। हिंदी भाषा ध्वनि, पद, वाक्य, अर्थ इत्यादि की दृष्टि से संस्कृत भाषा का सरल स्वरूप है। हिंदी एक सरल तथा सहज भाषा है, जिसे आसानी से सीखा जा सकता है। अत: आज हिंदी विश्वपटल पर अटल है और अंतरराष्ट्रीय भाषा बनने के पथ पर अग्रसर है।

सा अ

कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर
कश्मीर-१९०००६
दूरभाष : ९६८२५९३४०८

कहानी

बचत

● **ममता मेहता**

"पता है, इस बार मेरा गैस सिलेंडर कितना चला?" खुशी ने गर्व से रोहन से कहा, अखबार पढ़ते रोहन ने कोई उत्सुकता न दिखाते हुए सिर्फ 'हुँ' कहा।

खुशी ने और भी ज्यादा गर्व से बताया, "पूरे तीन महीने।" रोहन की प्रतिक्रिया फिर भी ठंडी ही रही, 'हुँ'।

खुशी चिढ़कर बोली, "मैं आपसे बात कर रही हूँ, दीवारों से नहीं। एक बार मेरी बात भी सुन लिया करो।"

रोहन ने कहा, "सुन तो रहा हूँ, इस बार तुम्हारा गैस सिलेंडर पूरे तीन महीने चला।"

खुशी बोली, "हाँ तो थोड़ी तारीफ भी कर सकते हैं मेरी, सिर्फ 'हूँ' कहने से क्या पता चलता है? पर क्यों करेंगे? मेरी तारीफ करते समय तो न जाने क्यों मुँह सूख जाता है आपका, यही अगर आपकी भाभी होती न तो तारीफों के पुल-पर-पुल बन जाते, मेरी भाभी यह, मेरी भाभी वो···"

रोहन ने कहा, "ऐसी तो कोई बात नहीं, पर भाभीजी की गैस वाकई चार महीने चलती थी।"

खुशी का भड़कना स्वाभाविक ही था, "देखा-देखा, मुझे मालूम था, भाभी का दीवाना ये देवर भाभी की तारीफ में कैसे जल्दी जुबान खोली। तारीफ करते जुबान अब नहीं प्रकटी। पर मुझे बताओ वह आपकी भाभीजी करती क्या थी गैस पर? खाली चाय ही तो बनाती थी, एकाध बार कभी खाना बना लिया तो क्या बना लिया। मेरे साथ ऐसा होता न तो मेरी गैस तो ६ महीने चल जाती। यह तो सारे काम करते हुए तीन, साढ़े तीन महीने गैस चलाई है। दाल के, बादाम के हलवे गैस पर सेंक-सेंककर चलाए, आपकी भाभी दो महीने भी गैस तो मान जाऊँ मैं, आए बड़े भाभी वाले, हुँ।"

रोहन बौखला गया, "अरे-अरे, नाराज मत हो, मैंने तो सिर्फ यों ही कहा था, वास्तव में तो तुम ही किफायत से चलाने वाली हो। मेरा यह ध्यान नहीं रहा कि तुम्हारा तो सच में सारा काम ही गैस पर होता है, भाई राज क्या है, तुम्हारी इतनी गैस चलने का?"

खुशी ने गुस्से में कहा, "अपनी भाभी से ही पूछ लेना, पहले दिल जलाओ, फिर बटर लगाओ।"

रोहन ने मनाने के अंदाज में कहा, "अच्छा बाबा, कह तो दिया

सुपरिचित लेखिका। अब तक 'लातों के भूत', 'अजगर करे न चाकरी', 'व्यंग्य का धोबीपाट', 'झुकती है जनता झुकाने वाला···', 'कुछ पल फुरसत के' (व्यंग्य-संग्रह), 'पलाश के फूल' (साझा काव्य-संग्रह), 'बे बहर गजलें' (गजल-संग्रह)। पाठ्य-पुस्तक बालभारती कक्षा ८वीं और ९वीं में कहानी प्रकाशित। दूरदर्शन व आकाशवाणी से काव्य-पाठ।

सॉरी···भाभी की नहीं। तुम्हारी गैस ज्यादा चलती है बस।"

खुशी तीखे स्वर में बोली, "ऐसे बोलकर क्या अहसान कर रहे हो मुझ पर, आपकी तरफ से कोई अवार्ड नहीं चाहिए मुझे। आप तारीफ नहीं करेंगे तो मर नहीं जाऊँगी मैं, बहुत हैं मेरी तारीफ करने वाले। आप करते रहो अपनी भाभी की ही तारीफ।"

कुछ दिन निकले, बिजली का बिल आया ७५० रुपए का। खुशी को लगा, रोहन तारीफ करेगा, पर रोहन ने कहा, "तुम्हें नहीं लगता, बिल ज्यादा आया है। मेरे हिसाब से तो ४००-५०० ही आना चाहिए था।"

खुशी को गुस्सा आ गया, "आपके हिसाब से तो आना ही नहीं चाहिए था, इतनी बचत करते हैं, एक भी लाइट-पंखा फालतू नहीं चलाते, टी.वी. नहीं देखते, फिर भी इनको देखो। बिजली का बिल ज्यादा आया है। बाजू वाले तिवारीजी का बिल देखा है! बारह सौ रुपए, सामने वाले शर्माजी का रु. १०५०, पांडेजी का रु. ११५०, एक मेरा ही है इतना कम बिल रु. ७५०, इतनी बचत करने वाली, किफायत से चलने वाली बीवी मिली है, पर कोई कद्र नहीं, नुगरे कहीं के, हुँ।"

पीछे-पीछे रोहन आया, फिर उसे मनाया, "अरे यार, तुम तो खामखा नाराज हो जाती हो, मैं तो सिर्फ इसलिए कह रहा था कि अभी सर्दी का मौसम है, पंखे, कूलर सब बंद हैं तो बिजली का बिल भी कम आना चाहिए। तुम्हारी बचत पर, तुम्हारी कुशलता पर मुझे कोई शक नहीं है। तुम तो हो ही मेरी सेविंग क्वीन। यों ही थोड़ी न मैं तुम्हारा दीवाना हूँ।"

खुशी हँस दी—"दीवाना मेरा नहीं, मेरी बचत का।"

फिर तो हर चीज में बचत खुशी की आदत बनती गई। बिजली, फोन, गैस, भोजन पदार्थ, हर चीज में बचत, बड़ा अच्छा लगता खुशी को, किसी की नहीं चलती, पर उसकी गैस करीब साढ़े तीन महीने चल

ही जाती। बिजली का बिल उसका सबसे कम, फोन का बिल उसका सबसे कम, फिजूलखर्ची बिल्कुल नहीं। फालतू फोन बिल्कुल नहीं, रसोई में बरबादी बिल्कुल नहीं। उसको बढ़ावा देता रोहन, "वाह, मेरी सेविंग क्वीन तुम्हारा जवाब नहीं, इसको कहते हैं सुघड़ गृहिणी।" खुशी भी खुश, रोहन की तो बल्ले-बल्ले, अगर उसकी इतनी सी तारीफ करने से खुशी की सेविंग स्किल्स बरकरार रहती है तो उसका क्या जाता है, उसके लिए तो अच्छा है, चलने दो। खुशी की बचत पर एकाध वाक्य तारीफ का बोलने का मूलमंत्र बना लिया उसने।

इस बार खुशी की गैस तीन महीने छह दिन चली और बिल भी उसके बहुत कम आए और रोहन ने अपने मूलमंत्र का इस्तेमाल करते हुए अपनी सेविंग क्वीन को सराहा तो गर्व से भरी खुशी ने अपनी बचत को अपनी किट्टी के मेंबर्स के सामने बखान करने की योजना बना डाली, आखिर सबको पता होना चाहिए कि यह कितनी कुशलता से घर चलाती है। अपनी इसी तैयारी के साथ वह किट्टी पार्टी में उपस्थित हुई, वहाँ उसने जरा स्टाइल से मिसेज वर्मा से कहा, "अपने यहाँ इतनी लोड शैडिंग है, फिर भी बिजली के बिल पर कोई फर्क नहीं, बताइए" वैसे आपका बिजली का बिल कितना आया इस बार?"

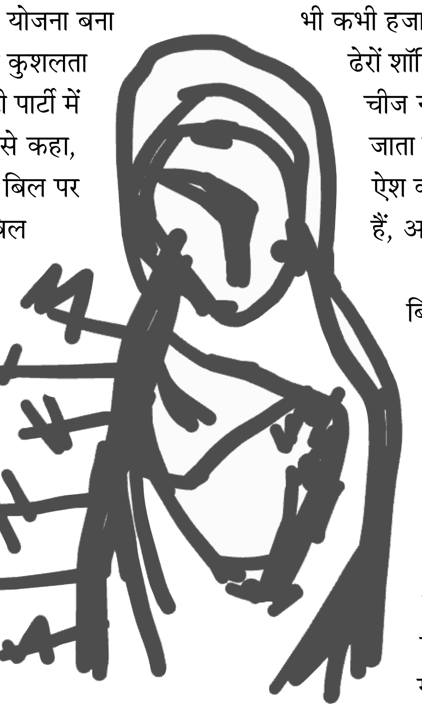

बड़ी लापरवाही से मिसेज वर्मा ने कहा, "रु. ३००० के आसपास है शायद।"

खुशी के मुँह से अपने आप निकल गया, "बाप रे! रु. ३०००! ऐसा क्या जलाती हैं आप?" फिर हल्के गर्व से बोली, "मेरा तो सिर्फ रु. ५०० आया है, मैं तो भई इस बात में विश्वास करती हूँ कि बिजली एक शक्ति है, इसे व्यर्थ न गँवाएँ, जितनी जरूरत है उतनी जलाएँ। आज मिल रही है, अगर ढंग से नहीं यूज की तो कल पता नहीं क्या होगा, वैसे ही लोड शेडिंग कितनी बढ़ रही है।"

मिसेज वर्मा ने उबासी लेते हुए कहा, "यह सब तो मिडिल क्लास मेंटलिटी है भई" अब कोई भी फालतू तो चलाता नहीं है, जितनी चाहिए उतनी तो चाहिए ही। बचत का मतलब यह भी तो नहीं कि हर वक्त तीर-तीर करते रहें। हमसे तो भई बिना ए.सी. के रहा ही नहीं जाता, फिर शाम से ही हमारे यहाँ घर की लाइट जलती है तो रात ११-१२ बजे तक जली ही रहती है। इनको तो अँधेरे में डूबा घर पसंद ही नहीं है। अब बिल चाहे ३००० का आए चाहे ५००० का।" उनकी बातें सुन रही रीटा भी बोल पड़ी, "सही बात है भई, यह बचत-वचत की बातें मिडिल क्लास औरतों का ही रोना है, हमने तो न कभी सोचा, न की, जितना जलना है उतना तो जलेगा ही।" फिर तो सभी महिलाओं की चर्चा इस पर सिमट आई, सब अपने आप को बढ़-चढ़कर दिखाने लगीं। सुरभि बोली, "मेरी गैस मुश्किल से महीना भर चलती है, पर मुझे कभी कोई दिक्कत नहीं, घर में ३ सिलेंडर है, उल्टा कभी ज्यादा चल जाए तो यह नाराज हो जाते हैं, कहते हैं, ज्यादा चितर-चितर करके काम मत करो, भगवान् का दिया बहुत कुछ है हमारे पास तो उसका उपयोग करो।" शीला बोली, मेरी तो १५-२० दिन गैस चल जाए तो ही बड़ी बात है। हमारे यहाँ तो दिन भर कुछ-न-कुछ लगा रहता है, कभी यह बनाओ, कभी वह। कभी मैं कुछ बनाती हूँ, कभी मेरी सास। मेरी सास ने तो कह रखा है, "शीला, बिगाड़े-विगाड़े की चिंता मत किया करो, पर खाना नाश्ता तो हर समय ताजा ही बनना चाहिए। माइक्रोवेव है, पर मजाल है उसमें कोई चीज गरम करके यूज तो कर ले। सबको ताजा-ताजा ही चाहिए, मेरी बाई कहती है, आपके घर से तो इतना मिल जाता है कि मुझे तो खाना बनाने की जरूरत ही नहीं पड़ती।"

पूर्णिमा बोली, "अरे, तो बड़े घरों के यही तो लक्षण होते हैं, हमने भी कभी हजार-पाँच सौ को तो देखा ही नहीं। जब बाजार जाते ढेरों शॉपिंग करके लाते, चाहे २ बार यूज करने के बाद वह चीज नौकरों को दे देनी पड़े, पर हमारा शौक तो पूरा हो जाता है। मैंने तो बच्चों को भी कह रखा है, खाओ-पियो ऐश करो, यही दिन तो तुम्हारे ऐश करने, मौज उड़ाने के हैं, आखिर इतनी कमाई किसके काम आएगी।"

पूजा भी बोली, "वही तो मेरे यहाँ एक बार बिजली का बिल सिर्फ १६०० का आया तो मेरे घर में सब टेंशन में आ गए थे कि ५०००-७००० आने वाला बिल इतना कम कैसे हो गया? किसी को पता चलेगा तो कैसा लगेगा? लोग क्या कहेंगे? इतना बिल तो हमारे यहाँ के नौकरों का आ जाता है। मेरे ससुरजी तो इतना नाराज हुए कि ये तो भंडारी परिवार की इज्जत उछालने वाली बात हो गई, नौकर बिल भरने जाएँगे तो क्या सोचेंगे! उसके बाद तो घर में सबको हिदायत दे दी गई थी कि और कुछ नहीं तो बाथरूम की लाइट जली छोड़ दिया करो, लेकिन बिजली का बिल किसी भी हालत में बढ़ा हुआ ही आना चाहिए, आखिर हमारे परिवार की इज्जत का सवाल है।"

सोनिया ने फोन का बिल उठाया, "मेरे यहाँ भी यही हाल है, चाहे बिजली हो, चाहे फोन, सब भरपूर यूज करो, आखिर ये चीजें अपनी सुविधा के लिए हैं और हम मिडिल क्लास नहीं, हाई क्लास हैं, भई यह बचत-बचत करना हमें शोभा नहीं देता।"

सबकी चुपचाप सुन रही खुशी ने आखिर मुँह खोला, "चीजों की बचत का मतलब मिडिल क्लास मेंटेलिटी तो नहीं, यह तो पूरा विश्व कह रहा है कि बिजली की कमी है, गैस की कमी है, पेट्रोल की कमी है। अगर अभी सँभलकर खर्च नहीं किया तो कल हमें ही परेशानी होगी। इसलिए जितना इसे बचा सके बचाना चाहिए।"

रीमा ने व्यंग्य से कहा, "अच्छा! फिर पूरा राष्ट्रपति भवन क्यों हर समय जगमगाता रहता है? नेताओं के घर क्यों बड़े-बड़े फानूस

वजह-बेवजह जलते रहते हैं? उनके बाग-बगीचे में क्यों फाउंटेन झरने बहते रहते हैं? एक नेता के आगमन पर क्यों पूरा कारवाँ साथ चलता है? बिजली, पानी, पेट्रोल की कमी तो उन्हें भी होगी, फिर उन्हें बचत की चिंता क्यों नहीं होती? अरे, यह सब तो जनता को गुमराह करने के तरीके हैं और कुछ नहीं। नेता क्योंकि मिडिल क्लास नहीं होते, इसलिए वह बचत के चक्कर में नहीं पड़ते, पर तू क्यों इतना टेंशन ले रही है? कल क्या होगा, किसने देखा। तू बता, तेरी गैस कितनी चलती है, तेरा बिजली का बिल कितना आया, तू साड़ियाँ कैसे और कितने तक की पहनती है?" खुशी के मुँह से बोल नहीं फूटा, कहाँ वह सोच रही थी, अपनी बचत से सबको इंप्रेस कर देगी, कहाँ अब बताते शर्म आ रही थी और डर रही थी कि कहीं मिसेज वर्मा सबके सामने न बोल दें कि इसका बिजली का बिल सिर्फ रु. ५०० आया है, क्या इज्जत रह जाएगी फिर इन सबके बीच में, पर मिसेज वर्मा का ध्यान कहीं और था, उसने मन-ही-मन शुक्र मनाया। यह सब हाई क्लास औरतें फोन, बिजली का बिल कम आए तो इनका स्टैंडर्ड गिरता है, जो दो-ढाई हजार से नीचे की साड़ियाँ नहीं पहनतीं, जिनके पति भर-भर के कमाते हैं और ये भर-भर के उड़ाती हैं और एक ये हैं। जली-भुनी, उतरी, मायूस खुशी घर आई तो रोहन ने लाड़ में भरकर कहा, "आ गई मेरी सेविंग क्वीन, बता आई सबको अपनी बचत के नुस्खे! आज तो तुम ही छाई रही होगी, वहाँ सबको बहुत आश्चर्य हुआ होगा तुम्हारी बचत पर।"

मिडिल क्लास मेंटलिटी के भार से दबी खुशी फट पड़ी—"मेरी वाहवाही नहीं। मेरी इंसल्ट हो गई। वहाँ सब हाई-फाई परिवारों की औरतें, जो बचत-वचत तो घर के नौकरों के लिए मानती हैं, उनका काम तो पैसा उड़ाना है, क्योंकि उनके पति बहुत कमाते हैं। एक मैं हूँ, ऐसा पति मिला है, जिसे मेरी इज्जत की कोई परवाह ही नहीं, बचत करो, बचत करो, क्या बचत करो? उनके बिजली के बिल आते हैं हजारों में, मेरा आया सिर्फ रु. ५००। वहाँ वह गर्व से अपने हजारों के बिल बता रही थीं, मैं क्या खाक बताती, पता नहीं कैसा कंजूस मिडिल क्लास पति पल्ले पड़ा है, जिसने मेरी भी आदतें ऐसी ही बना दी हैं मिडिल क्लास लोगों जैसी। उन लोगों के पति उनके यहाँ ज्यादा बिल आए तो उनके गुण गाते हैं। आप हैं कि कम बिल आने पर मेरी तारीफ करते हैं, कोई जरूरत नहीं है आज से मेरी इन बातों पर तारीफ करने की। बचत, बचत, बचत...भाड़ में गई बचत, अब मैं नहीं सोचूँगी बचत करने की। आप कमाई बढ़ाने की सोचो, समझे! वह तो रोती पैर पटकती सारे घर की लाइट जलाती रसोई में घुस गई। रोहन का सिर भन्ना गया, पहले तारीफ नहीं कर रहा था तो गुस्सा कर रही थी, अब तारीफ की तो गुस्सा कर रही है, घर भर की जलती लाइटों को देखकर उसका जी जल रहा था। अब क्या होगा?

सा अ

७, प्रभा रेजीडेंसी
पुराना बियानी चौक, लड्ढा प्लॉट कैंप
अमरावती-४४४६०२ (महा.)
दूरभाष : ८४५९७१८१९३

लघुकथा

जागरूकता

• हरदेव सिंह धीमान्

एक साहित्यिक पत्रिका ने एक कहानी विशेषांक निकाला, जिसमें देश के प्रतिष्ठित लेखकों की चुनिंदा कहानियाँ व कुछ अन्य सामग्री संकलित थी। यह पत्रिका जब एक पाठक के पास पहुँची तो उसने यह पत्रिका आदि से अंत तक अनवरत पढ़ डाली। उसे लगा कि पत्रिका में संकलित अधिकतर कहानियाँ उसने पहले कहीं पढ़ रखी हैं। अपनी जागरूकता का परिचय देते हुए उसने उस पत्रिका के संपादक के नाम एक समीक्षात्मक पत्र लिख डाला।

"महोदय, आप द्वारा संपादित पत्रिका का कहानी विशेषांक आद्योपांत पढ़ा, रचना संचयन में श्रम बहुत किया गया है, जिससे यह विशेषांक उत्तम बन पड़ा है। परंतु न जाने मुझे क्यों ऐसा लगता है कि विशेषांक में शामिल हुई अधिकतर रचनाएँ कहीं पूर्व में पढ़ी हुई हैं। आशा है, आप इसे अन्यथा न लेंगे और भविष्य में इसका खयाल रखेंगे।"

संपादक महोदय ने जब वह पत्र पढ़ा तो उन्होंने तुरंत ही एक पोस्ट कार्ड उन पाठक महोदय के पते पर भेज दिया। उन्होंने लिखा—"महोदय, आपका पत्र मिला। धन्यवाद। आप एक जागरूक पाठक हैं, इसलिए आप ने विशेषांक में सामग्री चयन पर अपनी बेवाक टिप्पणी की है, परंतु यहाँ यह उद्धृत करना उचित समझता हूँ कि आपकी जो कहानी उस विशेषांक में शामिल की गई है, उसे भी मैंने पूर्व में दो पत्रिकाओं में पढ़ लिया था, परंतु फिर भी इसे इस विशेषांक में शामिल कर लिया गया। इस प्रकार इस विशेषांक का मंतव्य आप समझ ही गए होंगे।

संपादक का पत्र पढ़ते ही वे लेखक महोदय अपनी ही जागरूकता पर प्रश्न करने लगे।

सा अ

धीमान् गृहम् बरोली
पत्रालय-दनावली, तहसील-ननखरी
जिला-शिमला-१७२०२१ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९८१७२१६३५५

दस गजलें

● विज्ञान व्रत

: एक :

टूट कर भी सच कहा
आइना है आइना

जिंदगी का फ़लसफ़ा
आज तक उलझा हुआ

आपका अंदाज़ हूँ
मैं भला ख़ुद क्या रहा

आप भी चुप हो गए
आपसे है ये गिला

नामवर थे जो कभी
आज हैं वो लापता

: दो :

उनका रोज़ बहाना भी
रोज़ाना आ जाना भी

बस्ती भी वीराना भी
अपना हूँ बेगाना भी

तुमसे ही तो जाना है
ना होना हो जाना भी

आप मुझे गैर समझें तो
जो समझें समझाना भी

दैरो हरम के रस्ते में
काश रहे मैख़ाना भी

: तीन :

तेरा ही तो हिस्सा हूँ
ये तू जाने कितना हूँ

अपने हाथों हारा हूँ
वरना किसके बस का हूँ

ख़ुद को ही खो बैठा हूँ
मैं अब क्या खो सकता हूँ

जब से अपने जैसा हूँ
सब कहते हैं धोखा हूँ

आमादा हूँ जीने पर
यों रोज़ाना मरता हूँ

: चार :

कब से मन में रखे हो
जाने दो जाने भी दो

मैं पहचान गया तुमको
तुम भी औरों जैसे हो

ऐसे देख रहा है वो
जैसे कोई अपना हो

कैसे समझाऊँ तुमको
तुम मुझको समझाओ तो

नामुमकिन है जीत सको
कैसे हारूँ बतला दो

: पाँच :

सुन लो जो सय्याद करेगा
वो मुझको आज़ाद करेगा

आँखों ने ही कह डाला है
तू जो कुछ इरशाद करेगा

एक ज़माना भूला मुझको
एक ज़माना याद करेगा

काम अभी कुछ ऐसे भी हैं
जो तू अपने बाद करेगा

तुझको बिल्कुल भूल गया हूँ
जा तू भी क्या याद करेगा

: छह :

उसने कुछ न कहा था लेकिन
मैंने साफ़ सुना था लेकिन

नींद नहीं आ पाई मुझको
कोई ख़्वाब दिखा था लेकिन

लहरों पर तस्वीर बनी थी
फिर तूफ़ान उठा था लेकिन

महफ़िल उनके नाम सजी थी
मेरा ज़िक्र रहा था लेकिन

थक कर चूर हुए थे पंछी
नीचे जाल बिछा था लेकिन

'बाहर धूप खड़ी है', 'चुप की आवाज', 'जैसे कोई लौटेगा', 'तब तक हूँ', 'मैं जहाँ हूँ', 'लेकिन गायब रोशनदान', 'याद आना चाहता हूँ', (गजल-संग्रह); 'खिड़की भर आकाश' (दोहा-संग्रह); 'नेपथ्यों में कोलाहल' (नवगीत-संग्रह), 'अक्कड़-बक्कड़ इल्ली-गिल्ली' (बालगीत-संग्रह)। 'अंतरराष्ट्रीय वातायन सम्मान', 'सुरुचि सम्मान', 'परंपरा सम्मान', 'आधारशिला कलाभूषण सम्मान', 'हिंदी गौरव सम्मान', 'कंवल सरहदी सम्मान' एवं अन्य अनेक सम्मान।

: सात :

सिर्फ़ क़िस्सों में सुना हो
काश ऐसा फ़ैसला हो

सुर्ख़ियों में जो रहा हो
क्या पता अब गुमशुदा हो

क़ुर्बतों को शर्म आए
आपसे यूँ फ़ासला हो

कौन किसको अब सुनेगा
बोलना ही जब मना हो

उस क़िले को कौन जीते
जो हवाओं में बना हो

: आठ :

मुसकराना चाहता हूँ
क्या दिखाना चाहता हूँ

याद उनको भी नहीं जो
वो भुलाना चाहता हूँ

जिस मकान में हूँ उसे अब
घर बनाना चाहता हूँ

क़र्ज़ जो मुझ पर नहीं है
क्यों चुकाना चाहता हूँ

आपकी जानिब से ख़ुद को
आज़माना चाहता हूँ

: नौ :

जो सदा से लामकाँ है
वो मुझे रखता कहाँ है

ख़ुद नहीं महफ़ूज़ है जो
क्यों हमारा पासबाँ है

तू अगर मंज़िल नहीं तो
फिर मुझे जाना कहाँ है

मिल चुका हूँ आपसे पर
आपको देखा कहाँ है

आप बोलें या न बोलें
आपका चेहरा बयाँ है

: दस :

चेहरे पर मुसकान रखूँ
क्यों फ़ानी पहचान रखूँ

जो तेरा अरमान रखूँ
ऐसी क्या पहचान रखूँ

पहचानूँ इस दुनिया को
पर ख़ुद को अंजान रखूँ

खो जाऊँ पहचानों में
क्यों इतनी पहचान रखूँ

मैं हूँ, मन है, दुनिया भी
अब किस-किसका ध्यान रखूँ

सा॰अ॰

एन-१३८, सेक्टर-२५,
नोएडा-२०१३०१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८१०२२४५७१

गागर-गागर से महासागर बनती हिंदी

• नलिन खोईवाल

गागर-गागर से महासागर (गद्य-संग्रह), क्षितिज (संपादन, नराकास की साहित्यिक पत्रिका), किस्मत कनेक्शन (पत्र लेखन-संग्रह), पिचर पिचर टू द ओसियन (अंग्रेजी आर्टिकल), सपनों का चाँद (काव्य-संग्रह)। देश-विदेश की ख्यात पत्र-पत्रिकाओं में लगभग २००० रचनाओं का प्रकाशन। आकाशवाणी व दूरदर्शन से रचनाओं का प्रसारण। कई राज्य-राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त।

हिंदी भाषा ही नहीं, वाणी है, वाणी शासन की नहीं''जन-जन की, वाणी तन की नहीं, मन की। भाषाओं के गुलशन में हिंदी एक ऐसा पुष्प है, जो माधुर्य, सौंदर्य और सुगंध से भरपूर है। माधुर्य के कारण हिंदी मिष्ट है! सौंदर्य के कारण हिंदी शिष्ट है और सुगंध के कारण हिंदी विशिष्ट है।

हिंदी में जो सामर्थ्य है, वह संसार की किसी अन्य भाषा में नहीं है। हिंदी संसार की एकमात्र ऐसी भाषा है, जिसे जिस रूप में लिखा जाता है, उसी रूप में पढ़ा भी जाता है। किसी अन्य भाषा में ऐसी एकरूपता देखने को नहीं मिलती है। जैसे कि इंग्लिश में केवल लोटस शब्द उपलब्ध है, किंतु हिंदी में इसके लिए नलिन, जलज, पंकज, नीरज, राजीव, कमल, जलधि आदि बहुत सारे समानार्थी शब्द विद्यमान हैं। हिंदी की डिक्शनरी में १० लाख शब्दों का विशाल भंडार है, जो विश्व की किसी अन्य भाषा में नहीं है। हिंदी संसार की सबसे सरल, सहज और मीठी भाषा है। भाषा महज भाषा नहीं होती है, उसके साथ बोलने वालों की संस्कृति और संस्कार भी जुड़े होते हैं। भाषा विचारों की नहीं, भावों की वाहक होती है।

हिंदी एक समृद्ध भाषा है, इसीलिए तो हिंदी ने क्षेत्रीय भाषाओं के कई शब्दों को आत्मसात् भी किया है, जिसका जिक्र हिंदी शब्दकोश में भी मिलता है। हिंदी न तो दिखावे की भाषा है और न ही झगड़ों की भाषा है। हिंदी ने अपने अस्तित्व से लेकर आज तक कितनी ही भाषाओं को अपने आँचल से बाँधकर हर दिन एक नया रूप धारण किया है। देखा जाए तो हिंदी ने क्षेत्रीय भाषाओं को माँ का प्यार दिया है।

हिंदी ने खुले दिल से सब भाषा का, भाषा के शब्दों का, शैली और लहजे का स्वागत किया है। फारसी, अरबी, उर्दू से लेकर 'आधुनिक बाला' अंग्रेजी तक को आत्मीयता से हिंदी ने अपनाया है। आज हिंदी का ग्लोबलाइजेशन हो गया है और बहुराष्ट्रीय कंपनियों को अपना माल बाजार में बेचने के लिए हिंदी और केवल हिंदी का ही सहारा लेना पड़ रहा है। क्योंकि विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा है हिंदी। चीनी भाषा के बाद यह विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। भारत और अन्य देशों में ८० करोड़ से अधिक लोग हिंदी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं। इतना ही नहीं, फिजी, मॉरीशस, गुयाना, सूरीनाम, भूटान जैसे दूसरे देशों की अधिकतर जनता हिंदी बोलती है। भारत से सटे नेपाल की भी कुछ जनता हिंदी बोलती है। आज हिंदी राजभाषा, संपर्क भाषा, जनभाषा के सोपानों को पार कर विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर है।

हिंदी कल-कल करती नदियों की तरह हर आम और खास भारतीय ह्रदय में प्रवाहित होती है, मंदिर की घंटियों, मसजिद की अजान, गुरुद्वारे की शबद और चर्च की प्रार्थना में भी गूँजती प्रतीत होती है। यह सीधे हमारे दिल तक पहुँचती है।

राज्य प्रशासनिक सेवा, भारतीय प्रशासनिक सेवा सहित सभी परीक्षाओं में अंग्रेजी की अनिवार्यता को समाप्त कर इसे ऐच्छिक विषय के रूप में रखना चाहिए। हिंदी अनिवार्य भाषा के रूप में सर्वमान्य भाषा बननी चाहिए। हिंदी के ज्यादातर शब्द संस्कृत, फारसी, अरबी भाषा से लिये गए हैं। यह समृद्ध और समर्थ भाषा है। इसे सर्वोपरि मानकर इसका शीश झुकाकर समुचित सम्मान किया जाना चाहिए।

हिंदी को अंग्रेजी भाषा से खतरा कम और अपने लोगों से ज्यादा है, क्योंकि हमारे यहाँ कार्यालयों में ज्यादातर कामकाज अंग्रेजी में होता है, सर्कुलर्स अंग्रेजी में जारी किए जाते हैं, प्रतियोगी परीक्षाओं में अंग्रेजी का पेपर अनिवार्य है, संसद् में माननीय सांसदों व मंत्रियों द्वारा अंग्रेजी में ही शपथ ली जाती है व बहस भी अंग्रेजी में की जाती है तथा विदेशी दौरों में भी अंग्रेजी का ही इस्तेमाल किया जाता है। इसलिए कहा गया है कि भारत एक अंग्रेजीभाषी लोकतंत्र है।''और कई योग्य हिंदीभाषी प्रतियोगी भारतीय प्रशासनिक सेवा में चयनित होने से वंचित हो जाते हैं। हिंदी का समग्र विकास तभी संभव है, जब हम अपने को सुधारें, दूसरों पर दोषारोपण बंद कर इस नेक काम की शुरुआत केवल और केवल अपने से करें।

यह हमारे लिए गौरव की बात है कि १०वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन भोपाल में आयोजित हुआ। लेकिन राजभाषा हिंदी और हिंदीप्रेमी, दोनों ही

इस सम्मेलन से दूर रहे, क्योंकि प्रवेश शुल्क ५००० निर्धारित किया गया था व पंजीयन का ऑनलाइन फॉर्म भी अंग्रेजी भाषा में ही था। इससे यह प्रतीत होता है कि उस हिंदी सम्मेलन से भी हिंदी दूर रही तथा हम केवल और केवल हिंदी के उत्थान का ढोल ही पीटते रहे। हिंदी अपनों की ही उपेक्षा का शिकार है। देशवासी इसकी प्रगति में कब मील का पत्थर बनेंगे व एकजुट होंगे, इस पर अभी संशय की स्थिति है। आओ, हम सब मिलकर हिंदी को माथे की बिंदी बनाएँ, जिससे कि यह राजभाषा से राष्ट्रभाषा बन सके।

हमारे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीजी का यह बयान कि मैंने चाय बेच-बेचकर के हिंदी सीखी है। यह बयान हिंदी भाषा के उत्थान के लिए लू के गरम थपेड़ों में ठंडी हवा के झोंकों के समान है। यह बयान भी सोचने पर मजबूर करता है कि यदि हिंदुस्तान में हिंदी गरीबों की भाषा है तो क्या अंग्रेजी संपन्नता की प्रतीक है?

हिंदी के विकास का श्रेय हम गैर-हिंदीभाषियों को देंगे कि ये लोग हिंदी को अपनी क्षेत्रीय भाषा के साथ आत्मसात् कर रहे हैं और विदेशियों ने भी हिंदी सीखकर इसका मान और रुतबा ही बढ़ाया है। आज हिंदी वैश्विक बाजार की रानी (क्वीन) है। पहले हम इसे अपनी राजभाषा तो बनाएँ, तभी तो यह राष्ट्रभाषा/विश्वभाषा बन पाएगी। राजभाषा वही हो सकती है, जो सरकारी कर्मचारियों के लिए सहज व सुगम हो और हिंदी में ये सारे गुण विद्यमान हैं। बहरहाल हिंदी के उत्थान के लिए हम इतना तो कर ही सकते हैं—

- हम हिंदी को देवनागरी में ही लिखें, न कि रोमन लिपि में।
- भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ—भोजपुरी, मैथिली, ब्रज, अवधी और अन्य सहभाषाओं से इसे जोड़कर समृद्ध किया जाए। सरकारी कामकाज शिक्षा, उद्योग-धंधे, न्याय, स्वास्थ्य आदि क्षेत्रों में इसे प्रचलित कर इसका विस्तार किया जाए।
- संयुक्त राष्ट्र की भी भाषा हो हिंदी और सभी सरकारी कार्यालयों की अनिवार्य भाषा भी हो हिंदी।
- इंटरनेट पर लेटिन के साथ देवनागरी में भी खोज सुगम होने से हिंदी का प्रचार-प्रसार बढ़ेगा और इसके बोलने वालों की संख्या में भी वृद्धि होगी।
- हम हिंदी में वार्त्तालाप करें, हिंदी में पत्राचार करें और हिंदी में ही हस्ताक्षर करें।
- अपनी दुकानों, कार्यालयों के पट्ट हिंदी में लगाएँ। सभी तरह के कार्ड हिंदी में छपवाएँ। शुभकामनाएँ भी हिंदी में दें, शुभ संदेश हिंदी में लिखकर भेजें।
- हर क्षेत्र में शत-प्रतिशत कार्य हम हिंदी में ही करें और हिंदी के साथ-साथ अपना भी गौरव बढ़ाएँ।

हम अभी इतना कर सकते हैं कि यह जिस दिशा में स्वाभाविक रूप में बहे, इसे बहने दें। इसके सतत प्रवाह में स्पीड ब्रेकर न बनकर इसे दरिया से समंदर बनने दें तथा गागर-गागर मिलकर इसे महासागर तो बनने दें।

हिंदी है राजभाषा हमारी बताएँगे।
हिंदी में काम सारा ही करके दिखाएँगे॥

सा अ

३७६-ए, सुदामा नगर,
इंदौर-४५२००९ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५९२६८४०

कविता

हिंदी : प्राणवायु

विनीता सहल

एक कस्तूरी है, एक चंदन है
माँ भारती का स्पंदन है
करते हम इसका अभिनंदन हैं

उत्सर्ग इसमें, उपसर्ग इसमें
लक्षणा इसमें, अलंकार इसमें
सभी विधाएँ, रसों की धारा इसमें

भावों की अभिव्यक्ति भी है
नाटक, कहानी, निबंध भी है
माटी की भीनी सुगंध भी है

आँसू भी, मुसकान भी इसमें
कल्पना, कला का सौंदर्य इसमें
व्यंग्य का बाँकपन इसमें

मनों को जोड़ने का सामर्थ्य भी है
हृदय चीरने की क्षमता है तो
मालिन्य मिटाने की ममता इसमें

एक सनसनाहट है
एक खनखनाहट है
मदमाती नदी का जल है
जीवन दात्री समीर है वह

मौसम का आशीर्वाद इसमें
प्रकृति की छटा दरशाती
पंचतत्त्व की शक्ति इसमें
जो बाँधे चहुँओर
एक अदृश्य डोर
एक सुहानी भोर है वह
रक्त प्रवाह शिराओं में
हिंदी सभी दिशाओं में
इससे भारत की पहचान है
यह हमारी शान है,
यह हमारी जान है!

सा अ

३०१, तीसरी मंजिल, अर्चना कुटीर,
१३वीं रोड, लोटस आई हॉस्पिटल के सामने
जुहू, मुंबई-४०००४९
दूरभाष : ९४१४१२६२६४

हर्जाना

• सुरेशचंद्र रोहरा

लेखक एवं संपादक। अब तक 'काले धब्बे' (उपन्यास), 'बापू गीत' (गीत), 'कलम का साधक' (रेखाचित्र), 'गांधीजी : हास-परिहास', 'समकालीन कविता', 'मीर हूँ या मीरा' (गजल), 'जैसे जल बिन मछली', 'हे बापू' (उपन्यास) प्रकाशित।

छोटी-छोटी बात कितनी गंभीर हो जाती हैं, खबर ही नहीं होती। गणेश और रानी की जिंदगी में भी यही तो हुआ था। रानी को ससुराल आए हुए दस माह ही हुए थे कि दोनों बिछड़ गए और ऐसे बिछड़े कि चलो, वह बात फिर कभी। अभी आपको सुनाते हैं घर की वे छोटी-छोटी घटनाएँ।

एक दिन रानी के पिता घर आ पहुँचे, रानी ने देखा तो बहुत खुश हुई। इधर बेटी से मेल-मुलाकात के बाद पिता सुखीराम ने समधी रामसुख की ओर नजरें नीची कर कहा, "रानी की छोटी बहन श्यामा का ब्याह अगले माह तय हुआ है।"

यह सुन रामसुख बड़े प्रसन्न हुए और बोले, "वाह समधी भाई, यह तो बड़ी अच्छी खबर सुनाई।"

सुखीराम ने बड़ी हिम्मत कर समधी रामसुख की ओर देखा और कहा, "मुझे कहना तो नहीं चाहिए, मगर कुछ बात है।"

"हाँ, भाई कहो, क्या बात है, जो कहना है, कहो।" रामसुख ने कहा

"मुझे श्यामा के ब्याह के लिए कुछ पैसों की जरूरत होगी।"

यह सुन सुखीराम संशय में पड़ गए, कुछ इधर-उधर देखा और फिर कहा, "ज्यादा नहीं, दो-ढाई लाख रुपए मुझे लगेंगे।"

रामसुख का परिवार संपन्न था। वह स्वयं कोयला खान में नौकरी करते थे और खेती-किसानी भी थी। दूसरी तरफ सुखीराम पर इन दिनों मानो दुःख के पहाड़ टूटे हुए थे, वह कोयला खदान में नौकरी कर रहा था, मगर अपनी शराबनोशी के आदत की वजह से वहाँ से डिस्मिस हो गया था, फलतः उसकी हालत दिनोदिन पतली हुई जा रही थी और अब, जब बेटी का ब्याह सामने था, उसे अपने समधी से सहयोग माँगने का खयाल आया था।

रामसुख ने सुखीराम की ओर चढ़ती निगाह से देखा और धीरे से कहा, "भाई, इतनी रकम की व्यवस्था मैं कैसे कर पाऊँगा। हाँ, अगर कहो तो, कुछ राशन की व्यवस्था मैं अवश्य करवा सकता हूँ।"

सुखीराम क्या करता, उसने सहजता से कहा, "ठीक है भैया, राशन की व्यवस्था ही करवा देना, पैसे मैं धीरे-धीरे चुकता करवा दूँगा।"

और फिर सुखीराम ने ब्याह के राशन की जो सूची बनाई, वह बढ़-चढ़कर थी। लगभग अस्सी हजार रुपए का राशन रामसुख के द्वारा सुझाए गए राशन दुकान से उठा लिया गया।

श्यामा का ब्याह हो गया। मगर बहुत दिनों बाद भी पैसे नहीं पटे तो हारकर रामसुख ने सारे पैसे स्वयं पटा दिए और फिर शुरू हुआ घर में कलह का सिलसिला। सास बड़ी सास रानी को अकसर इस बात का ताना मारती कि तुम्हारे पिता ने श्यामा के विवाह के समय के लिये गए राशन के पैसे अभी तक नहीं दिए हैं।

रानी अभी अल्हड़ किशोरी थी, उसे ये सब फब्तियाँ सुनकर बहुत बुरा लगता, वह मन मसोसकर रह जाती। वह क्या कर सकती थी। मगर बारंबार के तानों से उसकी आत्मा कराह उठती। इसी तरह जीवन की गाड़ी के पहिए खींच रहे थे कि एक दिन सुबह-सुबह रानी ने पति गणेश को आवाज दी और कहा, "अजी सुनिए तो···"

गणेश नहाकर अभी पूजा ही कर रहा था कि पत्नी की आवाज कानों में पड़ी, उसने तुलसी चौरा में अगरबत्ती घुमाते हुए पत्नी की ओर देखा, "देख नहीं रही हो, मैं पूजा कर रहा हूँ।"

रानी ने यह सुना तो गुस्से से आगबबूला हो गई और सर पर रखे मटके का सारा पानी गणेश के ऊपर उड़ेल दिया और पैर पटकते हुए अपने कमरे की ओर चली गई।

गणेश ने जब देखा, पूजा में विघ्न पड़ गया है तो उसका पारा भी सातवें आसामान पर चढ़ गया। मारे गुस्से के वह काँपने लगा और कमरे में जाकर रानी को लगा पीटने।

रानी मार खाने के बाद रोने लगी और फोन पर बड़े भाई राधेश्याम को सारी बात बढ़ा-चढ़ाकर बता दी। रानी की बात सुन राधेश्याम देर रात में आ धमका और गणेश की ओर बड़ी-बड़ी आँखें करके बोला, "तुमने रानी को क्यों मारा ?"

गणेश कुछ जवाब देता, उससे पूर्व ही राधेश्याम ने उसे सबके सामने कई थप्पड़ रसीद कर दिए और जब बीच-बचाव के लिए गणेश के छोटे

भाई ने प्रयास किया तो उसकी भी पिटाई कर दी। अब तो बात बढ़नी ही थी। मामला थाना पुलिस पहुँच गया। पुलिस ने दोनों पक्षों के ऊपर मुकदमा दर्ज कर लिया और फिर शुरू हो गया कोर्ट-कचहरी का दौर।

और इसी दरमियान हुआ यह कि रानी एक दिन मायके गई तो फिर लौटी ही नहीं। रानी जब तक ससुराल में रही, बहुत खुश थी। हाँ, अकसर सास और बड़ी सास, दोनों ताने मारतीं, छोटी सी बात पर ऐसा तीर चलाती, कि रानी का मन भर आता। जब रानी मायके गई तो माँ ने गले लगाकर हाल-चाल पूछ लिया। माँ के स्नेह के आगे रानी के विगत दिनों का दर्द अनायास छलक आया। आँखों में अश्रु भर आए, तो माँ चिंतित हो उठी। जब कुरेद-कुरेद कर पूछा तो माँ के आँचल तले, रानी का वह हृदय का बाँध टूट पड़ा, जो लंबे समय से बँधा हुआ था। वह आर्त स्वर में बोली, "माँ, मैं ससुर घर नहीं जाऊँगी।"

माँ अनुभवी थी, संसार कुछ ज्यादा देखा था, वह आहिस्ते-आहिस्ते बातें कर रानी से सबकुछ पूछती चली गई और रानी बताती चली गई। माँ ने सांत्वना दी, "बेटी, कोई बात नहीं, जैसी तेरी मर्जी।" रानी हँसी-खुशी मायके में रहने लगी। इधर उसके ससुराल में सभी परिजन चंद दिन इंतजार करने के बाद, मानो भूल गए कि कभी रानी इस घर की बहूरानी बनकर भी आई थी।

मगर गणेश उसे हमेशा याद करता और सोचता, आखिर कब रानी फिर उसके जीवन में आएगी? घर में कभी माँ, बाबूजी रानी का जिक्र आता तो ज्यादा तवज्जो नहीं देते। माँ कहती, "समधी पक्ष को थोड़ी भी समझ नहीं है, बेटी वाले हैं, मगर ठाठ तो देखो, भला हम क्यों झुकेंगे?"

मोहल्ले में बात निकलती तो पड़ोस की प्रताप की माँ पूछती, "कब आएगी रानी बहू? कितने दिन तो हो गए, क्या बात है?"

गणेश की माँ कहती, "अब बहन तुमसे क्या छिपाना, ये (गणेश के पिता) तो कहते हैं, जब खुद खुशी-खुशी बहू को ले गए हैं तो खुद लेकर आना भी होगा।"

"मगर तुम्हें भी तो संदेश भेजना चाहिए था न!"

"बहन, भेजा था। कुछ नहीं कहते, कहते हैं बीमार है।"

"बीमार है तो इलाज यहाँ भी तो हो सकता है।" पड़ोसी महिला अधिकारपूर्वक कहती।

"अब क्या कहूँ, समधीजी बेटी को नहीं भेजना चाहते, तो न भेजें। बिठा रखें अपनी बेटी को! देखते हैं, कब तक घर बैठाकर रखते हैं।"

यही हालोहवाल रानी के मायके पक्ष का भी था। आस-पड़ोसी रानी को मायके में देख पूछते, "अरे! कितने दिन हो गए, कब तक रहोगी?"

कोई कहता, "रानी! क्या तुम ससुराल में खुश नहीं हो?"

रानी कहती, "खुश क्यों न हूँ, मैं तो वहाँ और यहाँ दोनों ही जगह खुश हूँ।"

"तो ससुराल से लेने जीजा क्यों नहीं आता भला, क्यों?" सहेली पूछती।

"मैं बीमार रहती हूँ रे! क्या करूँ, वहाँ इलाज नहीं हो पाता। यहाँ दवाई चल रही है न!" रानी दलील देती।

एक दिन देखा, सुबह-सुबह गणेश आ धमका है। सास-ससुर का पाव लागी कर आँगन में बैठा है। पिताश्री गाँव-घर का हाल-चाल लेते हैं, माँ कहती है, "रानी! जा खयाल रख उसका, कितने दिन बाद आया है।"

रानी पास आ बैठी, गणेश बोला, "चल घर, सब याद करते हैं… क्यों नहीं आई इतने दिन?"

"मैं बीमार हूँ, फिर वहाँ कितना परेशान करती है माँ, तुम्हें नहीं मालूम है क्या? कभी मेरा पक्ष लिया, मैं क्या करूँ?"

गणेश बोला, "तुम चिंता मत करो, तुम जो चाहोगी, वही होगा। बाबू से कहो…कल ही आ जाओ या फिर आज ही चलो।"

"झूठ! ऐसा होता है क्या? बाबूजी नहीं मानेंगे।"

"भला क्यों?"

"वहाँ की रोज-रोज की किच-किच, मेरा इलाज… मैं नहीं जाऊँगी।"

विवश गणेश लौट आया। दिन व्यतीत हो रहे थे। इधर समाज के झंडाबरदार रानी गणेश के मसले पर चर्चा करने लगे। गणेश के पिता रामसुख का दर्द आखिर फूट पड़ा तो समाज के लोगों ने बैठक बुलानी शुरू की, दोनों पक्षों को बुलाया गया।

रानी के पिता सुखीराम और गणेश के पिता रामसुख दोनों उपस्थित हुए।

मुखिया बोला, "भई! समाज ऐसे कैसे चलेगा। शादी-ब्याह कोई गुड्डे-गुड़ियों का खेल है क्या? ऐसे में दूसरों को भी बिगड़ने का मौका मिलता है।"

रानी के पिता सुखीराम मौन बैठे सुन रहे थे। यह मामला समाज में रामसुखदास लेकर आए थे, वे प्रसन्नचित्त बैठे थे।

मुखिया ने दो टूक कहा, "देखो सुखीराम, तुम एक हफ्ते में फैसला करो। तुम क्या कहना चाहते हो। बेटी से पूछो, कोई परेशानी हो तो हमारे सामने रखो। अगर समधी पक्ष गलत होगा तो न्याय तुम्हारे दरवाजे आएगा, तुम फिक्र न करो।"

समाज की बैठकी सुखीराम के घर तक आ पहुँची। पत्नी ने कहा, "बेटी सुखी नहीं है तो भला क्यों भेजूँ, नहीं भेजती मैं…कह देना समाज वालों से।"

सुखीराम बोले, "अरे भाग्यवान! कोई कारण तो बताना होगा। क्या कहेगी रानी…रानी को सबके सामने खुद कहना होगा, तब बात बनेगी।" रानी ने सुना तो कहा, "ठीक है, मैं बताऊँगी कारण।"

और जब समाज की बैठकी हुई और मुखिया ने रानी की ओर उन्मुख होकर पूछा, "बेटी, बताओ! तुम ससुराल क्यों नहीं जाना चाहती। तुमने ससुराल पक्ष की क्या हानि नहीं की है, बर-ब्याह के बाद भला कोई ऐसा करता है।"

रानी कुछ सोचती रही, फिर बोली, "मुखियाजी! मैं बाबू के यहाँ खुश हूँ। मैं तो यहीं रहूँगी।"

मुखिया बोले, "सोच लो! फिर न कहना।"

रानी, "मैंने सोच लिया है।"

"अच्छा तुम्हें क्या तकलीफ थी, जरा बताओ?" मुखिया ने पूछा।

"कोई तकलीफ नहीं थी।"

"क्या पति या कोई मारता-पीटता था?"

"नहीं नहीं।"

"क्या दहेज की कोई माँग करता था?"

"नहीं।"

समाज के मुखिया ने शांत भाव से रानी की बातें सुनीं और सभी की ओर नजर डालते हुए कहा, "सुखीराम का परिवार अपने दामाद, समधी पर कोई आरोप सिद्ध नहीं कर पाया है और स्वयं लड़की भी अपनी बात रख चुकी है, ऐसे में समाज का हुक्म है पचास हजार रुपए हर्जाना रामसुख परिवार को, पचास हजार रुपए समाज को हर्जाने का देना होगा।"

पचास हजार-पचास हजार! हर्जाने की बात सुन मानो सुखीराम के होश उड़ गए। इधर रानी की हालत भी पतली थी। मुखिया ने कहा, "समाज में व्यवस्था कायम रखने के लिए यह कदम निरापद है।"

सुखीराम ने हकलाते हुए कहा, "मुखियाजी! हमें चार दिन का समय दो, हम एक लाख रुपए कहाँ से लाएँ?"

सुखीराम को एक सप्ताह का समय मिल गया बैठकी फिर आगामी रविवार को रखी गई, बैठक जुड़ी।

मुखिया ने कहा, "हाँ सुखीराम! क्या विचार है कहो?"

सुखीराम सिर नीचे किए बैठा रहा, रानी की बारी आई तो वह बोली, "मैं ससुराल जाने को तैयार हूँ, जब चाहे मुझे ले जाएँ।"

स्थिति बदली, रामसुख दास ने यह सुना तो प्रसन्न भाव से समधि और मुखिया की ओर देखा। सुखीराम आँखें नीचे किए बैठा था।

मुखिया ने कहा, "अब नई परिस्थिति में समाज, दोनों परिवार की सुख, समृद्धि, बच्चों के भविष्य के मद्देनजर यह हुक्म देता है कि सिर्फ पाँच हजार हर्जाने का रामसुख दास को सुखीराम अदा करेगा और हाँ, पाँच हजार समाज को भी देना होगा···आखिर बहुत समय हमारा इस पचड़े में खराब हुआ है।"

अब सुखीराम क्या कहता, समाज से बाहर तो जा नहीं सकता। सो मन मसोसकर पाँच-पाँच हजार रुपए हर्जाना पटाया और बेटी भी दामाद को सौंपी। इधर समाज के सदस्यों ने रुपए पाए तो उन पाँच हजार का आपस में बँटवारा किया, किसी को दो सौ मिले, तो किसी को तीन सौ रुपए। हाँ, मुखियाजी के हिस्से पूरे पाँच सौ रुपए आए थे।

सा. अ.

सी ३१, प्रेस कॉम्प्लेक्स, ट्रांसपोर्ट नगर
कोरबा-४९५६८८ (छ.ग.)
दूरभाष : ०७७४७९२०८८५

उगते सूरज की लाली

कविता

• संजय कुमार

चिड़िया

वह चिड़िया आकाश में, उड़ती जाती पंख पसार।
कौन भला छीनेगा उससे, ऊँचे उड़ने का अधिकार।
सुबह-दोपहर उड़ती रहती, कभी रुकी और थमी नहीं।
डैने उसके छोटे-छोटे, पर हिम्मत की कमी नहीं।
दूर गगन में चहक-चहककर, हवा से करती है बातें।
बादल से भी करनी होती, उसको रोज मुलाकातें।
यहाँ-वहाँ से दाना चुगतीं, नदी किनारे भी जाती।
पर्वत की चोटी पर चढ़कर, झरने का पानी पी आती।
थक जाती है कभी-कभी तो, खेला करती फुदक-फुदक।
छत की मुँड़ेर से झाँका करती, आँगन में वह उचक-उचक।
हुई शाम अब घिरा अँधेरा, चिड़िया चली पेड़ की डाल।
क्या कल भी तुम आओगी? बच्चे पूछें यही सवाल।

पहली बार

बैलगाड़ी पर चढ़कर, पहली बार देखा गाँव।
खींच कुएँ का ठंडा पानी, पहली बार धोए पाँव।
सुबह-सवेरे घंटी बजती, गाँव के विद्यालय में।
कीर्तन का स्वर गुंजित होता, रोज शाम शिवालय में।
बिरजू काका के घर के आगे, देखा टीला पुआल का।
नदी किनारे मुंडन होता, ढेरी लगता बाल का।
पहली बार चला पगडंडी और खेतों की मेंड़ों पर।
स्वाद चखा कच्ची अमिया का, चढ़ा आम के पेड़ों पर।
दादाजी को देखा मैंने, हुक्का पीते पहली बार।
छोटे-छोटे इन पेड़ों पर, लदे पपीते पहली बार।
पहली बार देख रहा था, फैली इतनी हरियाली।
मन को मेरे मोह रही थी, उगते सूरज की लाली।

सा. अ.

संजय गांधी नगर रोड नं.-१० ए,
हनुमान नगर, पटना-८०००२६
दूरभाष : ८५३९८०८५९६

आशा भी सिंदूरी है

● प्रशांत उपाध्याय

आस में जंगल उगे हैं

राम जाने जिंदगी
है किस बहर में,
आ गए हम हाँफते
से इस शहर में।

औपचारिकता उगाते
प्रीति-गमले,
कामना पर हो रहे हैं
खूब हमले,
स्वप्न अब बंसी बजाते
खँडहर में।

रातरानी दे रही है
दंश अब तो,
रोज बढ़ते दर्द के ही
वंश अब तो,
चाँदनी का रूप बदला
दोपहर में।

नागफनियों सी
हुई हैं भावनाएँ,
द्वेष में डूबी हुईं
सब प्रार्थनाएँ,
शब्द सब देखो
नहाए हैं जहर में।
साँस में तिनके
चुभे हैं फाँस के अब,
आस में जंगल
उगे हैं बाँस के अब,
तैरते हम उम्र की
सूखी नहर में।

दूर कहीं कस्तूरी है

मन कहता कुछ
तन कहता कुछ,
खुद से खुद की दूरी है
कैसी ये मजबूरी है।

आँखों में सपने हैं कितने
यादों में हैं मधुमास अभी,
संबोधन हैं थके-थके पर
महके-महके अहसास अभी
है रूप अभी
है धूप अभी
आशा भी सिंदूरी है,
कैसी ये मजबूरी है।

क्षण भर सुख की अभिलाषा में
जाने कहाँ-कहाँ हम भटके,
भ्रम के दर्पण जितने भी थे
एक-एक कर सारे चटके,
सबकुछ जाना
तब ये माना
बस विश्वास जरूरी है,
कैसी ये मजबूरी है।

साँसों के निर्जन से वन में
चंदन-चंदन यह देह हुई,
हर अनजानी आहट के संग
चुभती प्राणों में एक सुई,
है गाँव कहाँ
हैं पाँव कहाँ
दूर कहीं कस्तूरी है,
कैसी ये मजबूरी है।

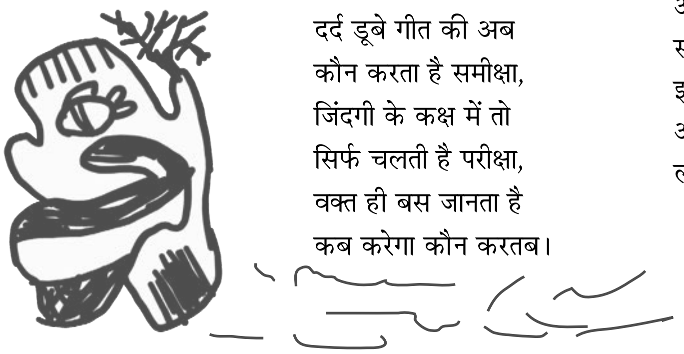

सुपरिचित कवि-लेखक। 'शब्द की आँख में जंगल' (नई कविता-संकलन), 'गीतों में झाँकते दोहे' (दोहा-संकलन) तथा विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में दो सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी, दूरदर्शन से रचनाओं का प्रसारण। 'व्यंग्य सम्राट्', 'साहित्य सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

कौन करता है समीक्षा

अर्थ अपने खो रही हों
रोज ही अच्छाइयाँ जब,
टाँग टूटी आस के तू
मत लगा बैसाखियाँ अब।

हाँफते-से इस नगर में
कौन किसकी आज सुनता,
आदमी चरखा बना है
शोर में भी मौन बुनता,
नींद में हैं नागफनियाँ
स्वप्न मुरझाने लगे सब।

द्वार पर जाकर किसी के
पूछता कब हाल कोई,
भावना जाकर कहीं पर
व्यस्तता के द्वार रोई,
मत निकालो बैठकर
संवेदना के आज मतलब।

दर्द डूबे गीत की अब
कौन करता है समीक्षा,
जिंदगी के कक्ष में तो
सिर्फ चलती है परीक्षा,
वक्त ही बस जानता है
कब करेगा कौन करतब।

उत्तरों की खोज में

जिंदगी के श्यामपट पर
प्रश्न ये किसने उकेरे,
उत्तरों की खोज में ही
बीतते संध्या-सबेरे।
लग रहा डर हर कदम पर
फँस न जाएँ जाल में,
आदमी मछली बना है
वक्त के इस ताल में,
ताल में भी जाल डाले
हँस रहे कितने मछेरे।

बेटियाँ अब सभ्यता की
हो गईं कितनी पराई,
आचरण के भाइयों को
याद कर हिचकी न आई,
दंभ की ससुराल में ही
हो गए इनके बसेरे।

भावना के कक्ष में
आसन जमाए यंत्र हैं,
संवेदना की खिड़कियों से
झाँकते षड्यंत्र हैं,
अनमने घर-द्वार-आँगन
लौट आओ गीत मेरे!

सा अ

३६४, शंभू नगर
शिकोहाबाद-२८३१३५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ६३९८१९७१३८

मालवी बोली की कहावतें

• विनय शर्मा

भावों की अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम भाषा है। लिखकर, बोलकर या संकेतों के द्वारा अपनी भावनाओं और विचारों को व्यक्त किया जाता है। भाषा संप्रेषण के यही तीन रूप हैं, लेकिन जैसे-जैसे भाषा का विस्तार होता है, उसके लिखित और मौखिक दोनों रूपों में भिन्नता आने लगती है। ऐसी स्थिति में शिष्ट तथा सुशिक्षितजन द्वारा व्यवहार में लाया जाने वाला भाषा का लिखित या लिपि-रूप ही मानक-रूप कहलाता है।

फिलवक्त मैं बता दूँ कि भाषा का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है, जबकि बोली एक सीमित क्षेत्र में बोली जाती है। एक भाषा के अंतर्गत कई बोलियाँ और एक बोली के अंतर्गत कई उपबोलियाँ हो सकती हैं। बोली का संबंध ग्राम या मंडल से होता है, बोली को तभी तक बोली कहा जाता है, जब तक कि उसे साहित्य में महत्त्व प्राप्त न हो। बोलियों के बनने का प्रमुख कारण भौगोलिक होता है, इसी वजह से मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र के बोलचाल के लहजे को मालवी बोली के नाम से जाना जाता है। मालवी में कहा गया है कि 'बारा कोस पे बानी बदले पाँच कोस पे पानी'।

वर्तमान में मालवा विंध्य पर्वत श्रेणी के उत्तर में फैला एक विस्तृत पठार है। इसके अंतर्गत संपूर्ण पश्चिमी मध्य प्रदेश और उसके सीमावर्ती पूर्वी राजस्थान के कुछ जिले शामिल हैं, जहाँ मालवी बोली बोली जाती है। वस्तुत: अवंती जनपद (उज्जैन) में मालवगण की सत्ता होने के कारण यह क्षेत्र 'मालवा' कहलाया। यही कारण है कि मालवी का केंद्र भी उज्जैन और इंदौर ही है। इस क्षेत्र में आदर्श मालवी बोली जाती है। हालाँकि मालवी की कुछ उपबोलियाँ भी हैं, जैसे रजवाड़ी, सोंधवाड़ी, उमठवाड़ी और भीली। मालवी बहुत ही मीठी बोली है, इसमें काफी मात्रा में लोक-साहित्य रचा गया है, कथा-वार्त्ता, गाथा, गीत, नाट्य, पहेली और लोकोक्ति के माध्यम से मालवा की संस्कृति को समझा जा सकता है।

अभी हम सिर्फ लोकोक्ति की बात करते हैं, अगर भाषा की समृद्धि और सभ्यता का विकास देखना है तो वह मुहावरों, लोकोक्तियों और कहावतों में देखा जा सकता है। जब जीवन के दीर्घकाल के अनुभव को छोटे वाक्यों में कहा जाता है तो वह कहावत कहलाती है। कहावत को ही मालवी में केनावत या ओखाण या केवाड़ा कहते हैं। सामाजिक जीवन के सुख-दु:ख के तमाम अनुभवों को मालवी की केनावतों या कहें कहावतों में बड़ी खूबसूरती से बयाँ किया गया है। जैसे एक कहावत है—'फोड़ा पड़ना, यानी मुसीबत आना'।

मूलतः प्राध्यापक (हिंदी), विगत २५ वर्षों से प.म.व. गुजराती वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) में पदस्थ। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य, लघुकथा तथा यात्रा-संस्मरण प्रकाशित। एक यात्रा संस्मरण 'गोवा जैसा मैंने देखा' महाराष्ट्र बोर्ड की कक्षा दसवीं की हिंदी पाठ्य-पुस्तक में सम्मिलित।

इसी प्रकार नीति, कृषि, स्वास्थ्य, परंपरा और सामाजिक रीति-रिवाजों पर कई कहावतें मालवा क्षेत्र में समय-समय पर सुनी जा सकती हैं। मालवा क्षेत्र के उन बुजुर्गों की अवश्य ही दाद देना पड़ेगी, जिनके व्यापक अनुभव ने आगे की पीढ़ी को जीने की सही राह बताई है। उनके अनुभवों से निकली तमाम कहावतों का थोड़ा आनंद लें।

एक कहावत तो मालवा के संदर्भ में ही है—'मालव माटी गहन गंभीर डग-डग रोटी, पग-पग नीर।'

१. मूर्ख व्यक्ति को लेकर मालवी बोली में कहावतों का पहाड़ सा खड़ा है—

अक्कल को ढाँढो—निरा गँवार आदमी, अर्थात् जिस व्यक्ति में ढाँढे (पशु) जितनी बुद्धि हो उसके लिए यह कहावत बोली जाती है।

डांस, मकोड़ा, अजाण नर टूटे पण छूटे नी—डांस और मकोड़ा जब शरीर से चिपक जाते हैं तो वे फिर निकलते नहीं हैं, चाहे उनके दो टुकड़े क्यों न हो जाएँ। ठीक उसी प्रकार अजाण या मूर्ख व्यक्ति होते हैं, जो अपनी जिद में स्वयं का ही नुकसान कर बैठते हैं।

घोंघा बसंत—ऐसा मूर्ख, जो अपना भला-बुरा न जानता हो।

रामाजी—भोला परंतु मूर्खतापूर्ण हरकतें करने वाला आदमी।

गेली ग्यारस—ऐसा व्यक्ति जो ज्ञान शून्य हो। रामाजी टाइप।

गँवार खा मरे के उठा मरे—गँवार व्यक्ति कोई भी काम करे, वह स्वयं की हानि तो करेगा ही दूसरे को भी अपने लपेटे में ले लेगा।

२. बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहने या व्यर्थ की डींगें हाँकने वालों के लिए भी मालवी बोली में कहावतों का खजाना भरा पड़ा है—

ढपोर शंख—इस कहावत को लेकर मालवा क्षेत्र में एक कहानी

प्रचलित है, जिसमें एक आदमी को कहीं से एक ढपोर नाम का एक शंख मिलता है, जो सिर्फ काम पूरा करने या इच्छित वस्तु देने का वादा करता है, किंतु देता कभी नहीं। जब इस प्रकार से कोई ऊँची-ऊँची छोड़ता है, तब ऐसे आदमी को ढपोर शंख कहा जाता है।

साहुकारी भरम की बैराँ जात शरम की—साहूकार वही जो पूँजीपति हो, लेकिन कुछ न होते हुए भी जो ऐसा भ्रम फैलाकर रखे कि मैं बड़ा साहूकार हूँ, उसके लिए यह कहावत सौ टका सही है। वाक्य का वजन बढ़ाने के लिए यहाँ एक बात और जोड़ दी कि बैराँ (स्त्री) वही जिसके पास लाज रूपी गहना हो।

के रांड पटेल—फर्जी पदवी पाने की अभिलाषा। दरअसल गाँवों में पंचायत के प्रमुख को पटेल कहा जाता है और उसका तथा उसकी बातों का बड़ा सम्मान किया जाता है। अब जो व्यक्ति कुछ न होते हुए भी यह चाह रखता है कि सब मुझे पटेल कहकर नमस्कार करें, तब ऐसे झूठे आदमी के लिए यह कहावत कही जाती है।

फाक सुपदंड घोण से की तनखा—अपने आप को किसी बड़े पद पर बताना और मूँछों पर ताव देते हुए घूमना कि मैं ये हूँ, मैं वो हूँ, जबकि हकीकत यह है कि प्राप्त तनख्वाह से घर चलाना भी मुश्किल हो रहा है। घर में भले ही फाके पड़ रहे हैं, लेकिन शान जो दिखानी है।

उधारी भोई नचावे—भोई एक नाटक कंपनी को कहते हैं, जो गाँव-गाँव घूमा करती थी और गाँव का धनी आदमी अपने पैसे से भोई नचवाता था, लेकिन जो व्यक्ति झूठी शान दिखाने के खातिर भोई नचाने के लिए उधार तक ले लेता था, तब यह कहावत कही जाती थी।

मरद का दीवाला मसाण में—समाज में स्वयं को प्रतिष्ठित दिखाने के लिए जब कोई व्यक्ति कर्ज में डूब जाता है और चारों तरफ से बुरी तरह फँस जाता है, तब कहा जाता है कि मरद का दीवाला मसाण में यानी ये झूठी शान ही उसकी मौत का कारण बनेगी।

ओछी पूँजी ने अजवाँ में हाथ—यहाँ भी बात वही है, यानी आमदनी अठन्नी और खर्चा रुपया।

घर में पड़े फाँका, बाबूजी फरे बाँका—घर में तो खाने तक के लाले पड़ रहे हैं, लेकिन इस बात की चिंता किए बिना ही घर का मुखिया लोगों से स्वयं को मालदार होने का ढिंढोरा पीटता फिरता है। फाँका (कमी) होने के बावजूद बाँका यानी छैल-छबीले बनकर घूमते फिरना।

घर का तो घट्टी चाटे ने पड़ोसी के आटो मेले—यानी हालत तो ऐसी है कि घर के लोगों को जरा भी आटा नसीब नहीं, लेकिन दूसरों को आटा मेलने (दान करने) के वादे किए जा रहे हैं। व्यर्थ की उदारता का दिखावा करने पर उक्त कहावत सटीक बैठती है।

३. व्यक्ति के बुरे काम पर मालवी बोली का अंदाज भी देखें—

चोरी को माल मोरी में—बुरा काम करके कमाया हुआ धन ठीक उसी तरह खर्च हो जाता है, जैसे मोरी (बाथरूम) में बहाया गया पानी।

बोयो पेड़ बबूल को तो आम काँ से होय—यानी कर्म ही इतने बुरे हैं कि उसका परिणाम तो बुरा होना ही है। जब दूसरों की राह में काँटे बिछा दोगे तो फिर उससे भलाई की उम्मीद रखना बेकार ही है।

अपनी माँ के कोई डाकण नी के—प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सभी वस्तुएँ और आदतें प्यारी होती हैं, चाहे वे खराब ही क्यों न हों। अर्थात् अपनी बुराइयों को नजरअंदाज करना।

माल मामा को ने खटपट भाणजा की—यहाँ यह संदेश है कि दूसरे की दौलत पर बुरी नजर रखना। इस कहावत को रिश्तेदारी से जोड़ा गया है, क्योंकि धोखा हमेशा अपने नजदीक का ही व्यक्ति देता है और मामा-भानजा का संबंध बहुत ही पास का है।

काला भेले गोरो बैठे रंग नी तो गुण तो बदले—इसे कहते हैं संगत का असर। यहाँ काला रंग बुराई और गोरा रंग भलाई का प्रतीक है। यानी बुरे व्यक्ति के भेले (साथ) कोई भी रहे बुराई तो साथ लाएगा ही।

आंधो मूते जग देखे ऊ समझे कोई नी देखे—अपनी बुराई न देखना। हर व्यक्ति यही समझता है कि मुझमें कोई बुराई नहीं है, जबकि दूसरों को आप में कई बुराइयाँ दिख जाएँगी।

खजूर से तो खोड़िया ही हिटे—खजूर के पेड़ की पत्तियाँ जब सूख जाती हैं तो वे कड़क और नुकीली हो जाती हैं, जो काफी नुकसान पहुँचा सकती हैं। इन्हें ही खोड़िया कहते हैं। हालाँकि यह बात और है कि इन पत्तियों से दैनिक उपयोग की कई चीजें बनाई जाती हैं, लेकिन इसके बुरे पक्ष को आधार बनाकर यह कहावत बनाई गई है, जिसका आशय है कि बुरे व्यक्ति के पास तो बुराई ही मिलेगी।

बाप के बाप नी के तो पड़ोसी के काकाजी कदे केवेगो—यह कहावत ऐसे लोगों के लिए है, जो एहसान-फरामोश हैं। इतने कि अपने पिता का भी बुरा कर बैठते हैं। जब पिता को नहीं छोड़ा तो दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार करने की उम्मीद भी बेकार है।

रांड से रंडवा भला ने टूटी जूती से उबाना भला—चरित्रहीन पत्नी होने से अच्छा है कि कुँवारे रहें और टूटी हुई चप्पल पहनने से अच्छा है कि नंगे पैर ही रहें। कहने का आशय यह है कि तमाम बुराइयों से दूर रहने में ही सबकी भलाई है।

महादेवजी का औगण तो नांदियो ही जाने—महादेवजी के अवगुण तो नंदी ही जानता है, अर्थात् हर व्यक्ति में कुछ-न-कुछ बुराई अवश्य होती है, पर उसकी उन बुराइयों को तो वही जानता है, जो उसके नजदीक रहता है।

४. मुसीबत के मारों को लेकर भी मालवी में बहुत कुछ कहा गया है—

नींद बेची ने उजरको मोल लेनो—आगे बढ़कर आफत में पड़ना। बेहतर स्वास्थ्य के लिए नींद बहुत जरूरी है और जब निश्चिंतता होती है, तभी नींद आती है। अब जो व्यक्ति सामने से मुसीबत मोल ले ले तो उसका क्या किया जाए। यही कहावत उसके काम की है।

बढ़ ले बद्री भेरू आयो—जब अचानक से बड़ी मुसीबत आ जाती है तो छोटी मुसीबत को बाय-बाय कहने के लिए यह जुमला कहा जाता है।

दुबला नी रीस घणी—रीस यानी गुस्सा। दुबला व्यक्ति जब मुसीबत में पड़ जाता है, तब क्रोध बहुत करता है। यहाँ दुबला का अर्थ

सिर्फ शारीरिक रूप से कमजोर ही नहीं, बल्कि ऐसा व्यक्ति जो आर्थिक और सामाजिक स्तर पर भी कमजोर हो। अपना हक न मिलने पर बार-बार क्रोधित होता रहता है।

दुबला के दो असाढ़—ऐसा कहा जाता है कि स्वास्थ्य की दृष्टि से आषाढ़ का महीना ठीक नहीं रहता है, लिहाजा सेहतमंद आदमी तो कुशल से रह सकता है, लेकिन दुबले व्यक्ति को स्वास्थ्य संबंधी मुसीबतें आ सकती हैं। फिर ऊपर से दो आषाढ़। आशय यह है कि कमजोर व्यक्ति पर मुसीबतों का पहाड़ ज्यादा टूटता है। एक मुसीबत से छूटे नहीं कि दूसरी तैयार।

आग खावे ने अंगारो मूते—जब दूसरों के लिए कोई व्यक्ति बड़ी मुसीबत बनकर खड़ा हो जाए, तब ऐसे व्यक्ति के लिए यह कहावत बोली जाती है, लेकिन इस कहावत को तभी सुना गया है, जब कोई बच्चा बहुत अधिक शैतानी या मस्ती कर रहा हो।

जे का घर नी हो बाड़ो ओको बड़ो फजीतवाड़ो, जो नी ले बात को आड़ो ओको भी फजीतवाड़ो—यहाँ यह स्पष्ट है कि जिसके घर बाड़ा या कहें बाउंड्रीवाल नहीं होगी, उसके पास किसी-न-किसी प्रकार की मुसीबतें आती ही रहेंगी। उसी प्रकार जो बात का आड़ा नहीं लेगा, यानी सबकी हर बात मानने लगेगा तो उसे भी परेशानी तो होगी ही। कहने का तात्पर्य यह है कि 'न' करना भी सीखें।

५. जो उपकार नहीं मानते, उन्हें आप क्या कहेंगे। जरा देखें—

खाय माटी का ने गीत बीराँ का गाय—खाते तो माटी यानी पति की कमाई का, पर गुणगान करते है बीराँ (भाई) का। हैं न एहसान फरामोश।

कटी आंगली पे नी मूते—गाँवों में ऐसी मान्यता है कि अगर शरीर पर कहीं कट जाए और खून निकलने लगे तो अपनी ही पेशाब लगा लेने से खून बहना बंद हो जाता है। इसी विज्ञान को आधार बनाकर यह कहावत बनी है शायद, लेकिन इस कहावत का अर्थ है कि संकट में भी साथ नहीं देना।

६. ऐसे व्यक्ति, जिनका अपना कोई व्यक्तित्व नहीं है और जो सबकी हाँ में हाँ मिलाते हैं। वे निराश न हों, उनके लिए भी मालवी कहावतों के माध्यम से बहुत कुछ कहा गया है—

बिना पींदा को लोटो—ऐसा आदमी, जिसकी अपनी कोई सोच न हो। जैसे बिना पेंदे का लोटा इधर-उधर लुढ़कता रहता है, ऐसे ही बिना व्यक्तित्व का आदमी भी लुढ़कता रहता है। कभी इधर तो कभी उधर।

ऐसी दो कहावतें और हैं, जिनका भी भावार्थ यही है—रामजी की भी जै ने रावण की भी जै और भरतपुरी लोटो।

७. आलसियों पर तो क्या खूब कहा है—

तू राणी मूँ राणी कुन भरे परेंडा से पाणी—सब आलसी। अगर तू रानी है तो मैं भी रानी हूँ, अब बता कुएँ से कौन पानी भरेगा? यानी कोई नहीं। किसी को कोई काम करना ही नहीं है।

गाड़ी देखी ने पग भारी होय—जहाँ साधन उपलब्ध होते हैं, वहाँ व्यक्ति प्रयत्न नहीं करना चाहता है। जैसे पैदल चलने की बात हो, लेकिन वाहन खड़ा हो तो कौन पैदल चलना चाहेगा।

पूछबा वालो कदी नी डोटाए—आजकल तो रास्ता पता करने के लिए गूगल मेप का सहारा लिया जाता है, लेकिन पहले पूछ-पूछकर चलने की परंपरा थी। इसी आधार पर यह कहावत रची गई है। यानी हर गली या हर चौराहे पर बार-बार पूछकर चलने वाला व्यक्ति कहीं भी डोटाता (भटकता) नहीं है।

आलस और नींद करसाण के खोवे—किसान के सिर्फ दो ही शत्रु हैं—आलस्य और नींद।

८. लालची और संतोषी लोगों की तो बात ही अलग है—

डाकण बेटा ले के दे—ऐसे लोग जो लोभवश हमेशा लेने का ही मन रखते हैं, देने का कभी नहीं उनके ऊपर ये कहावत चरितार्थ होती है।

भली म्हारी टाटी जे में मिले घी बाटी—संतोषी व्यक्तियों पर यह उक्ति फिट बैठती है। मुझे तो मेरा छोटा सा घर ही प्यारा है, जिसमें घी-बाटी यानी अच्छा खाने को मिल जाता है।

९. कृषि और स्वास्थ्य पर भी कहावतों की बहार है—

माघ माह जो परे न सीत, महँगा नाज जानियो मीत—इसमें साफतौर पर यह कहा गया है कि यदि माघ (जनवरी) के महीने में पर्याप्त ठंड नहीं पड़ी तो अनाज का उत्पादन कम हो जाएगा। अगर ऐसा हुआ तो निश्चित तौर पर महँगाई भी बढ़ जाएगी।

चलना भला न कोस बरसात का बेटी भली न एक—पक्की सड़कें आज हैं, लेकिन तब बारिश होने पर कीचड़ में एक कोस चलना भी दुश्वार था। बेटियों का सम्मान आज है, लेकिन तब एक लड़की भी बोझ समझी जाती थी।

हाजी हांडे कईं आँकड़ो दे—आँकड़ा एक प्रकार की दवा भी है। जब किसी स्वस्थ आदमी को कोई स्वस्थ रहने के गुण सिखाता है, तब ऐसा कहा जाता है।

पाणी पीवे धाप नी लागे लू की झाप—गरमी के मौसम में यदि भरपूर पानी पी लिया जाए तो फिर लू लगने का डर नहीं रहता है।

रोग की जड़ खाँसी ने लड़ाई की जड़ हाँसी—आयुर्वेद में कहा गया है कि बिमारी की जड़ खाँसी है। यदि स्वस्थ रहना हो तो खाँसी होते ही उसका उपचार तुरंत करना चाहिए। इसी प्रकार मित्रता या संबंध भंग होने के कई कारणों में प्रमुख है, किसी की शारीरिक रचना, कार्य या व्यवहार को देखकर हँसना।

१०. नीति संबंधी अन्य केवाड़ा—

खोद-खोद मरे ऊँदरो ने जा बैठे भुजंग—किसी की मेहनत का फल जब किसी और को मिलता है, तब ऐसा कहा जाता है। ऐसा अकसर देखा गया है कि कोई चूहा बड़ी मेहनत से मिट्टी खोद-खोदकर अपने रहने के लिए बिल बनाता है और उसमें जाकर बैठ जाता है भुजंग यानी साँप।

मांडना पे टपकी देनो—गाँवों में कच्चे घरों को गोबर से लीपने के बाद खड़िया या गेरू से मांडना बनाने की प्रथा आज भी है। यह बड़ी

मेहनत का काम है, लेकिन जब मांडना कोई और बनाए तथा उस मांडने पर टपकी (बिंदु) कोई और लगाए और कहे कि यह मांडना मैंने बनाया है, तब यह बात कही जाती है। मतलब यह कि काम का श्रेय कोई और ले ले।

बेटी दीजो जान के पानी पीजो छान के—स्पष्ट है कि पानी यदि छानकर पीएँगे तो वह स्वास्थ्य के लिए उत्तम रहेगा, ठीक उसी प्रकार जिस घर में बेटी का ब्याह करना है, उस परिवार को पहले ही देख-परख लेंगे तो बाद में रोड़ा नहीं पड़ेगा।

बड़ा घरे बेटी दी अबे मिलबा का साँसा—कहने का तात्पर्य यह है कि रिश्तेदारी बराबर वालों के साथ करना चाहिए, वरना वह दुःख का कारण बन सकती है।

हाथ जोड़बा से डोकरा नी परने—चाहे कितनी ही मिन्नतें कर लो, पर बुजुर्ग की शादी नहीं हो सकती, अर्थात् यह कहावत ऐसे व्यक्ति के लिए है, जो अयोग्य हो। कितना ही प्रयास कर लो, वह अयोग्य ही रहेगा।

अपने कर्तव्य का निर्वाह करना कितना आवश्यक है, इस बात को कहावतों के नजरिए से जानें—

दूध ने पूत नजर हटताँ ही गया—चूल्हे पर गरम करने के लिए रखे हुए दूध और अपने वयस्क होते पुत्र पर से अगर थोड़ी देर के लिए भी नजर हटा ली तो सब गड़बड़ हो जाएगा। दूध उफन कर बाहर आ जाएगा और पुत्र के बिगड़ जाने का अंदेशा है। तात्पर्य यह है कि कर्तव्य पालन में चूक न होने दें।

भड़ जी तो भटा खाए ने दूसरा के परेज बताए—यानी अपनी बात पर खुद ही अमल नहीं करना और दूसरों से उम्मीद करना। ये भी कह सकते हैं कि कोरा ज्ञान बघारना। अपना कर्तव्य भूल दूसरों को उपदेश देते फिरना।

अन्य महत्त्वपूर्ण कहावतें—

घणा पटेलिया बगड़े गाम—जहाँ एक से अधिक पटेल अर्थात् मुखिया होंगे, वहाँ किसी काम के ठीक से होने की संभावना कम है, क्योंकि सभी अपनी-अपनी जिद पर अड़े रहेंगे, ऐसे में कार्य की कोई ठोस योजना बन ही नहीं पाएगी।

बाप ने तो मारी नी मेंडकी ने बेटो तीरंदाज—जब कोई व्यक्ति अपनी क्षमता से अधिक या कोई अनूठा काम करना चाहता है, तब यह कहावत सामने आती है।

गाड़ी ने लाड़ी देवा की नी वे—गाड़ी और लाड़ी (पत्नी) देने की वस्तु नहीं है। इस बात को संस्कृत में जरा इस तरह से कहा गया है—लेखनी, पुस्तकम्, नारी पर हस्ते न गता गतम्। वर्तमान जीवन-शैली को देखते हुए इस लिस्ट में गाड़ी को भी शामिल कर लिया गया है।

गुड़ खाए ने गुलगुला से परेज करे—मेरे एक मित्र हैं, जो बकरा खाते हैं, पर बिना प्याज का। इस कहावत का अर्थ अब आप समझ गए होंगे।

फूट्या करम फकीर का भरी चलम ढुल जाए—भाग्यहीन लोगों के लिए यह कहावत है। कोई कितने ही खजाने के दरवाजे आपके लिए खोल दे, लेकिन अगर आपके भाग्य में नहीं है तो उसमें से आपको कुछ नहीं मिलेगा।

नीवरो नांदियो—फालतू, बेकार और निठल्ले व्यक्ति को कहा जाता है।

काण्या ढोली के एकज डंको—जो व्यक्ति अपनी ही जिद पर अड़ा रहे और एक ही बात की रट लगाए रखें, तब यह बात कही जाती है।

बनिया मित्र न वेश्या सती, कागा हंस न गधा जती—यहाँ बनिया किसी जाति का न होकर ऐसे व्यक्ति का प्रतीक है, जो कंजूस हो। कंजूस कभी किसी का मित्र नहीं बन सकता है, क्योंकि उसका पूरा ध्यान पैसा बचाने में ही लगा रहता है। ऐसा मित्र आड़े वक्त में कभी मित्रता नहीं निभा पाएगा। वेश्या या चरित्रहीन स्त्री भला क्यों सती होने लगी? कौवा कितना ही मलमल के नहा ले वह हंस नहीं बन सकता है और गधा या अनपढ़ कभी साधु नहीं बन सकता है। प्रवचन देने मात्र से कोई साधु नहीं हो जाता है।

भण्या पण गुण्या कोनी—भण्या यानी पढ़ लिख तो लिये, पर गुण नहीं के बराबर हैं, अर्थात् व्यावहारिकता का अभाव।

पइसा अंट ने विद्या कंठ—बैंक का प्रचलन होने से पहले की यह कहावत है कि पैसा वही जो अंट (जेब) में हो और विद्या वही जो कंठस्थ हो। दोनों कब काम आ जाए।

माँ पे पूत पिता पे घोड़ो घणो नी तो थोड़ो-थोड़ो—यह कहावत थोड़ा वैज्ञानिक आधार लिये हुए है। यहाँ ऐसा माना गया है कि मनुष्य की संतान में अपनी माता के गुणसूत्र पिता की बनिस्बत अधिक होते हैं, जबकि इसके विपरीत स्थिति होती है घोड़े की। घोड़े की संतान पिता के गुणसूत्रों के करीब होती है। किसी व्यक्ति की कार्यप्रणाली को देखकर यह कहावत कही जाती थी। हालाँकि जब प्रशंसा करना हो, तब भी यही कहावत और जब बुराई करना हो, तब भी यही कहावत।

मनक-मनक में आँतरा कोई हीरा कोई काँकरा—प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में अनूठा होता है। कोई बहुत गुणी तो कोई बहुत गँवार।

घरे घर गारा का चूला—कोरोना काल में तो यह बात सौ फीसद सच साबित हो रही है। शब्दार्थ यह है कि हर घर में गारा (मिट्टी) के चूल्हे हैं, अर्थात् सब की स्थिति एक जैसी ही है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मालवी बोली की कहावतों का फलक बहुत बड़ा है, जिसमें जीवन के हर पहलू को बड़ी संजीदगी से प्रस्तुत किया गया है। जिंदगी में कहीं सुख की छाया है तो कहीं दुःख की धूप, लेकिन प्यारी-प्यारी इन कहावतों में है इन सबका मिलाजुला संगम।

सा अ

१८७-बी अंबिकापुरी (मेन)
ज्ञान बहार स्कूल के पीछे
एयरपोर्ट रोड, इंदौर-४५२००५
दूरभाष : ९८२६०३७१०६

गहरा निःश्वास

मूल : **रविंदर सिंह सोढी**

अनुवाद : **नव संगीत सिंह**

श्री रविंदर सिंह सोढी जाने-माने पंजाबी लेखक हैं, जिनके रचना-संसार में कुल चौदह पुस्तकें (कविता, नाटक, आलोचना, कहानियाँ, अनुवाद आदि) सम्मिलित हैं। वह एक प्रतिष्ठित आवासीय पब्लिक स्कूल 'द पंजाब पब्लिक स्कूल', नाभा (पंजाब) से पंजाबी विभाग के प्रमुख के रूप में सेवानिवृत्त हुए। पंजाबी नाटकों की उनकी पुस्तक 'दो बुहियाँ वाला घर' को १९८७ में पंजाब भाषा विभाग द्वारा 'ईश्वर चंद्र नंदा पुरस्कार' से सम्मानित किया गया था। श्री जयवंत दलवी द्वारा उनके मराठी नाटक 'संध्या छैया' का पंजाबी अनुवाद, 'बूढ़ी मैना दा गीत' के शीर्षक के पंजाब के भाषा विभाग द्वारा प्रकाशित किया गया।

मोबाइल फोन की घंटी फिर बजी। अजीत ने मोबाइल पर देखा, लेकिन उठाया नहीं। पिछले आधा घंटे से एक ही नंबर से पाँच-छह कॉल आ चुकी थीं, लेकिन अजीत ने एक बार भी बात नहीं की। उसके बेड के बगल में पड़ी छोटी टेबल पर एक पेग भी बना हुआ था। वह बार-बार सामने की दीवार पर लगी सीमा की फोटो को देख रहा था। कभी-कभी बेड पर पड़ी सीमा की फ्रेम में लगी फोटो को दोनों हाथों में उठाकर उसे निहारने लगता। ऐसा करते समय उसका गला रुँध जाता।

अभी कुछ साल पहले ही उसकी पत्नी बिस्तर के दूसरी तरफ पड़ी थी। हालाँकि बीमारी के कारण वह ज्यादा चल-फिर नहीं पाती थी, लेकिन अजीत के लिए सीमा का साथ होना ही काफी था। आज पुरानी यादों ने अजीत के दिलो-दिमाग में बेचैनी सी पैदा कर दी।

अजीत और सीमा अपनी इकलौती बेटी राबिया के साथ खुशहाल जीवन जी रहे थे। विश्वविद्यालय के दो साल पूरे करने के बाद राबिया को आगे कानून की पढ़ाई के लिए न्यूयॉर्क के एक विश्वविद्यालय में दाखिला मिल गया। अजीत और सीमा ने उसे समझाने की बहुत कोशिश की कि वह शिकागो के ही किसी बढ़िया विश्वविद्यालय में पढ़ाई कर ले, लेकिन राबिया ने इनकार कर दिया था। वह अमेरिका के किसी स्थापित विश्वविद्यालय से ही वकालत की पढ़ाई करना चाहती थी। न्यूयॉर्क में पढ़ाई एवं रहने का बहुत खर्च होना था। खर्च की उनको ज्यादा परवाह नहीं थी, क्योंकि अजीत की मिलवाकी में अकाउंटेंसी की अपनी फर्म थी और सीमा की नर्सिंग की नौकरी। यद्यपि वह सप्ताह में दो या तीन बार ही काम पर जाती। वे चाहते थे कि राबिया किसी निकट की यूनिवर्सिटी में दाखिला ले ले, ताकि वे उसे महीने में दो बार मिल आया करें। अंततः उन्हें राबिया की बात से सहमत होना पड़ा।

कभी-कभी जब जिंदगी में मोड़ आने लग जाएँ तो जीवन की दिशा ही बदल जाती है। राबिया घर से दूर क्या गई, अजीत और सीमा के लिए तो समय काटना ही मुश्किल हो गया। अजीत तो फिर भी दिनभर अपने काम में व्यस्त रहता, लेकिन सीमा के लिए घर में अकेले रहना मुश्किल हो गया था। यह तो नहीं था कि राबिया सारा दिन अपनी माँ के पास ही बैठी रहती थी। उसका अपना आधा दिन तो विश्वविद्यालय में ही बीत जाता। घर आकर वह अपने कमरे में घुस जाती या अपनी किताबों में खो जाती। सप्ताह में चार दिन वह तैराकी के लिए जाती थी। वह पढ़ाई में भी होशियार थी। घर में वह अपनी कोई-न-कोई असाइनमेंट करती रहती थी। शनिवार, रविवार को वह कभी अपने दोस्तों के साथ बाहर चली जाती तो कभी कोई सामाजिक कार्य के लिए घर से बाहर रहती थी। लेकिन फिर भी सीमा उसका इंतजार करती रहती। राबिया के न्यूयॉर्क जाने के बाद तो यह इंतजार भी खत्म हो गया। सीमा अकेली बैठी रहती और उसे डिप्रेशन रहने लगा। उसकी ऐसी हालत देखकर अजीत ने जल्दी घर आना शुरू कर दिया। उसने सीमा से कई बार कहा भी कि उसे अपने काम पर ज्यादा समय लगाना चाहिए, ताकि उसका मन लगा रहे, लेकिन वह नहीं मानी।

अजीत ने अपने एक करीबी दोस्त डॉ. राघव को फोन किया और सीमा के बारे में बात की। राघव ने उसे दो दिन बाद आने के लिए कहा। नियत दिन पर अजीत और सीमा डॉ. राघव के क्लीनिक पहुँचे। डॉ. राघव ने सीमा का अच्छी तरह से चेकअप किया और कई बातें पूछीं। सीमा ने बताया कि पिछले एक महीने से उसकी भूख कम हो रही है, थकान भी जल्दी हो जाती है और उसे ऐसा महसूस होता है, जैसे उसके कपड़े भी ढीले होते जा रहे हैं। जब राघव ने सीमा का वजन चेक किया तो उसका आखिरी रुटीन चेकअप के बाद से वजन लगभग छह किलो

कम हो गया था। डॉ. राघव कुछ चिंतित हो गए। उन्होंने सीमा को कुछ परीक्षण बताए और बायोप्सी करवाने के लिए कहा।

हफ्ते बाद जब डॉक्टर को सीमा की रिपोर्ट्स मिलीं तो वह भी घबरा गए। उन्होंने रिपोर्ट्स दो-तीन बार देखीं और झट से अजीत को फोन किया कि वह ऑफिस से फ्री होकर उसे क्लीनिक में मिले। राघव की बात सुनकर अजीत थोड़ा घबरा गया। वह ऑफिस से डॉ. राघव के पास दौड़ा। राघव अभी अपने मरीजों को देख रहे थे। लगभग आधे घंटे के बाद जब वह फ्री हुए तो ही अजीत डॉक्टर से मिल पाया। अजीत को देखकर राघव ने उसे कुरसी पर बैठने का इशारा किया और अपने कंप्यूटर से रिपोर्ट्स वाली फाइल निकाली, लेकिन बोला कुछ नहीं। डॉ. राघव की चुप्पी से अजीत घबरा गया और बोला, "डॉक्टर, सबकुछ ठीक तो है?"

"अगर सब ठीक होता तो मैं तुम्हें अकेले में नहीं बुलाता।"

"क्या बात, समथिंग सीरियस!"

"सिर्फ सीरियस ही नहीं, बट वेरी सीरियस।" यह कहते हुए राघव अपनी कुरसी से उठे और अजीत के पास आए। उन्होंने उसके कंधे पर हाथ रखा और कहा, "सीमा इज डायगनोज्ड विद ब्लड कैंसर एंड दैट टू विद एडवांस स्टेज।"

"ओ नो, राघव, नो।"

"सॉरी अजीत, मैं तुम्हें झूठी तसल्ली नहीं दे सकता। ऐंड प्रॉब्लम इज दिस, सीमा हरसेल्फ इज ए नर्स एंड वी कांट कीप इट ए सीक्रेट। मोरओवर, पेशेंट से सच्चाई छिपानी भी नहीं चाहिए। जितनी जल्दी हो सके, पेशेंट को असली बीमारी का पता लगना चाहिए। एक बार तो उसे शॉक लगता है, लेकिन धीरे-धीरे वह बीमारी को फेस करने के लिए मेंटली तैयार हो जाता है।"

"इलाज!" एकमात्र शब्द था, जो अजीत के मुँह से बड़ी मुश्किल से निकला।

"कुछ और परीक्षण करने होंगे। उनकी रिपोर्ट्स आने के बाद देखते हैं।" इतना कहकर डॉक्टर चुप हो गए। उन्होंने अजीत के दोनों कंधों पर हाथ रखकर कहा, "अजीत, आम लोगों की नजर में मेडिकल साइंस ने बेशक बहुत प्रगति की है, लेकिन बीइंग ऐ डॉक्टर आई नो वेरी वेल दैट फॉर द टाइमबीइंग मेडिकल साइंस हैज इट्स ओन लिमिटेशन्स। यू आर वेरी कलोज टु मी। वी विल ट्राई आवर बेस्ट टु सेव सीमा, बट हर रिपोर्ट्स आर नॉट फेवरेबल। आई डोंट वांट टु गिव यू ए फाल्स होप। दिस इज वेरी कलियर। मैंने ब्लड कैंसर विशेषज्ञ डॉ. रुद्रफोर्ड के साथ केस डिस्कस किया है। मैंने उन्हें सभी रिपोर्ट्स भेज दी हैं। उन्हें रिक्वेस्ट की है कि शीघ्र ही सीमा को चेक करके ट्रीटमेंट शुरू करें। लेट्स वेट फार हिज कॉल।"

दो दिनों के बाद ही डॉ. रुद्रफोर्ड का फोन आ गया। उन्होंने अगले दिन ही सीमा को बुलाया था। सीमा को पता था कि रुद्रफोर्ड तो ब्लड कैंसर का सबसे अच्छा डॉक्टर है। उनसे तो दो-तीन महीने से पहले

अध्यापन में लगभग ३५ वर्ष का अनुभव। अनुवाद के क्षेत्र में हिंदी से पंजाबी में अनूदित २४ पुस्तकें प्रकाशित। अनेक संस्थानों द्वारा सम्मानित। २०१७ में पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला से प्राध्यापक के पद से सेवामुक्त। संप्रति अकाल यूनिवर्सिटी तलवंडी साबो (बठिंडा, पंजाब) में प्राध्यापक के रूप में कार्यरत।

टाइम ही नहीं मिलता। उसे आश्चर्य हुआ कि वे डॉ. रुद्रफोर्ड के पास क्यों जा रहे हैं? उसने अजीत से पूछा भी, लेकिन अजीत ने गोलमोल जवाब दिया कि डॉ. राघव ने ही रेफर किया है। सीमा मन-ही-मन चिंतित थी कि क्या उसे ब्लड कैंसर है और यदि हाँ, तो कौन सी स्टेज है? उसे लगा कि पिछले चार-पाँच दिनों से अजीत कुछ चुप-चुप सा है। क्या अजीत को उसकी बीमारी के बारे में पता है? और अगर पता है तो उसने बात क्यों नहीं की? सीमा को संदेह था कि कुछ तो गड़बड़ है। एक नर्स होने के कारण उसे अपने शरीर के बदलते लक्षणों से यकीन हो गया कि उसे ब्लड कैंसर है। जब डॉ. राघव ने बायोप्सी करवाने के लिए कहा था, तब भी उसे कुछ संदेह हुआ था।

अगले दिन जब सीमा और अजीत डॉ. रुद्रफोर्ड के पास पहुँचे तो डॉक्टर का पहला वाक्य सुनकर ही सीमा सुन्न हो गई। "सॉरी सीमा, यू आर डायग्नोजड विद लियुकीमिया। डॉ. राघव हैज डन राइट थिंग बाए रिकमेंडिंग बायोप्सी आलसो। आइ एम रिकमेंडिंग टू मोर टेस्टस एंड आफ्टर दैट आइ विल स्टार्ट माइ ट्रीटमेंट। बट वन थिंग इज वेरी कलियर दैट दियर इज नो अदर ऑपशन दैन कीमोथेरैपी। ऐज यू आर ए क्वालीफाईड नर्स, यू नो वेरी वेल अबाउट द साइड एफेक्टस ऑफ कीमोथेरैपी। बी ब्रेव, एंड कीप युअर विल पावर स्ट्रोंग।"

इसके बाद डॉक्टर ने और भी कई बातें पूछीं। सीमा कई बातों का उत्तर दे देती थी और कभी-कभी उसकी जगह अजीत को उत्तर देना पड़ता था, क्योंकि सीमा कुछ बोल नहीं सकती थी।

डॉक्टर के पास से लौटते समय सीमा ने कोई बात नहीं की। वह आगे की सीट पर बैठने के बजाय पीछे की सीट पर लेट गई। अजीत को भी समझ नहीं आ रहा था कि वह सीमा से क्या बात करे। अजीत समझ रहा था कि उस समय सीमा की मनोदशा क्या थी। अचानक ही ब्लड कैंसर की बात सुनकर उसका चुप हो जाना स्वाभाविक था।

सीमा की आँखों के सामने अँधेरा सा छा गया। कार की पिछली सीट पर लेटे हुए उसे ऐसा लग रहा था, जैसे वह किसी गहरी खाई में गिरती जा रही है। वह मदद के लिए किसी को पकड़ने की कोशिश कर रही है, लेकिन उसके हाथों में कुछ नहीं आ रहा। वह अजीत और राबिया को आवाजें लगा रही है, लेकिन उसकी आवाज ही नहीं निकल रही। कभी-कभी उसे ऐसा महसूस होता, जैसे कोई बड़ा सा पक्षी उसे अपने पंजों में पकड़कर आसमान की ओर उड़ा जा रहा है। वह उसके

पंजों से बचने के लिए संघर्ष कर रही थी, लेकिन पंजों की पकड़ और मजबूत होती जा रही थी। वह देख रही थी कि अजीत और राबिया नीचे खड़े थे, लेकिन उसको बचाने के लिए कुछ नहीं कर रहे थे। गाड़ी चलाते समय अजीत ने कई बार पीछे मुड़कर देखा। उसके मन में भी बहुत बुरे से खयाल आ रहे थे। उसे कार चलाने में भी दिक्कत हो रही थी। वह कार पार्क करके कुछ देर आराम करना चाहता था, लेकिन फिर उसने सोचा कि जल्दी से घर पहुँचकर सीमा को आराम के लिए एक बेड पर लिटा दिया जाए।

थोड़ी देर बाद वह घर पहुँच गया। सीमा कार की पिछली सीट पर ही पड़ी रही, जैसे वह सो गई हो। अजीत ने दो-चार आवाजें भी लगाईं, पर सीमा नहीं उठी। अजीत ने कार को गैराज में लगाने की बजाय ड्राइव वे पर ही रोक दिया और खुद ड्राइविंग सीट पर बैठा रहा। थोड़ी देर बाद उसने आकर कार का पिछला दरवाजा खोला और सीमा को हिलाया। सीमा एक झटके से उठी। अजीत ने उसका हाथ पकड़कर उठाने की कोशिश की, लेकिन वह खुद ही बाहर आ गई। दोनों बिना कुछ बोले अंदर चले गए।

सीमा अपने बिस्तर पर चली गई। अजीत रसोई में जाकर चाय बनाने लगा। वह चाय के साथ कुछ स्नैक्स भी ले आया। दोनों ने चुपचाप चाय पी।

थोड़ी हिम्मत करके अजीत सीमा के पास बैठ गया और उसका हाथ पकड़कर बोला कि आजकल हर बीमारी का इलाज मौजूद है। राघव ने मुझे बताया था कि रुद्रफोर्ड कैंसर के सबसे अच्छे डॉक्टर हैं। यह तो अच्छा हुआ कि हमें समय रहते पता चल गया। चार-पाँच कीमोथेरैपी के बाद तुम बिल्कुल ठीक हो जाओगी।

अब तक सीमा ने खुद को कुछ हद तक सँभाल लिया था। उसने अजीत की ओर प्यार से देखा और हल्की सी मुसकान के साथ कहा, "होप फार द बेस्ट! एंड बी परीपेअर फार द वर्स्ट!"

"कैसी बातें कर रही हो तुम?" इतना कहते हुए अजीत ने सीमा को अपने गले से लगा लिया। हालाँकि उसने खुद को संयत रखने की बहुत कोशिश की, फिर भी वह अपनी आँखों के रुके नमकीन पानी नहीं रोक सका। सीमा का भी यही हाल था।

दस दिन बाद सीमा की कीमोथेरैपी शुरू हो गई। कीमोथेरैपी ने अपना असर भी दिखाना शुरू कर दिया।

अपनी माँ की बीमारी के बारे में सुनकर राबिया भी कुछ दिनों के लिए घर आई। उसने अपने डैड से कहा कि वह फिलहाल अपना एक कोर्स ड्राप करके मम्मी के पास रहेगी। लेकिन अजीत नहीं माना। उसने सीमा की देखभाल के लिए एक नर्स की व्यवस्था कर ली और खुद ने भी जल्दी घर आना शुरू कर दिया।

अजीत को पता था कि सीमा अपनी बीमारी के कारण मानसिक रूप से परेशान है। वह सीमा के साथ जितना संभव हो सकता, उतना समय बिताने की कोशिश करता था। एक तरह से उसने अपनी फर्म का काम अपने एक-दो भरोसेमंद लोगों पर छोड़ दिया था, लेकिन फिर भी उसे कुछ समय के लिए कार्यालय में जाना ही पड़ता। वह बहुत कोशिश करता कि सीमा अपनी बीमारी को कुछ समय के लिए भूलकर और अन्य चीजों में अपना दिल लगाने की कोशिश करे। सीमा भी यह सब महसूस कर रही थी। कभी-कभी अजीत को ऐसा लगता था, जैसे सीमा अपनी उम्र पूरी कर रही है। यह सोचते ही उसके मन में एक हूक सी निकल जाती। कितनी मेहनत से उसने सीमा के साथ मिलकर यह घर बनाया था। उसे याद आया, जब वह अपनी शादी के तुरंत बाद अमेरिका आ गए थे, तो उन दोनों को कितनी मेहनत करनी पड़ी थी। कभी उसने टैक्सी चलाई, कभी उसने किसी स्टोर में काम किया। वह दिन में दो-दो शिफ्टों में काम करता था, परंतु सीमा को काम नहीं करने देता था, ताकि वह अपने नर्सिंग के पेपर पास कर सके। सीमा ने चूँकि भारत से नर्सिंग की थी और वह पढ़ाई में भी बहुत अच्छी थी, इसलिए उसने दो साल में पेपर पास कर लिए और उसे नौकरी भी मिल गई। उसके बाद अजीत ने अपना काम कुछ कम कर दिया और सी.पी.ए. की पढ़ाई शुरू कर दी। तीन साल में ही उसने सारे पेपर पास कर लिए और एक अकाउंटस फर्म में काम करने लग गया। इसी बीच राबिया का जन्म हुआ। तीन साल की नौकरी के बाद अजीत ने अपनी खुद की अकाउंटस फर्म खोल ली।

अजीत ने सीमा से कई बार सुना था कि वह खुद को भाग्यशाली मानती है कि उसे अजीत जैसा जीवनसाथी मिला, जो मेहनती होने के साथ-साथ सीमा के प्रति ईमानदार भी है। सीमा कई बार मजाक-मजाक में अजीत को कह भी देती थी कि हमेशा उसे ही परेशान करते रहते हो, कभी इधर-उधर भी झाँक लिया करो। उसकी ऐसी बातें सुनकर अजीत हँस देता था।

कीमोथेरैपी के कारण सीमा के सर के बाल पूरी तरह झड़ गए और शारीरिक रूप से भी वह काफी कमजोर हो गई थी। उसे बिस्तर से उठने में भी दिक्कत होती थी। एक दिन रविवार को अजीत घर पर ही था। राबिया ने फोन करके बताया कि वह कुछ दिनों के लिए उनके पास आ रही है। सीमा से ज्यादा बोला नहीं जाता था। अजीत ने ही राबिया से बात की। उसी ने अपनी ओर से राबिया को यकीन दिलाया कि सीमा अब पहले से बेहतर महसूस कर रही है।

राबिया से बात करने के बाद अजीत ने सीमा की ओर देखा। सीमा के चेहरे पर परेशानी झलक रही थी। उसने अजीत को अपने करीब आने का इशारा किया। जब अजीत उसके करीब आया तो सीमा ने उसे सहारा देकर बिठाने का इशारा किया। सीमा के चेहरे से लग रहा था कि उसे बैठने में भी दिक्कत हो रही है, लेकिन वह बैठी रही। उसने अजीत के दोनों हाथ अपने हाथों में ले लिये। उसकी आँखें नम थीं। "अब और तकलीफ नहीं सही जाती।" इतना कहकर सीमा फूट-फूटकर रोने लगी। अजीत का भी गला रुँध आया।

"सीमा, अभी तो बस दो कीमोथेरैपी और हैं। उसके बाद सब ठीक हो जाएगा।" अजीत की अपनी आँखें बेशक भर आई थीं, तो भी उसने सीमा की आँखें पोंछते हुए कहा।

"नहीं अजीत, यह झूठी तसल्ली है। मुझे लगता है कि मैं ज्यादा देर तक तुम्हारे साथ नहीं रह पाऊँगी।" इसके बाद उससे कुछ नहीं कहा गया।

"सीमा, तुम ऐसा क्यों कहती हो? तुम्हें कुछ नहीं होगा। अभी हम दोनों को साथ-साथ बहुत काम करने हैं। राबिया की पढ़ाई खत्म होने के बाद हम उसके साथ यूरोप की सैर का प्रोग्राम बनाएँगे। उसकी शादी भी करनी है। उसकी शादी के बाद मैं अपना काम काफी हद तक कम कर दूँगा, ज्यादा समय तुम्हारे साथ घर पर रहूँगा या सैर-सपाटा।" अजीत ने फीकी सी हँसी के साथ कहा।

"अजीत, मेरा मन भी अभी जाने को नहीं कर रहा, लेकिन शायद भगवान् को कुछ और ही मंजूर है। सच तो यह है कि मैं अभी मरना नहीं चाहती···।"

जब अजीत ने सिर ऊपर उठाया तो वह सिसक रहा था। सीमा ने अपनी कमजोर भुजाओं से उसे अपने सीने से लगा लिया। "अजीत, जीवन में कई बार मुझे ऐसा लगा है, जैसे मैं तुम्हारी पत्नी भी हूँ और तुम्हारी माँ भी। कभी-कभी तुम्हारी हरकतें बिल्कुल बच्चों जैसी होती हैं। देखो, न तो स्त्री-पुरुष इस दुनिया में एक साथ आते हैं और न ही एक साथ जाते हैं। दोनों में से किसी एक को तो पहले जाना ही होता है।" अब यह भगवान् की इच्छा है कि मैं तुम्हें बीच में ही छोड़कर जा रही हूँ। अगर मुझे आज से दस साल बाद जाना होता, तो मैं यह बात कभी नहीं कहती।"

अजीत ने सीमा के मुँह पर हाथ रखकर उसे चुप कराने की कोशिश की।

सीमा ने उसका हाथ अपने हाथ में पकड़ते हुए कहा, "अजीत, मैं कुछ दिनों से तुमसे दिल की बातें करना चाहती थी, लेकिन हिम्मत नहीं हो पा रही थी। प्लीज, आज मुझे मत रोको। कहीं मेरे मन की बातें मन ही में न रह जाएँ।"

अजीत सीमा से कोई उल्टी-सीधी बात नहीं सुनना चाहता था, इसलिए उसने सीमा को रोका और कहा, "ज्यादा न बोलो। तुम्हारी साँस चढ़ जाएगी।"

सीमा ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया और कहा, "मुझे तुम पर खुद से ज्यादा भरोसा है। इसलिए मुझे इस बात की ज्यादा चिंता है कि तुम मेरे बाद अकेले कैसे रहोगे?"

अजीत ने उसे बात करने से रोकने की कोशिश की, लेकिन सीमा ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, "तुम्हारी अभी कोई खास उम्र नहीं हुई। राबिया अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद मैथ्यू से शादी कर लेगी। तुम अकेले अपना जीवन कैसे जीओगे? मेरी बात मानो, मेरे बाद अपने लिए कोई···" अपनी बात पूरी करने से पहले ही उसका गला रुँध गया। उससे बोला नहीं जा रहा था और उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

अजीत ने सीमा को अपनी बाँहों में भर लिया। वह भी रो रहा था। वे चार-पाँच मिनट तक एक-दूसरे से लिपटे रहे। आखिरकार अजीत ने सहज होते हुए सीमा से कहा, "सीमा, तुम मुझे ऐसी बेकार बातों से दुःखी क्यों करती हो? मैं पहले से ही बहुत परेशान हूँ, तुम मुझे और अधिक परेशान मत करो।"

"अजीत, तुम सच्चाई से भाग रहे हो। मैं भविष्य के बारे में सोच रही हूँ। यह ठीक है कि मैं अपनी बीमारी से परेशान हूँ, लेकिन मैं जो कह रही हूँ, उसे धैर्य से सोचो। तुम्हें अपने बारे में कुछ-न-कुछ सोचना होगा। मैं तुम्हारे बारे में चिंता करते हुए मरना नहीं चाहती। राबिया की मुझे कोई चिंता नहीं है। वह अमेरिका के माहौल में पली-बढ़ी है। ऐसा नहीं है कि उसे मेरे जाने का दुःख नहीं होगा, लेकिन वह जल्द ही अपने नए जीवन को अपना लेगी। मुझे सिर्फ तुम्हारी चिंता है कि तुम्हारा खयाल कौन रखेगा।" इतना कहते-कहते सीमा का गला सूख गया। उसे खाँसी छिड़ आई। अजीत ने उसे पानी पिलाया। पानी पीने से वह कुछ ठीक हो गई। उसने अजीत की ओर देखा। वह झुककर बैठा था। सीमा ने उसे धीरे से हिलाया और कहा, "अजीत!"

जब अजीत ने सिर ऊपर उठाया तो वह सिसक रहा था। सीमा ने अपनी कमजोर भुजाओं से उसे अपने सीने से लगा लिया। "अजीत, जीवन में कई बार मुझे ऐसा लगा है, जैसे मैं तुम्हारी पत्नी भी हूँ और तुम्हारी माँ भी। कभी-कभी तुम्हारी हरकतें बिल्कुल बच्चों जैसी होती हैं। देखो, न तो स्त्री-पुरुष इस दुनिया में एक साथ आते हैं और न ही एक साथ जाते हैं। दोनों में से किसी एक को तो पहले जाना ही होता है।" अब यह भगवान् की इच्छा है कि मैं तुम्हें बीच में ही छोड़कर जा रही हूँ। अगर मुझे आज से दस साल बाद जाना होता, तो मैं यह बात कभी नहीं कहती।"

"सीमा, मेरी बात का जवाब दो···" अजीत ने खुद को सँभालते हुए सीमा की आँखों में आँखें डालकर कहा।

सीमा कुछ नहीं बोली।

"अगर तुम्हारी जगह मैं इस स्थिति में होता तो क्या तुम ऐसा कर

पातीं?" यह कहते-कहते अजीत का गला रुँध गया।

"मुझे पहले से ही पता था कि तुम मुझसे यह जरूर पूछोगे। देखो, स्त्री और पुरुष में बहुत बड़ा अंतर होता है। यहाँ तक कि पत्नी को भी पति के बिना रहना मुश्किल है। मानसिक साथ के साथ-साथ शारीरिक साथ भी दोनों को चाहिए। लेकिन महिलाएँ अपना दु:ख दूसरों से बाँट लेती हैं, दिल के गुबार को आँखों से बहाकर अपना दिल हल्का कर लेती हैं, जबकि पुरुष अपना दु:ख अपने तक ही सीमित रखते हैं, जिससे वे अंदर से टूट जाते हैं···।"

अभी सीमा की बात जारी थी कि राबिया का फोन फिर से आ गया।

उनकी बात बीच में ही रह गई। अजीत राबिया से बातें करने लगा और सीमा ने अजीत की ओर देखकर एक लंबी आह भरी। उसे दु:ख था कि उनकी बातचीत बीच में ही रह गई। उसके बाद सीमा को यह बात करने का दुबारा मौका ही न मिला। वह मन-ही-मन सोचती रही कि उसके बाद अजीत का क्या बनेगा और यह बात अपने दिल में लेकर ही वह अजीत की दुनिया से हमेशा के लिए रुखसत हो गई।

अब अजीत के लिए समय बिताना मुश्किल हो गया था। हालाँकि जब पहली बार डॉ. राघव ने उसे सीमा की बीमारी के बारे में बताया था, तो वह चिंतित जरूर हुआ था, लेकिन उसे नहीं पता था कि यह समय इतनी जल्दी आ जाएगा। उसे बार-बार सीमा की बात याद आ रही थी कि उसके बिना उसे समय काटना मुश्किल हो जाएगा।

राबिया कुछ दिनों के लिए अपने डैड के पास रहकर चली गई थी। दरअसल उसे अपनी कुछ असाइनमेंट्स जल्दी सबमिट करवानी थीं और उनके लिए लाइब्रेरी से कुछ किताबों की बहुत आवश्यकता थी।

अजीत कई दिन अपने दफ्तर न गया। उसके पुराने कर्मचारी ही काम चला रहे थे।

सीमा के जाने के करीब तीन महीने बाद ही अजीत की जिंदगी में एक नया मोड़ आया। एक बार उसे अपनी नई क्लाइंट के घर जाना पड़ा। पैर में चोट लगने के कारण क्लाइंट ज्यादा चल-फिर नहीं सकती थी। अजीत के किसी करीबी ने उस महिला को अजीत के बारे में बताया था। अजीत तीन-चार बार उससे मिलने उसके घर गया।

पचास वर्षीय हिलेरी अपने पिता से मिले बड़े कारोबार को अकेले ही सँभाल रही थी। लेकिन उसके पहले सी.पी.ए. ने उसके मैनेजर के साथ मिलकर उसे बहुत नुकसान पहुँचाया था। आगे की धोखाधड़ी से बचने के लिए वह एक अच्छी फर्म से संपर्क करना चाहती थी।

अजीत ने उसके सारे कागजात चेक किए और कई बातें पूछीं। सारे कागजात अपने बैग में रखने के बाद उसने हिलेरी से कहा कि उसे सबकुछ चेक करने और नया अकाउंट बनाने में दो-चार दिन लगेंगे। उसके बाद ही वह कुछ बता पाएगा।

तीन दिन बाद अजीत ने हिलेरी को फोन किया और शाम को उसके घर पहुँच गया। उसने हिलेरी को बताया कि शुक्र है कि पिछले दो वर्षों में जितना उनका नुकसान हुआ है, उसकी भरपाई पिछले दो सालों के रिफंड से पूरी हो जाएगी। यह सुनकर हिलेरी खुश हो गई। अजीत ने बहुत से कागजात पर उसके हस्ताक्षर करवाए और कहा कि उसे एक महीने के भीतर रिफंड मिल जाएगा।

अजीत के आने से पहले ही हिलेरी ने कॉफी का प्रबंध कर रखा था। कॉफी पीते हुए दोनों इधर-उधर की बातें करते रहे। अजीत को भी घर जाने की जल्दी नहीं थी। उसे पता था कि घर जाकर उसे अकेले समय बिताना मुश्किल हो जाता है। करीब एक घंटे बाद अजीत जाने के लिए उठ खड़ा हुआ। हिलेरी ने कहा कि अगर वह जल्दी में नहीं है तो उसे रात का खाना खाकर जाना चाहिए। अजीत हिलेरी को मना नहीं कर सका।

हिलेरी ने अजीत से उसकी पसंद पूछकर खाना ऑर्डर किया और अपनी छड़ी के सहारे वाइन की बोतल लाने के लिए उठने लगी। अजीत ने उसकी हालत देखकर कहा कि वह बैठी रहे, वह खुद फ्रिज से बोतल ले आएगा।

अजीत वाइन की बोतल और दो गिलास ले आया और दोनों बातें करने लगे। बातों-बातों में अजीत ने कहा कि उसकी पत्नी की तीन महीने पहले कैंसर से मृत्यु हो चुकी है और उसकी एकमात्र बेटी न्यूयॉर्क में लॉ कर रही है। हिलेरी ने उसे बताया कि वह अभी अविवाहित है, क्योंकि उसके दोस्तों ने उसे दो बार धोखा दिया है। वास्तव में वह दोस्त थे ही नहीं। दोस्त होने का दिखावा करके उसकी संपत्ति हड़पना चाहते थे। इसके पश्चात् उसने शादी का खयाल ही छोड़ दिया। हिलेरी ने अजीत से पूछा कि क्या उसने अपनी पत्नी की मौत के बाद दोबारा शादी के बारे में कुछ नहीं सोचा? अजीत का जवाब सुनकर हिलेरी हैरान रह गई, "सीमा मेरा पहला और आखिरी प्यार थी।" अजीत ने यह भी बताया कि सीमा ने उससे कहा भी था कि उसके जाने के बाद उसे अपने लिए नया जीवनसाथी ढूँढ़ लेना चाहिए। यह सुनकर हिलेरी ने कहा कि सीमा ने उसे बिल्कुल सही सलाह दी थी।

अजीत ने कुछ ही समय में हिलेरी के बिजनेस अकाउंट ठीक कर दिए। हिलेरी अजीत की ईमानदारी से बहुत प्रभावित हुई। इस काम के लिए अजीत ने फीस भी कोई ज्यादा नहीं ली। काम के सिलसिले में

और कभी-कभी साथ समय बिताने के लिए दोनों अकसर मिलने लगे और दोनों एक-दो बार हम बिस्तर भी हुए। एक दिन हिलेरी ने खुद ही अजीत से पूछा कि क्या वे दोनों जीवन-साथी बन सकते हैं? अजीत का जवाब सुनकर उसे धक्का सा लगा और उसने एक गहरा नि:श्वास छोड़ा। अजीत ने कहा कि इस उम्र में वह दूसरी शादी के बारे में सोच भी नहीं सकता, क्योंकि उसने अभी अपनी बेटी की शादी करनी है। राबिया अपने डैड के बारे में क्या सोचेगी? वे अच्छे दोस्त की तरह रह सकते हैं और वह कोशिश करेगा कि आगे से एक सीमा में रहे।

इसके बाद उसने हिलेरी से मिलना-जुलना कम कर दिया।

इसी बीच राबिया कुछ दिनों के लिए अपने डैड के पास आई। उसके आने के अगले दिन ही हिलेरी ने अजीत को फोन किया कि अगर वह शाम को फ्री है तो एडवांस टैक्स चुकाने के कागजात तैयार करने के लिए आ जाए और डिनर भी उसके साथ कर ले। अजीत ने बताया कि उसकी बेटी आई हुई है, इसलिए वह नहीं आ सकता। यह सुनकर हिलेरी ने कहा कि फिर तो उसे राबिया को भी साथ लाना चाहिए। वह राबिया से भी मिल लेगी। अजीत सहमत हो गया। फोन रखने के बाद उसने राबिया को बताया कि वह शाम को तैयार हो जाए, उसके एक क्लाइंट ने उन्हें डिनर के लिए आमंत्रित किया है और कुछ काम भी करना है।

शाम को जाते समय अजीत ने राबिया को हिलेरी के बारे में संक्षिप्त जानकारी भी दे दी। हिलेरी राबिया से मिलकर बहुत खुश हुई। अजीत एडवांस टैक्स के ऑनलाइन कागजात भरता रहा। राबिया और हिलेरी दोनों एक-दूसरे से बातें करने में व्यस्त हो गईं। राबिया ने उसे बताया कि वह अपने पिता को लेकर काफी चिंतित है। माँ के बाद वह अकेले हो गए हैं। उन्हें माँ की बहुत याद आती है। उसकी समस्या यह है कि वह अपने पिता के साथ भी नहीं रह सकती और न ही वे अपना काम छोड़कर उसके पास आ सकते हैं। उसने हिलेरी से कहा कि वह भी डैड का खयाल रखें। वह हिलेरी को भी फोन करती रहेगी। राबिया को हिलेरी का स्वभाव बहुत अच्छा लगा।

□

अचानक उसके मोबाइल फोन की आवाज से उसकी सोच टूटी, उसने देखा कि इस बार राबिया का फोन था। उसने मोबाइल उठाया और बोला "हैलो"।

"डैड, आप कहाँ हैं? क्या आप ठीक हैं?"

"हाँ बेटा, मैं बिल्कुल ठीक हूँ। आखिर क्या बात है, तुम घबराई हुई सी क्यों हो? मैं घर में ही हूँ।"

"आप हिलेरी आंटी का फोन क्यों नहीं अटैंड कर रहे?"

"क्या?"

"आप हिलेरी आंटी से बात क्यों नहीं करते?"

अजीत ने कोई जवाब नहीं दिया।

"हाँ डैड, हिलेरी! उन्होंने मुझे फोन किया है कि वह बहुत देर से आपको फोन कर रही हैं। पर आप उनका फोन पिक नहीं कर रहे। डैड, ट्राई टु अंडरस्टैंड! हिलेरी टोल्ड मी एवरीथिंग!"

"ओ नो!"

"डैड, प्लीज लिसन! आई नो वेरी वेल दैट युअर लव एंड अफेक्शन टुवर्ड्स मॉम वाज बियोंड ऐनी कंपेरीजन! आई एप्रीशिएट दैट एंड फार दैट आई एम प्राउड ऑफ यू! बट नाऊ ट्राई टु चेंज अकॉर्डिंग टु द सर्कमसटांसेज! आई एम आलवेज वरीड अबाउट यू! बट कांट डू एनीथिंग···!"

अजीत ने राबिया की बात काटते हुए कहा, "राबिया, मेरी चिंता करने की जरूरत नहीं है, मैं बिल्कुल ठीक हूँ।"

"डैड, मेरी मजबूरी है कि आप मेरे साथ नहीं रह सकते। पहले मैं सोच रही थी कि मैं कुछ दिनों के लिए आपके पास आऊँगी, लेकिन आज ही मैथ्यू ने मुझे सरप्राइज दिया कि हम दो दिन बाद स्विट्जरलैंड जा रहे हैं। मेरा रिजल्ट आ गया है। एक लॉ फर्म में मेरा सिलेक्शन भी हो गया है। स्विट्जरलैंड से आकर मेरी ओथ सेरेमनी है। फार सेलीब्रेटिंग दिस बिग इवेंट ऑफ माई लाइफ, ही इज टेकिंग मी टु स्विट्जरलैंड!"

"दैन गो अहेड विद युअर प्रोग्राम! आई एम प्राउड आफ यू! यदि आज तुम्हारी मम्मा होती तो उन्होंने कितना खुश होना था।" यह कहते हुए अजीत की आँखें डबडबा आईं।

"आई नो डैड! पर सुनो! मैंने मैथ्यू से भी आपके और हिलेरी आंटी के बारे में डिस्कस किया है, एंड ही इज वेरी हैपी इफ यू बोथ डिसाइड टु स्टार्ट ए न्यू लाइफ! डैड प्लीज, गो अहेड! यदि आप हिलेरी आंटी के साथ नई जिंदगी शुरू करोगे तो मुझे बहुत खुशी होगी। लोगों के बारे में मत सोचो कि वे क्या कहेंगे। ट्राई टु लिव इन द प्रेजेंट। अगर आप और हिलेरी आंटी मेरी ओथ-सेरेमनी में एक साथ शामिल होंगे तो यह और भी मजेदार होगा।"

"पर राबिया···"

"डैड नो। नो इफ, बट। मेरे पास अभी समय नहीं है। मुझे स्विट्जरलैंड के लिए पैकिंग करनी है। आप अभी हिलेरी आंटी को फोन करो और हाँ, यदि उनका फोन आए तो उनसे बात करो। बाय, ऐंड टेक केयर! बी हैपी विद युअर न्यू फ्रेंड!" इतना कहकर राबिया ने फोन काट दिया।

अजीत को समझ नहीं आया कि वह क्या करे? उसने एक बार सीमा की फोटो को अपने हाथ में लिया। उसी समय उसका फोन बज उठा। हिलेरी का फोन था। उसने एक गहरा नि:श्वास छोड़ा, सीमा की फोटो की ओर देखा और दूसरा हाथ मोबाइल की ओर बढ़ाया।

सा अ

अकाल यूनिवर्सिटी, तलवंडी
साबो-१५१३०२, बठिंडा (पंजाब)
दूरभाष : ९४१७६९२०१५

हिंदी साहित्य में श्रीकृष्ण : पारंपरिक एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य

● नवीन चंद पटेल

राम और कृष्ण का उल्लेख भारतीय वाङ्मय में चिरकाल से मिलता है। राम और कृष्ण भारतीय वाङ्मय के आधार स्तंभ रहे हैं, क्योंकि इनका प्रभाव भारतीय मनीषा में लंबे समय से रहा है। यदि हम साहित्य के दृष्टिकोण से श्रीकृष्ण के वर्णन की ओर दृष्टिपात करें तो पाते हैं कि कृष्ण के उद्भव को लेकर अनेक मत भारतीय वाङ्मय में बिखरे पड़े हैं, जो कि हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है।

कृष्ण के उद्भव को समझने से पूर्व 'कृष्ण' शब्द की व्युत्पत्ति को समझना होगा। अर्थ—आदर्श, हिंदी-संस्कृति कोश में कृष्ण शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया गया है—कृष्ण, सं.पु. (सं.) वासुदेवः केशवः चक्रपाणिः (पुं.), चक्रिन् (पुं.), जर्नादनः, पीताम्बरः, माधवः, मधुसूदनः, हृषिकेशः, गोपालः, गोवर्धनधारिन, (१०) गोविन्द, दामोदर, मुरारि (पु.), राधारमणः, कोकिलः काक। कृष्णपक्ष। वि., काल, असित, नील, मेचक, श्याम तिमिर, निष्प्रभ।

डॉ. राजबली पांडेय ने हिंदू धर्मकोश में कृष्ण के संबंध में लिखा है—"कृष्ण—ऋग्वेद की एक ऋचा (८.८५.३-४) में कृष्ण के किसी ऋषि का नाम है। उन्हें अथवा उनके पुत्र को (ऋग्वेद ८.२६) मंत्रद्रष्टा कहा गया है।

छांदोग्य उपनिषद् में कृष्ण देवकी पुत्र घोर आंगिरस के शिष्य के रूप में उद्धृत है, कृष्ण शब्द की व्युत्पत्ति कृप धातु से हुई है। निर्वाचन द्वारा कृष्ण का मुख्य अर्थ भूमि को सुख पहुँचाने वाला माना गया है—

कृषिभूवाचकः शब्दोणश्च निवृतिवाचक।
विष्णुस्तदद्भावयोगाच्च कृष्णो भवति सात्वतः॥

व्युत्पत्ति की दृष्टि से कृष धातु का अर्थ सत्ता है तथा ण निवृत्ति अर्थात् आनंद का वाचक है, दोनों के योग से 'कृष्ण' शब्द बनता है। अतः जो सर्व समय में, सर्व काल में और सर्व देश में आनंद रूप है, वही कृष्ण है। 'कृष' शब्द का अर्थ सत्ता तथा 'ण' अर्थ आनंद स्वरूप है। आत्मा सुखरूप होती है तथा उसका भाव आनंदमय है, अतः कृष्ण शब्द का अर्थ आनंदमय परब्रह्म है।

द न्यू एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में कृष्ण के संबंध में लिखा है कि वे विष्णु भगवान् के आठवें अवतार माने जाते हैं तथा वे अत्यंत लोकप्रिय देवता हैं। वे भक्ति के अनेक संप्रदायों में आकर्षण का केंद्र बने

अपने शैक्षिक कॅरियर में 'रंगकलश' और 'निबंध नवीन' पुस्तकों का संपादन। राष्ट्रीय स्तर की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में शोधपत्रों का प्रकाशन। संप्रति बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झाँसी के हिंदी विभाग में सहायक आचार्य पद पर कार्यरत।

तथा उनसे प्रभावित होकर बहुत से काव्य, संगीत एवं चित्रों आदि की रचना की गई है—

द न्यू एनसाइक्लोपीडिया में ही आगे कहा गया है—"श्रीकृष्ण, संस्कृत कृष्ण, सबसे व्यापक रूप से प्रचलित और सभी भारतीय देवताओं में सबसे लोकप्रिय हैं, जिन्हें हिंदू भगवान् विष्णु के अष्टम अवतार के रूप में पूजा जाता है और वे अपने आप में एक सर्वोच्च भगवान् के रूप में भी समादृत हैं। कृष्ण कई भक्ति (पंथों) का केंद्र बन गए, जो सदियों से प्रचलित अनेक पंथों के पूजित देवता रहे हैं, जिन्होंने शताब्दियों से धार्मिक कविता, संगीत और चित्रकला की अमूल्य निधि प्रदान की है।"

द एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन में श्रीकृष्ण के संबंध में कहा गया है—"भारत के अनेक मंदिरों तथा घरों में कृष्ण की पूजा श्रद्धापूर्वक की जाती है और वे भारत की भौगोलिक सीमाओं से परे कृष्ण आंदोलन (इस्कॉन) के केंद्र बन गए हैं। कृष्ण की पूजा के अनुष्ठान स्थान और जाति के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं, लेकिन कुछ सबसे प्रभावशाली जन गौड़ीय और पुष्टिमार्गीय संप्रदाय से जुड़े हुए हैं, जो पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी के दिव्य चैतन्य और वल्लभ संप्रदायों से संबंधित हैं। कृष्ण की पूजा आठ दैनिक दर्शनों की शृंखला में की जाती है।"

भारतीय साहित्य में कृष्ण का उल्लेख अति प्राचीन है, जो अपनी क्षमता एवं विचित्रता से ओत-प्रोत है। ऋग्वेद जो भारतीय वाङ्मय का प्राचीनतम ग्रंथ माना जाता है, उसमें भी कृष्ण के रूप का वर्णन किया गया है।

हिंदी साहित्य वेद, उपनिषद् एवं भक्ति-परंपरा से अछूता नहीं है। जो हिंदी साहित्य में कृष्ण को लाने का एक प्रमुख कारण भी बनता है। साहित्य में कृष्ण काव्य का प्रारंभ विद्यापति से माना गया है। किंतु विद्यापति पर गीतगोविंद के रचयिता महाकवि जयदेव का विशेष प्रभाव होने के

कारण कृष्ण-काव्य का सूत्रपात जयदेव से ही मानना चाहिए।

"गीतगोविंद में जयदेव ने राधा-कृष्ण का मिलन, कृष्ण की मधुर लीलाएँ और प्रेम की मादक अनुभूति सरस और मधुर शब्दावली में लिखी है। गीत-गोविंद के द्वारा राधा का व्यक्तित्व पहली बार मधुर और प्रेमपूर्ण बनाकर साहित्य में प्रस्तुत किया गया। गीत-गोविंद की पदावली मधुर है। उसमें कामदेव के बाणों की मीठी पीड़ा है। कीथ गीत गोविंद की प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि उसकी (शब्दावली इतनी मधुर और भावों के अनुकूल है कि उसका अनुवाद अन्य किसी भाषा में ठीक तरह से हो ही नहीं सकता।"

विद्यापति ने राधा-कृष्ण का जो चित्र खींचा है, उसमें वासना का रंग बहुत ही प्रखर है। आराध्य देव के प्रति भक्त का जो पवित्र विचार होना चाहिए, वह उसमें लेशमात्र भी नहीं है। सख्य भाव से जो उपासना की गई है, उसमें कृष्ण तो यौवन में उन्मत्त नायक की भाँति हैं और राधा यौवन की मदिरा में मतवाली एक मुग्धा नायिका की नीति राधा का प्रेम भौतिक और वासनामय प्रेम है। आनंद ही उसका उद्देश्य है और सौंदर्य ही उसका कार्य-कलाप, यौवन से ही जीवन का विकास है।

विद्यापति राधा-कृष्ण का उपयोग जयदेव की भाँति प्रिया-प्रेमी के रूप में करते हैं। संयोगवश इस समय हाल के प्रसिद्ध काव्य गाथासप्तशती का भी पर्याप्त प्रचार हो चुका था, जिसमें राधा-कृष्ण को उनके देवत्व से पृथक् कर मानवीय भूमि पर दो प्रेमियों की तरह प्रस्तुत किया गया है। पदावली के आरंभिक पदों में मंगलाचरण के रूप में कृष्ण-राधा की जो वंदना की गई है, वह स्वयं कवि की मानवीय दृष्टि स्पष्ट करती है—

"नन्दक-नन्दन कदम्बक तरु तर धिरे-धिरे मुरलि बजाव
समय संकेत-निकेतन बसल, बेरि-बेरि बोलि पठाय
सामरितोस लागि अनुखन विकल मुरारि
जमुनाका तिर उपवन, उदबेगल फिर-फिर ततहि निहारि
गौरस बेचए अबइत जाइत जनि-जनि पुछ बनमारि"

दूसरे पद 'देख-देख राधा-रूप अपार' में कवि कहता है कि पता नहीं किस विधाता ने पृथ्वीतल पर ऐसे लावण्य-सार की रचना की, जिसे देखकर कामदेव अस्थिर और कृष्ण भूलुंठित हो जाते हैं। जाहिर है कि यहाँ कवि का प्रयोजन भक्तिमार्गी न होकर राधा-कृष्ण को प्रेयसी प्रेमी के रूप में उपस्थित करना है।

विद्यापति के बाद कृष्ण काव्य के बड़े पुरोधा के रूप में 'सूरदास' लक्षित होते हैं। हालाँकि सूर के आराध्य कृष्ण का चित्रण जयदेव और विद्यापति कर चुके थे। इन दोनों महाकवियों ने रस के दृष्टिकोण से श्रीकृष्ण की लीला गाई थी। गीतगोविंदकार जयदेव ने तो शृंगार रस के अंतर्गत कृष्ण की अनेक भंगिमाओं का चित्रण किया था। विद्यापति ने भी नखशिख, ऋतु दूती मिलन आदि अनेक प्रसंग शृंगार रस के दृष्टिकोण से लिखे थे। इस साहित्यिक परंपरा का प्रभाव सूरदास पर भी पड़ा और उन्होंने नायक-नायिका के आलंबन विभाव में श्रीकृष्ण और राधा को खड़ा किया। उद्दीपन विभाव में चातु-वर्णन और नख-शिख वर्णन किया। अनुभाव में स्वेद और कंप लिखा। इस प्रकार उन्होंने रस- निरूपण का सौंदर्य भी अपने काव्य में यथास्थान सुसज्जित किया।

सूरदास ने धार्मिक भावना के साथ-ही-साथ साहित्यिक आदर्श की रक्षा के लिए राधा को कृष्ण के साथ प्रमुख स्थान दिया। अतः मौलिकता के दृष्टिकोण से सूरदास के सूरसागर में चार प्रसंग बहुत उत्कृष्ट हैं—

१. बालकृष्ण का मनोवैज्ञानिक चित्रण।
२. शृंगार रसांतर्गत ऋतु वर्णन और नख-शिख।
३. श्रीकृष्ण और राधा का रति भाव।
४. वियोग शृंगार के अंतर्गत भ्रमर गीत।

इन प्रसंगों की रूपरेखा भागवत में अवश्य है, पर वह केवल कंकालवत् है। उसमें सौंदर्य भरने का समस्त श्रेय सूरदास ही को है।

भगवान् श्रीकृष्ण चंद्र को संसार में अनेक दृष्टियों से देखा है, किंतु भावुक कवियों का दृष्टि बिंदु कुछ निराला ही है। साधारण जनसमुदाय के भगवान् श्रीकृष्ण अथवा आराध्य देव के विशेषण तो दीनदयालु या भक्त-वत्सल से लेकर घट-घट के वासी तक जाकर समाप्त हो लेते हैं। ज्ञानियों की सूखी सूझ कुछ आगे बढ़ती है—वे उन्हें अनादि, अनंत, अगोचर, निरीह, निराकार, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, सर्वव्यापी जगन्मय जगदात्मा, परब्रह्म और परमेश्वर इत्यादि कहते हैं, अब जरा इन भक्त कवियों के श्रीकृष्ण को भी देखिए कैसे कुंज बिहारी, बनवारी, पीतपटचारी, रसिक रंगीले छबीले मुरलीवाले बाँके ब्रजलाल हैं। देखते-सुनते ही तबीयत फड़क उठती है। दुनिया के श्रीकृष्णा में फीकापन डाल सकता है, किंतु इन भक्त कवियों के सलोने श्रीकृष्ण तो सर्वथा और सर्वदा मधुरातिमधुर है।

बसो मोरे नैनन में नंदलाल।
मोहनी मूरति सौरि सूरति उर बैजंती माल॥
छुद्र घंटिका कटि तट सोभित, नूपुर सबद रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भगतबछल गोपाल॥

श्रीकृष्ण को अपार प्रेम की गाढ़ी चाशनी में पागकर निर्मल भक्ति के अथाह रस से सराबोर कर डाला है। यहाँ न स्वार्थ है, न कुछ माँगने की इच्छा है और न कोई कामना या लालसा ही है—इसी से तो इन्होंने अपने-अपने भावानुसार भगवान् को प्रत्यक्ष करने का सौभाग्य प्राप्त किया था, इनकी अनन्यता देखिए—

या लकुटी अरु कामरिया पर, राज तिहू पुरकौ तजि डारौ।
आठहु सिद्धि नव निधिको सुख, नंदकी गाइ चराइ बिसारौ॥
रसखानि कब इन आँखिनसों, ब्रजके बन-बाग तडाग निहारौ।
कोटिक को कलधौत के धाम करीलकी कुजन ऊपर वारौ॥

'ताज' नाम की एक मुसलमान स्त्री कवि की भक्ति का भी परिदर्शन कीजिए—

"सुनो दिलजानी मेरे दिलकी कहानी तुम
दस्त ही बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
नन्दके कुमार कुरबान तेरी सूरत पे
हो तो मुगलानी हिन्दुवानी ह्वे रहूँगी मैं॥"

इन भक्तों के श्रीकृष्ण जब भक्ति की बाहुल्यता से परेशान हो जाते हैं, अनाप-शनाप प्रेम की भरमार से जब उनका जी ऊबने लगता है, तब अपने मनचले भक्तों को कभी-कभी मनोरंजन के लिए ये खिझाते भी खूब हैं। यह खीझ खीझी कभी-कभी यहाँ तक बढ़ जाती है कि फिर वे अपने श्याम को खरी-खरी सुनाए बिना भी नहीं चूकते—

"ठाकुर कहत, जो विधिमें विवेक होतो,
सुर नर मुनि पसु पछी कैसे मोहतो।
रूपवन्त प्रानी जी कसकवन्त हो तो कहूँ,
सोने में सुगन्ध के सराहिकों को हतो।।"

हिंदी साहित्य के इतिहास को चार भागों में विभक्त कर अध्ययन किया जाता है और इन चारों भागों (काली) में राधा-कृष्ण से संबंधित वर्णन आए है। हिंदी साहित्य के आदिकाल (वीरगाथाकाल) में वीर रस की रचनाएँ हुई हैं। फिर भी इस काल में राधा-माधवपरक भक्तिप्रधान काव्य भी लिखे गए हैं। इनमें विद्यापति प्रमुख कवि हैं। इसके बाद भक्तिकाल आता है। इसमें राधा-कृष्ण के प्रति अपार और अगाध भक्ति प्रदर्शित की गई है। अष्टछाप के कवियों ने श्रीकृष्ण भक्ति पर प्रमुखता से काव्य-रचना की है, जिनमें महाकवि सूरदास प्रधान माने गए हैं। तदंतर रीतिकाल (शृंगारकाल) आता है। इसमें भी राधा-कृष्ण से संबंधित काव्य लिखे गए हैं। रीतिकाल के ये काव्य प्राय: शृंगारिक हैं, फिर भी बिहारीलाल के काव्य में प्रचुर भक्तिभाव है। उनके प्रसिद्ध काव्य-ग्रंथ बिहारी सतसई का प्रारंभ प्रार्थनात्मक मंगलाचरण से होता है और यह राधा के प्रति है। बिहारी सतसई का पहला दोहा राधा की भक्ति से संबंधित है—

"मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
जा तन की झाँईं पर श्याम हरित दुति होय॥"

अब रही आगे आधुनिक काल की बात तो आधुनिक काल में भी कृष्णपरक काव्य प्रचुर मात्रा में रचे गए हैं। मुक्तक पद्य और कविताएँ तो भरी पड़ी है। इस आधुनिक हिंदी साहित्य में भी चार ऐसे महाकवि हो गए हैं, जिन्होंने राधामाधवपरक प्रसिद्ध काव्य रचनाएँ की हैं।

इन कवियों और इनकी रचनाओं से संबंधित संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(१) अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध—अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔधजी का काव्य है 'प्रियप्रवास'। इसमें प्रिय (कृष्ण) का प्रवास वर्णित हुआ है, इसीलिए इस ग्रंथ का नाम प्रियप्रवास सार्थक है। इस काव्य की निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

"कमल लोचन कृष्ण वियोग की
अशनिपातसमा यह सूचना।
परम आकुल गोकुल के लिये।
अति अनिष्टकरी घटना हुई॥"

(२) मैथिलीशरण गुप्त—मैथिलीशरण गुप्तजी का काव्य है—'द्वापर'। 'द्वापर' नामक इस काव्य में गुप्तजी ने कृष्ण से संबंधित भावों का वर्णन किया है।

राधा-कृष्ण से संबंधित इस काव्य की कुछ धार्मिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

"मैं भी रोने लगा देखकर उसकी दारुण बाधा,
शुभे शांत हो, ब्रज में बैठी मेरी बेटी राधा।
किंतु वस्तुत मैं बेटी को आज विदा कर आया,
पुत्र रूप में ही राधा को यहाँ नंद ने पाया।"

(३) डॉ. धर्मवीर भारती—'कनुप्रिया' इनके लघु काव्य ग्रंथ का नाम है, बोलचाल की भाषा में कृष्ण को 'कनु' कहा जाता है। कृष्णप्रिया कनुप्रिया राधा मूलत: यह काव्य भी राधा भाव पर ही केंद्रित है।

काव्य की ये पंक्तियों द्रष्टव्य हैं—

"बिना मेरे कोई भी अर्थ कैसे निकल पाता
तुम्हारे इतिहास का
शब्द, शब्द, शब्द
राधा के बिना
सब रक्त के प्यासे
अर्थहीन शब्द।"

इस प्रकार आधुनिक हिंदी काव्य साहित्य में भी राधा-कृष्ण का वर्णन आया है और विभिन्न महाकवियों ने राधा-कृष्ण को अपने काव्यों में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि वैष्णव धर्म से ज्ञात होता है कि विष्णु के अनेक रूप प्रचलित हैं, पर उनमें सबसे अधिक चर्चा कृष्ण और राम की हुई है। उनके अवतारी रूप को लेकर व्यापक आंदोलन का सूत्रपात हुआ। विद्वान् मानते हैं कि राम का चरित्र प्राचीनतर है, किंतु कृष्ण रचना में पहले सक्रिय हो गए। विष्णु का नारायण तथा वासुदेव से तादात्म्य कृष्ण के व्यक्तित्व को देवत्व प्रदान करता है और इस रूप में कृष्ण विष्णु के आठवें अवतार बने। वासुदेव कृष्ण का विष्णु में एकाकार होकर वैष्णव धर्म के मूलाधार से जोड़ना कृष्ण के गोपाल रूप की कल्पना राधा का आगमन और अंत में उनके बहुरंगी व्यक्तित्व का भक्ति काव्य में प्रकाशमान, इस प्रकार कृष्ण का चरित्र रूपांतरित होता रहा है और मध्यकाल आते-आते उस पर अनेक दबाव पड़ चुके थे। उनके व्यक्तित्व में आधुनिक काल तक और भी विशेषण जुड़ते गए, जो आज के परिवेश को पूरी तरह से प्रकाशित करते हैं।

सा अ

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी-२८४१२८
दूरभाष : ९८३८४४४५५५

व्यंग्य

बीवी के हाथों पिटता वीर रस का कवि

● **अतुल कनक**

वीर रस का कवि बीवी से पिट रहा था। हालाँकि हमारे दौर के कई मंचीय कवि ऐसे विविध काम करते हैं कि लोगों द्वारा उनकी पिटाई हो, लेकिन पाकिस्तान की छाती पर झंडा गाड़ने की बात कहने वाले कवि का इस तरह बीवी के चरणों में पड़े हुए बिलबिलाना कुछ अप्रत्याशित था। यों कविता का छंदों से और हमारे दौर के कवियों का छल-छंदों से वास्ता होना कोई नई बात नहीं है। कवि छल नहीं करेगा तो नए कवि-सम्मेलनों का ठेका कैसे पाएगा? कवियों के पारिश्रमिक में से कमीशनखोरी कैसे होगी? उस कवयित्री से नैन मटक्का कैसे होगा, जिस कवयित्री के लिए वो आयोजक से भिड़ जाते हैं। वीर रस का कवि भले ही यह कहे कि उसे बिंदी, चूड़ी कंगन, काजल पर कविता नहीं लिखनी, क्योंकि उसे देश के प्रति अपना फर्ज निभाना है, लेकिन वह कवयित्री की आँखों के काजल से तो अपने मुँह पर कालिख मल सकता है। वह अपने साथी कवियों से तो कह सकता है कि उस कवयित्री की आँखों से ज्यादा सुंदर दुनिया में कुछ नहीं है।

लेकिन वीर रस का कवि अभी पिट रहा था। किसी और से पिटता तो यह कहकर पब्लिसिटी पाई जा सकती थी कि उसकी कविता से नाराज होकर कुछ देशविरोधी ताकतों ने उस पर हमला कर दिया। इस बात पर वह अपने लिए खास सुरक्षा की माँग कर सकता था। सुरक्षाकर्मियों से घिरे रहकर दुश्मन को चुनौती देने में सेलिब्रिटी होने जैसा सुख मिलता है। लेकिन बीवी से पिटने पर कवि सुरक्षा कैसे माँगे? अपनी चढ़ती जवानी के दिनों में दूसरों की बीवी से पिटते हुए कई बार बचने वाला कवि आज अपनी ही पत्नी के हत्थे चढ़ गया।

अब वीर रस का कवि क्या करेगा? अपनी बीवी से पिटने की घटना तो श्रृंगार रस का गीतकार तक किसी को नहीं बताता, तो वीर रस का कवि कैसे बताएगा? क्या वह बीवी को पाकिस्तान मानते हुए नई कविता लिखेगा और अपनी सारी भड़ास निकाल लेगा? क्या वह बीवी के हाथ के बेलन को पाकिस्तान का परमाणु बम बता सकेगा? हो सकता है कि अब तक लिखी कविताओं में छुपे वीर रस के पीछे भी ऐसा ही कुछ हो। लेकिन अब तो वह बड़ा कवि हो चुका था। देश की कई कवयित्रियों को अपनी सिफारिश पर अलग-अलग कवि-सम्मेलनों में बुलाता था और उन्हें करुण रस के वास्तविक अर्थों का रसास्वादन करवाता था। शराब का नशा चढ़ने पर वह संस्कृति के बारे में लंबा भाषण देता था। कविता पढ़ते हुए इतनी जोर से चीखता था कि कई बार दूर गली में बैठे हुए कुत्ते तक डर जाते थे। आश्चर्य यह था कि इतने बड़े कवि को उसकी बीवी पीट रही है और उसकी बोलती बंद थी।

जाने-माने साहित्यकार। अब तक पूर्व्या (हिंदी नवगीत-संग्रह), आओ, बातां कराँ (राजस्थानी कविता-संग्रह), चलो, चूना लगाएँ (हिंदी व्यंग्य-संग्रह), मगनधूळि (उड़िया का राजस्थानी अनुवाद), जूण-जातरा, छेकड़लो रास (राजस्थानी उपन्यास), राजस्थानी भासा को मध्यकाल (आलोचना), हेमांणी (अनुवाद), 'प्रेम में कभी-कभी' (हिंदी कविता-संग्रह)। मेवाड़ रत्न, सहस्त्राब्दि हिंदीसेवी सम्मान, सृजन साहित्य पुरस्कार, सारंग साहित्य सम्मान सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

सवाल यह था कि वीर रस के कवि की बीवी के मन में अपने पति को पीटने का चाव क्यों जागा? कवि ने उसे अपनी कोई घटिया तुकबंदी सुना दी थी या बीवी को उस तुकबंदी से भी घटिया उसकी कुछ हरकतों के बारे में पता चल गया था। पिटना वीर रस के कवि के लिए कोई नई बात नहीं है। बचपन में तो वह इतना पिटा है कि कई बार उसे लगता था, उसका जन्म ही पिटने के लिए हुआ है। पढ़ाई में फिसड्डी था तो स्कूल में पिटता था। पैसे चुराने की आदत पकड़ी गई तो पिता ने उसे कई बार पीटा। अपनी हरकतों के कारण मोहल्ले की कई लड़कियों के भाइयों ने उसे सार्वजनिक तौर पर पीटा। शुरू-शुरू में तो उसके माता-पिता को यही लगता था कि इतना पिटने के कारण ही उसके मन का विद्रोह वीर रस की कविता के रूप में अपना सुख तलाश रहा है।

वीर रस का कवि पिट रहा था। यदि लोगों को उसकी पिटाई के बारे में पता चला तो वह इसके बारे में कैसे बात करेगा? बात-बात में कठिन हिंदी के चुराए गए संवाद बोलने वाला कवि, क्या यह कहेगा कि "संस्कृति के सरोकारों और स्त्री के सम्मान के संरक्षण के लिए सरस्वती के साधक ने सहजता से श्वसुरतनया के सम्मुख अपने सपनों और स्वाभिमान का समर्पण कर दिया?"

अलंकार के अन्वेषक इसका कुछ भी अर्थ लगाएँ, लेकिन सच्चा अर्थ तो यही है कि वीर रस का कवि अपनी बीवी के हाथों पिट रहा था।

सा अ

३ए ३०, महावीर नगर विस्तार,
कोटा-३२४००९ (राज.)
दूरभाष : ०९४१४३०८२९१

वृंदा

• ऋचा उपाध्याय

सुपरिचित लेखिका। जीव विज्ञान एवं हिंदी में स्नातकोत्तर। देश-विदेश में बच्चों को हिंदी भाषा का ऑनलाइन और बेंगलुरु में स्थानीय बच्चों को हिंदी का शिक्षण। हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में कविता, कहानी, लेख आदि प्रकाशित।

बस उन्नीस साल की थी वृंदा—लंबी, छरहरी, सुंदर। अनंत शुक्लाजी ने उसे अपनी भानजी की शादी में देखा और बस वह भा गई उन्हें, अपने मँझले बेटे राजीव के लिए। फिर क्या, जिनके घर विवाह में आए थे, उन्हीं से वृंदा के घर-परिवार का पता-ठिकाना पूछकर उसी दिन सुबह-सुबह अपनी बड़ी सी गाड़ी में जा पहुँचे।

"नमस्कार! तिवारीजी, मैं अनंत शुक्ला, कानपुर से आया हूँ, मेरी बहन की बेटी की शादी में। आप की आज्ञा हो तो अंदर आ जाऊँ।"

पांडित्य कर्म करने वाले सीधे-सादे तिवारीजी हाथ में खुरपी लिये किंकर्तव्यविमूढ़ से खड़े रह गए। एक तो पहले ही इतनी बड़ी गाड़ी अपने जीर्ण-शीर्ण दरवाजे पर देखकर हतप्रभ थे, उसपर शुक्लाजी इतने वाचाल कि सामने वाले को बोलने का मौका ही न देते। खैर, तिवारीजी हाथ की खुरपी वहीं क्यारी में छोड़कर जल्दी से उल्टा-पुल्टा हाथ धोकर, नमस्कार की मुद्रा में आ खड़े हुए शुक्लाजी के सम्मुख, फिर परिचय का आदान-प्रदान हुआ और आने का औचित्य सुनकर तो तिवारी परिवार अपनी औकात से बढ़कर स्वागत-सत्कार में जुट गया।

अरे भाई! घर बैठे बड़ी बिटिया के लिए इतना सुंदर संबंध आया था, कोई मामूली बात थोड़ी न थी। कानपुर शहर की सबसे बड़ी कपड़ा मिल के मालिक, शहर के मेयर अनंत शुक्ला, साथ ही जिन्हें समाज-सेवक और नेता बनने का शौक है। शहर का बच्चा-बच्चा जानता था उनको। कानपुर के सबसे पॉश इलाके सिविल लाइंस में भव्य महल जैसा घर था शुक्लाजी का और साथ ही हाथ की रेखाएँ और चेहरा देखकर पूरी जन्मकुंडली बाँचने का कौशल भी। रिश्ता पक्का करने का ठानकर आए थे कि कुछ भी हो जाए, तिवारीजी के घर से खाली हाथ नहीं लौटेंगे।

फिर क्या था, तिवारीजी ने भी तुरंत पंचांग और कुंडली देखकर बताया कि रिश्ता तय करने का आज, अभी सबसे शुभ मुहूर्त है। बस शुक्लाजी ने तुरंत वहीं बगीचे से फूल, तुलसी और कुश लेकर हजार रुपए रख वृंदा के आँचल में डालकर, सिर पर आशीर्वाद का हाथ रख दिया और बोले—तिवारीजी, मेरा बस चले तो वृंदा बिटिया को अभी अपने साथ लेता जाऊँ। पर मेरा इतना उतावला होना ठीक नहीं है। फिर ड्राइवर को गाड़ी से कैमरा लाने का आदेश देकर बोले, यदि आपकी आज्ञा हो तो आप सबकी और वृंदा बिटिया की कुछ तस्वीरें ले लूँ और फटाफट उस वक्त के सबसे लेटेस्ट मॉडल वाले याशिका कैमरे की पूरी रील ही खींच डाली।

कानपुर पहुँचकर अति उत्साह में लपकते हुए पत्नी और बड़े बहू-बेटे के पास पहुँचकर बोले—आपके लिए एक खुशखबरी है शुक्लाइन! अनंत जब बहुत खुश होते तो कल्याणी को 'शुक्लाइन' कहकर बुलाते थे। मतलब सच में कोई बहुत बड़ी बात होगी और शुक्लाजी अपनी ही रौ में लगे बखान करने वृंदा का, इतनी सुंदर, इतनी सुशील, इतनी मेधावी, इतनी गुणी, आप देखेंगी तो चकित रह जाएँगी। कितना तेज है उस बच्ची के मुख पर, आँखें ऐसी, जैसे अभी बोल पड़ेंगी। कल्याणी के लिए सच में यह एक बहुत बड़ी और चकित कर देने वाली खबर थी। बड़ी बहू रीना के चेहरे का तो रंग ही उड़ गया एक क्षण को। कल्याणी बार-बार बड़ी बहू का चेहरा देखे जा रही थीं। उन्हें तो अपने दुलारे राजा यानी राजीव के लिए बड़ी बहू रीना की आधुनिक रंग में रँगी, मतलब मॉडर्न छोटी बहन शैली बहुत पसंद थी, वह दिल्ली विश्वविद्यालय से बी.ए. कर रही थी। दबे-दबे शब्दों में वह रीना से कई बार इस बारे में बात भी कर चुकी थी।

"अब यह पता नहीं किस देहातन और देहाती पंडित की बिटिया को शगुन देकर आ गए हैं। कहाँ रीना बहू लखनऊ जैसे शहर की लड़की और कहाँ यह लड़की, दोनों का कोई मेल होगा भला, देवरानी-जेठानी में ही कोई बराबरी नहीं होगी", बड़बड़ाते हुए कल्याणी राजीव के कक्ष की ओर चल दीं। पर यहाँ भी उनकी बड़बड़ का कोई फायदा नहीं था। राजीव बाबू मन्नू महात्मा बने किसी किताब में सिर खपा रहे थे। उनके

लिए उनके पिताजी आदर्श पुरुष थे, पिताजी की आज्ञा सर्वोपरि। और कल्याणी को भी पता था कि यदि शुक्लाजी ने कोई निर्णय ले लिया है, तो वह पत्थर की लकीर है, किसी भी प्रकार की हाँ-ना उस निर्णय को बदल नहीं सकती। घर का माहौल तो थोड़ा गड़बड़ सा हो गया था, दो पक्ष में बँटा हुआ, जिसमें एक तरफ शुक्लाजी और दूसरी तरफ उनकी पत्नी और रीना। उनके दोनों आज्ञाकारी सपूत तो पिता के विरुद्ध मुँह या मोरचा खोलने का कभी सोच ही नहीं सकते थे। रही मनीष और गौरी की बात तो वे दोनों छोटे बच्चों की श्रेणी में आते थे। असली तनाव, शीतयुद्ध तो शुक्लाजी और घर की नारी-शक्ति के मध्य था।

तीन-चार दिन के बाद खाने की मेज पर धुलकर आई फोटोज का बंडल रख दिया शुक्लाजी ने। छोटा मनीष और गौरी तो फोटो देखते ही उछलने लगे। "वाह! पापा क्या भाभी ढूँढ़ निकाली आपने, कितनी सुंदर हैं ये। पापा, इसमें से एक फोटो मैं स्कूल ले जाऊँगी, सबको दिखाऊँगी कि मेरी होने वाली भाभी कितनी सुंदर हैं।" गौरी चहकने लगी। उन दोनों की बकबक सुनकर शुक्लाइन ने भी एक फोटो उठा ली और मन-ही-मन मुसकराई कि अरे वाह! ये तो सच में बड़ी प्यारी हैं, पर रीना बहू से नजरें नहीं मिला पा रही थीं और उनकी नजरों में वैसे भी सुंदरता ही सबकुछ नहीं है, लड़कियों को खूब स्मार्ट और आकर्षक होना चाहिए। गाँव-देहात की लड़की पता नहीं पहनने-ओढ़ने, उठने-बैठने का शऊर भी होगा या बस शक्ल ही अच्छी है। मेरे महिला-मंडली में कहीं मेरी नाक ही न कट जाए। पर तसवीर देखकर युद्ध के बादल छँटने लगे थे।

भगवान् की दया ही कह लो, रीना बहू भी बहुत प्यारी, बुरा तो उसे लगा था, पर बहुत ही सहजता से उसने ये स्वीकार कर लिया था और परिवार की खुशी को सर्वोपरि मानकर वह भी वृंदा की फोटो देखने लगी। बाहर से तो खुशी दिखा ही रही थी, अंतर्मन का नहीं पता, क्या चल रहा था। शायद यही सोच रही थी कि ठीक है, यह बहुत सुंदर है, पर मेरी बहन शैली इससे बहुत ज्यादा स्मार्ट और अटरेक्टिव है। पर इसमें सारी गलती माँ और शैली की है, दो साल से कह रखा है कि बात कर लो, पापा को भेज दो मेरी ससुराल पापाजी, मम्मीजी से बात करने। पर उन दोनों को तो राजीव घोंघा बसंत लगता था। अब जाओ एक हीरा हाथ से निकल गया। मुझे क्या, इन्हीं सब ऊहापोह में 'चट मँगनी पट ब्याह' की तर्ज पर अगले महीने की तारीख निश्चित कर दी गई। जल्द ही यह खबर खुदबखुद जा पहुँची रीना के मायके तक। अब तक राजीव के विवाह प्रस्ताव को अनदेखा करने वाली शैली को न जाने क्यों आज बड़ा ही दु:ख हो रहा था, पूरी मिर्च लगी थी। इतना अच्छा, अमीर, सीधा लड़का जो उसके हाथ से निकल गया था। काश, उसने पहले ही 'हाँ' कर दी होती। बहुत पछतावा सा हो रहा था।

शादी में पंद्रह दिन ही बचे थे कि उस दिन सुबह-सुबह तिवारीजी आ पहुँचे थोड़े चिंतित और बहुत घबराए हुए से। घबराए ही नहीं, भ्रांत से भी थे। इस हाल में उन्हें देखकर शुक्ला परिवार भी थोड़ा चिंतित हो उठा था। फिर उन्होंने कहा कि शुक्लाजी से अकेले में बात करनी है और शुक्लाजी उन्हें ले गए अपने स्टडी रूम में। फिर दोनों के बीच क्या बात हुई, किसी को पता नहीं। शुक्लाजी ने वृंदा के पिता को न मालूम कौन सी पट्टी पढ़ाई थी कि आधे घंटे पहले जो उनके चेहरे से हवाइयाँ उड़ रही थीं, एकदम बीमार से लग रहे थे, अब वे बिल्कुल निश्चिंत से थे—स्वस्थ, संतुष्ट। जाते-जाते गौरी ने तिवारीजी के हाथ में एक लिफाफा रख दिया और बोली—यह हमारी भाभी के लिए, आप मत खोल लीजिएगा। मेरे भैया का फोटो और मेरी चिट्ठी है। और कोई दिन होता तो गौरी की इस वाचालता पर पापा से डाँट खाने के आसार थे। पर आज शुक्लाजी को अपनी नटखट बिटिया पर बहुत प्यार आया, क्योंकि आज उसने उनके मन का काम बिना कहे जो कर दिया था। यही तो चाहते थे वे, पर कल्याणी और रीना से कुछ कहने की हिम्मत नहीं हो रही थी।

और हो गई वृंदा और राजीव की शादी सकुशल संपन्न। आ गई घर में प्यारी बहू। बड़ी सुंदर जोड़ी, बिल्कुल सिया-राम सी। भोली, सरल और खूब हँसमुख-सी, वृंदा और राजीव, वृंदा के प्यार का, भोलेपन का खूबसूरती का दीवाना। कुछ समय पहले का किताबी कीड़ा और अब बिल्कुल रोमियो बन चुका था। सीधा-सादा, भोला भंडारी ब्याह के बाद अति मुखर, अति वाचाल हो गया था। पूरे समय सुंदरी पत्नी को छेड़ता, चिढ़ाता, उसके पीछे-पीछे घूमता रहता। ऐसा लगता, मानो बरसों से जानता हो।

परिवार का हर सदस्य राजीव में आए इस सुखद परिवर्तन को नोटिस कर रहा था। सब अच्छा चल रहा था कि एक दिन शुक्लाजी ने सबको खाने की मेज पर इकट्ठा होने को बोला और सबको सूचित किया कि वृंदा कल अपने मायके जा रही है। दस दिनों के बाद वापस आकर अगले महीने की एक तारीख को आगे की पढ़ाई के लिए कलकत्ता जाएगी, क्योंकि इसको शांति निकेतन में स्नातकोत्तर में प्रवेश मिल गया है। इसने विश्वभारती विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा पास की है और अंग्रेजी भाषा में एम.ए. करने जा रही है, तब तक राजीव

भी अपनी सिविल सेवा की परीक्षा की तैयारी करेगा, "देख रहा हूँ, आजकल इनका पढ़ने में बिल्कुल भी मन नहीं लग रहा है।

"उस दिन पंडितजी यही बताने आए थे कि बिटिया आगे पढ़ना चाहती है और शांति निकेतन में पढ़ना उसका बचपन का सपना है। वे उस दिन शादी के लिए मना करने ही आए थे। पर मैंने उनसे वादा किया था कि आपने प्रवेश परीक्षा दिलाई, यही बहुत बड़ी बात है और हमारी बेटी ने प्रवेश परीक्षा पास की, यह उससे भी बड़ी बात है। अब वृंदा की आगे की पढ़ाई की सारी जिम्मेदारी मेरी है। वह जितना, जब तक और जहाँ पढ़ना चाहे, मैं उसका साथ दूँगा।" अगले दिन वृंदा अपने पिता के साथ मायके चली गई थी।

उस रात फिर शुक्लाजी ने सबको खाने की मेज पर इकट्ठा होने को कहा। जब सब आ गए तो जेब से दो परचे निकालते हुए उन्होंने कल्याणी और रीना की तरफ मुखातिब होते हुए कहा कि जिसने भी यह चिट्ठी वृंदा को लिखी थी, उसको अंग्रेजी व्याकरण का बिल्कुल भी ज्ञान नहीं है। अगर किसी भाषा पर आपको पूरा कमांड न हो तो कृपया अपनी मातृभाषा में पत्र लिखना चाहिए। शादी के पहले उस दिन जब पंडितजी घबराए हुए से आए थे तो पहले उन्होंने यह चिट्ठी मुझे दी थी। तब से यह सँभालकर रखी थी मैंने, पर मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि इतनी गलत भाषा का प्रयोग मेरे घर में कौन करता है और इस प्रकार की नकारात्मक चिट्ठी लिखने का क्या मतलब था? क्या कोई फायदा हुआ? आप सबको तो पता ही है कि मैं यदि कोई काम ठान लेता हूँ, तो वह पूरा करके ही मानता हूँ। वह तो भला हो वृंदा के पिता का कि जो यह खत सीधे मेरे हाथों में लाकर दिया। यदि यह वृंदा पढ़ लेती तो आप सबकी क्या छवि रह जाती उसके मन में।

आप सब मुझसे यह जरूर जानना चाहेंगे कि मैंने यह बात आप सबको क्यों नहीं बताई? तो वह इसलिए कि मैं वृंदा को इस घर की बहू मान चुका था और मैं नहीं चाहता था कि बहू के इस घर में प्रवेश से पहले किसी भी प्रकार का वाद-विवाद हो और शुक्लाइन, आपको ऐसा लग रहा था न कि वृंदा गाँव-देहात की कोई आम-सी लड़की है, तो मैं आपको यही बताना चाह रहा था कि बड़े शहर में रहने, अमीर, स्मार्ट और चार वाक्य अंग्रेजी के बोल लेने भर से ही कोई प्रतिभावान नहीं होता है। प्रतिभा तो कहीं भी हो, छुपकर नहीं रह सकती है, अपना रास्ता खोज ही लेती है। और फिर 'इसका तो नाम ही वृंदा है, यानी गुणों की खान।'

सा/अ

डी.आई.-५०७, ह्वाइट हाउस अपार्टमेंट
आर.टी. नगर, बेंगलुरु-५६००३२
दूरभाष : ९९०२६२४४९२

लघुकथा

दान

● हरदेव सिंह धीमान्

राघव एक छोटा सा किसान था। खेती-बाड़ी के अतिरिक्त मेहनत-मजदूरी करके अपना व अपने परिवार का भरण-पोषण करता था। स्वभाव से दयालु व आदत से परोपकारी।

स्थानीय देवता के बनने जा रहे नए मंदिर के लिए उसने कुछ राशि बचाकर रखी थी, जिसे उसने एक विशेष त्योहार पर मंदिर कमेटी को समर्पित करना था। रोजमर्रा के काम में रत काफी समय बीत गया। जब उस त्योहार के लिए केवल दो दिन ही शेष थे, अचानक उसने सोशल मीडिया पर चल रही एक खबर पढ़ ली, जिसमें दुर्घटना के कारण एक महिला की रीढ़ की हड्डी टूट जाने से वह अस्पताल में भर्ती थी, धन के अभाव में उसका इलाज नहीं हो पा रहा था तथा वह जिंदगी और मौत के बीच लटक रही थी। रुपयों की कुछ व्यवस्था न होने के कारण उस महिला के पति ने एक-दो स्वयंसेवी संस्थाओं की सहायता से उसके इलाज के लिए कुछ रुपए तो जुटा लिए तथा बाकी के लिए विभिन्न संचार माध्यम से दान करने की अपील की। खबर पढ़ने के बाद राघव का मन पसीज गया। परंतु एक गरीब आदमी दूसरे गरीब आदमी के लिए कर ही क्या सकता है। ऐसे ही उधेड़बुन में वह फँसा रहा और आखिर में उसे समाधान मिल गया।

उसने आव देखा न ताव, उन स्वयंसेवी संगठनों व अस्पताल प्रशासन से पूछताछ करने के पश्चात् वह बचाकर रखी हुई राशि मंदिर निर्माण के बजाय जिंदगी और मौत के बीच झूल रही उस महिला के लिए दान कर दी।

सा/अ

धीमान् गृहम् बरोली
पत्रालय-दनावली, तहसील-ननखरी
जिला-शिमला-१७२०२१ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९८१७२१६३५५

विस्मृति के ताले

● संदीप राशिनकर

ना जाने क्या-क्या

ना जाने क्या-क्या
लेते/समेटते/सहेजते रहे हैं हम
यहाँ तक आते-आते!
प्राथमिकता प्रासंगिकता के
समय के साथ बदलते क्रम में
घर में/जीवन में
ना जाने कहाँ, किधर,
किस कोने में
संदर्भहीन हो सकुचाकर
सिमट गई हैं
वो तमाम चीजें/प्रसंग
जिन्हें हम ताउम्र
लेते/समेटते/सहेजते रहे हैं
यहाँ तक आते-आते!
सच है, वर्षों से
छूना/सहेजना तो दूर
देखा भी नहीं है उन्हें
जिन्हें रखते रहे हम
हरदम सामने आँखों के
और सजाते/सहलाते/निहारते
रहे हैं हम
यहाँ तक आते-आते!
आज मैं घर के उस
अँधेरे/अनदेखे/अनछुए
कोनों में जाना चाहता हूँ
हटाना चाहता हूँ
जमे मकड़ी के जाले
और खोलना चाहता हूँ
विस्मृति के ताले
चाहता हूँ धूल हटाकर
झाड़-पोंछकर साफ करूँ
मोहित हो निहारूँ/बतियाऊँ
व आत्मीयता से
हाथों में ले सहलाऊँ
उन सब
चीजों/स्मृतियों/क्षणों को
जिन्हें जीवन भर सहेजा है मैंने
यहाँ तक आते-आते!

यहाँ तक आते-आते

मैं मानता हूँ
बँटता रहा हूँ
चप्पे-चप्पे पर
और खटता रहा हूँ
जुटाने में
दुनियावी सुविधाएँ।
बाँटता रहा हूँ खुद को
और होता रहा हूँ उपस्थित
उन मौकों को भुनाते
अपने व्यक्तित्व के
उपयोगी हिस्से के साथ।
अपने स्वार्थों
अपनी लिप्साओं
अपने लालच
अपनी सुविधाओं के लिए,
उम्र भर ना जाने
कहाँ-कहाँ, कब-कब
और कैसे-कैसे
बाँटता रहा हूँ खुद को
अपने होने से
बिल्कुल अलग
यहाँ तक आते-आते।
ना जाने
बँट चुका हूँ मैं
कितने हिस्सों, कितनी किश्तों
कितने रिश्तों या
कितने मुखौटों में!
अब याद नहीं

जाने-माने लेखक एवं चित्रकार। कई अखिल भारतीय कला प्रदर्शनियों में चित्रों का चयन व प्रदर्शन। राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में हजारों चित्रों/रेखांकनों का प्रकाशन, अनेक प्रतिष्ठित प्रकाशनों की पुस्तकों के आवरण। भित्तिचित्रों (म्यूरल्स) के क्षेत्र में अनेक स्थानों/प्रतिष्ठानों पर भव्य म्यूरल्स का सृजन एवं अभिनव प्रयोगों से इस शैली में प्रतिष्ठित कार्य। कविताओं के अलावा कला एवं साहित्य-संस्कृति पर समीक्षात्मक लेखन/प्रकाशन।

स्वार्थ सिद्धि के लिए
किया गया उम्रभर
खुद का बिखराव,
खुद के टुकड़े।
पर अब
जोड़ना चाहता हूँ
स्वयं के बिखरे टुकड़े
बिखरते विचार
बदलते व्यवहार
और खंड-खंड हुए
अपने व्यक्तित्व को!
मैं चाहता हूँ
दुनिया में
जैसे आया था समग्र
वैसे ही
समग्रता में हो
मेरा प्रयाण भी!

बड़े ही ना हों बच्चे

हम चाहते हैं
हमारे परिवार के
परिचितों के
बड़े ही ना हों बच्चे
जिससे हम खुश रहें देखकर
बच्चों का तुतलाना
घुटनों पर चलना
लड़खड़ाना
अबूझ आवाजों
इशारों वाली भाषा में
संवाद करना
जानना, समझना, बूझना
वह सब कुछ जो
निरालस, मासूम बच्चा
हमसे चाहता है कहना!
हम चाहते हैं लेना उन
बाल क्रीड़ाओं का आनंद
और चाहते हैं रमना
उनके भोलेपन,
उनकी निरालसता में!
अब बच्चों के
बड़े होने को तो
नहीं जा सकता रोका
तो क्या ऐसा नहीं हो सकता
कि हम रोक लें/सहेज लें
हमारा बचपन,
रखें हम जिंदा
हममें मौजूद
उस बच्चे को
रखते हुए अक्षुण्ण वो तमाम
भोलापन, निरालसता, मासूमियत
जो हममें थी बचपन में!

सा/अ

११-बी, राजेंद्रनगर,
इंदौर-४५२०१२ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५३ १४४२२

कलकत्ते की एक याद

• राहुल राजेश

सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कुछ रचनाएँ अंग्रेजी, उर्दू, मराठी, उड़िया आदि भाषाओं में अनूदित। संप्रति भारतीय रिजर्व बैंक में प्रबंधक।

बनियों, मारवाड़ियों, व्यवसायियों को आप चाहे लाख कोसें, पर सच तो यही है कि साहित्य, संस्कृति, संगीत, कला और ज्ञान-विज्ञान के संरक्षण-संवर्धन और प्रोत्साहन में वे सब ही आगे आए हैं।

चाहे भारतीय ज्ञानपीठ स्थापित करने वाले और ज्ञानपीठ पुरस्कार आरंभ करने वाले श्री साहू शांतिप्रसाद जैन हों; बिड़ला मंदिर, बिड़ला म्यूजियम, के.के. बिड़ला फाउंडेशन और बिड़ला पुरस्कार स्थापित करने वाले श्री घनश्यामदास बिड़ला और कृष्ण कुमार बिड़ला हों या गीता प्रेस, गोरखपुर की स्थापना करने वाले श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार हों या भारतीय भाषा परिषद् स्थापित करने वाले श्री सीताराम सेकसरिया हों; या फिर 'जनसत्ता' और 'इंडियन एक्सप्रेस' शुरू करने वाले श्री रामनाथ गोयनका हों!

बॉलीवुड फिल्मों और हिंदी कथा-कहानियों में बनियों, मारवाड़ियों, व्यवसायियों आदि की प्राय: बेहद क्रूर, अमानुषिक और मक्खीचूस महाजन जैसी रूढ़ और मूढ़ छवि बना दी गई है। लेकिन ऐसे न जाने कितने नामी-गिरामी या गुमनाम बनिक, मारवाड़ी, सेठ और महाजन हैं, जिन्होंने साहित्य, संगीत और कला के संरक्षण-संवर्धन एवं प्रोत्साहन में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। चाहे छोटा शहर हो या बड़ा शहर, कहीं भी नजर घुमाकर देख लें। केवल मंदिर और विद्यालय ही नहीं, छोटे-बड़े पुस्तकालय भी जरूर मिल जाएँगे, जिन्हें नगर के किसी बनिक या सेठ ने स्थापित कराया होगा।

कलकत्ता के बड़ा बाजार के सुप्रसिद्ध श्री कुमारसभा पुस्तकालय को ही ले लीजिए। इसे श्री राधाकृष्ण नेवटियाजी ने स्थापित किया था। देश भर में चर्चित इस पुस्तकालय पर अटल बिहारी वाजपेयी से लेकर आचार्य विष्णुकांत शास्त्रीजी तक अपना स्नेह और समय अर्पित कर चुके हैं। यहाँ मुझे २०१७ में हिंदी भाषा की दशा-दिशा पर एक व्याख्यान देने का सुअवसर मिला था। निमित्त बने थे श्री ऋषिकेश रायजी और श्री प्रेमशंकर त्रिपाठीजी। यह मेरे लिए बहुत अचरज भरा अनुभव था, क्योंकि यहाँ उपस्थित श्रोताओं में बनिक व मारवाड़ी समाज के लोग बहुतायत में थे और भाषा तथा साहित्य से उनका जुड़ाव देखते ही बनता था।

मैं कलकत्ता में बस अढ़ाई-तीन साल ही रह पाया था, इसलिए वहाँ के साहित्यिक आयोजनों में मेरा ज्यादा आना-जाना भी नहीं हो पाया था। ज्यादा कहीं आने-जाने का मेरा स्वभाव भी नहीं। 'नीलांबर' में कविता पाठ के लिए आनंद गुप्ताजी ने एक बार आमंत्रित किया था। इस कविता पाठ में जाने का फायदा यह हुआ कि बरसों बाद नरेश सक्सेनाजी से दुबारा भेंट हुई। वहीं विमलेश त्रिपाठी भी मिले। विमलेश भाई के पास बाँहें फैलाकर मिलने का तरीका है। इसलिए हम पहली बार मिलकर भी अजनबी नहीं लगे। और इस दिन सबसे बड़ी आमद यह भी हुई कि कविता पाठ के बाद लक्ष्मण केडियाजी ने आकर तपाक से हाथ थाम लिया—'मैं लक्ष्मण केडिया!'

लक्ष्मण केडियाजी से २०१२ में पहली बार बात हुई थी। तब मैं अहमदाबाद में था। उन्होंने 'वागर्थ' के जुलाई अंक में मेरा एक आलेख पढ़कर मुझे फोन किया था। आलेख था—'भवानी प्रसाद मिश्र की कविता 'सतपुड़ा के जंगल' : गहरे जीवन-दर्शन और सृष्टि के शाश्वत मूल्यों की कविता,' तब वागर्थ के संपादक एकांत श्रीवास्तवजी थे। चूँकि केडियाजी भवानी प्रसाद मिश्रजी के संपूर्ण कृतित्व और व्यक्तित्व के सबसे बड़े प्रशंसक और संरक्षक भी रहे हैं तो इस आलोचनात्मक आलेख को पढ़कर उनका गद्‍गद होना स्वाभाविक ही था।

मेरे इस आलेख को पढ़कर जब भवानी प्रसाद मिश्र के बेटे अनुपम मिश्रजी ने फोन किया था तो मुझे कितनी खुशी हुई थी, मैं बयाँ नहीं कर सकता। तबसे ही हम दोनों परस्पर जुड़ गए थे। उनके तत्काल बाद भवानी प्रसाद मिश्रजी की बेटी नंदिता मिश्रजी ने भी इस आलेख को पढ़कर फोन किया था और उनसे भी अच्छी बातचीत हुई थी। उन्होंने मुझे 'सन्नाटा' शीर्षक कविता पर भी लिखने का सुझाव दिया। पर झूठ क्यों बोलूँ, भवानी भाई मुझे 'सतपुड़ा के जंगल' के कारण बहुत भा गए थे बचपन से ही, पर अब तक मैंने उनको व्यवस्थित ढंग से पढ़ना शुरू नहीं किया था। इसलिए मैंने सच स्वीकारते हुए कहा, मैंने यह कविता नहीं पढ़ी है अबतक…

फिर प्रेमशंकर रघुवंशीजी से भवानी भाई के बहाने प्रगाढ़ता बढ़ी तो भवानी भाई पर कुछ और चीजें पढ़ने को मिलीं। उन्होंने उन पर लिखी अपनी संस्मरणात्मक पुस्तक 'टिगरिया का लोक देवता' पढ़ने को भेजी तो भवानी भाई को और निकट से जाना! इस पुस्तक पर मैंने एक विस्तृत समीक्षा भी लिखी थी, जो 'नया पथ' के समीक्षा विशेषांक में छपी थी।

कलकत्ता में जब तक रहा, तब तक फेयरली पैलेस के पास बेचूजी की चाय की दुकान पर प्राय: अड्डा तो जमता ही रहा। यहाँ ऋषिकेश रायजी, जितेंद्र धीरजी, कुशेश्वरजी, राज्यवर्धनजी और हनुमंत रावजी से तो अकसर भेंट हो ही जाती थी। पर लक्ष्मण केडियाजी से एक भेंट अविस्मरणीय रही।

एक दिन दोपहर को तय हुआ कि हम मिलेंगे। चूँकि मैं अपने कार्यालय परिसर में निजी मुलाकातों से सायास बचता हूँ, इसलिए मैंने उनसे कहा, लाल दीघी में बैठते हैं। वे आए तो लंच ऑवर में मैं भी अपने बैंक की बिल्डिंग से उतर आया। दोपहर का वक्त था। थोड़ी गरमी थी। पर मुझे इस भोजनावकाश में हर हाल में घूमना अच्छा लगता है। दिल्ली हो, अहमदाबाद हो, कलकत्ता हो या अब मुंबई, यह सिलसिला जारी है। चाहे कितनी ही गरमी पड़े, टहलना नहीं टलता।

तो हम बैठ गए लाल दीघी की अंदर वाली सीढ़ियों पर। सामने तालाब का जल था। जल में जीपीओ की सफेद छाया डोल रही थी। और हमारे ऊपर पीपल के पेड़ की पत्तियाँ हिंडोले कर रही थीं। उमस को काटती मद्धम हवा बह रही थी। कुछ बतख, कुछ बगुले, कुछ कौवे, कुछ पनकौवे, कुछ पंछी पानी पर और पानी के बाहर छप-छपाक कर रहे थे। कुछ कुत्ते सुस्ता रहे थे और ढेर सारे लोग भी इस दुपहरी में यहाँ शरणागत थे। वैसे ही हम दोनों भी शरणागत थे।

केडियाजी ने अपने बैग से दो-तीन पुरानी डायरियाँ निकालीं। इन सबमें भवानी प्रसाद मिश्रजी की कविताएँ नीली स्याही से अंकित थीं। मैं यह सब देखकर बहुत रोमांचित हुआ। भवानी भाई के प्रति उनका समर्पण देखकर नत हुआ। उन्होंने इन्हीं डायरियों में से उनकी कुछ लगभग अनसुनी कविताएँ सुनाईं। फिर उन्होंने और एक डायरी निकाली और कहा—देखिए, भवानी भाई की हस्तलिपि में उनकी कविताएँ! यह देखकर मैं बहुत अचरज, रोमांच और पुलक से भर गया। वह दोपहर वहीं फ्रीज हो गई। घड़ी की बेड़ी न होती तो हम शायद शाम तक भी वहीं बैठे-बतियाते रहते।

केडियाजी ने अपने बैग से दो-तीन पुरानी डायरियाँ निकालीं। इन सबमें भवानी प्रसाद मिश्रजी की कविताएँ नीली स्याही से अंकित थीं। मैं यह सब देखकर बहुत रोमांचित हुआ। भवानी भाई के प्रति उनका समर्पण देखकर नत हुआ। उन्होंने इन्हीं डायरियों में से उनकी कुछ लगभग अनसुनी कविताएँ सुनाईं। फिर उन्होंने और एक डायरी निकाली और कहा—देखिए, भवानी भाई की हस्तलिपि में उनकी कविताएँ! यह देखकर मैं बहुत अचरज, रोमांच और पुलक से भर गया। वह दोपहर वहीं फ्रीज हो गई। घड़ी की बेड़ी न होती तो हम शायद शाम तक भी वहीं बैठे-बतियाते रहते।

यह मेरे जीवन की एक बेहद कोमल, घनी और दुर्लभ दुपहरी थी।

कुछ ही दिन बीते होंगे कि एक दिन केडियाजी ने फोन किया—आपको एक पुस्तक लोकार्पण समारोह में आमंत्रित करना चाहता हूँ। वहाँ आपको कविता पाठ भी करना होगा। मैंने हिचकते हुए 'हाँ' कर दी। हिचक इसलिए कि पता नहीं, मारवाड़ियों के बीच कविता के लिए कितनी तो जगह होगी। ऊपर से जब दिल्ली से एक हास्य कवि भी आमंत्रित हों तो मेरी क्या बिसात! पर उन्होंने आश्वस्त किया। इस समारोह में प्रियंकर पालीवालजी भी बतौर मुख्य वक्ता आमंत्रित थे।

यह संभवत: २०१८ के मई की कोई तारीख थी। कलकत्ता के एक उद्योगपति श्री विनोद मीमानीजी के कविता-संग्रह 'मेरी खुली किताब' का लोकार्पण समारोह था यह। पुस्तक केडियाजी के प्रतिश्रुति प्रकाशन से ही प्रकाशित हुई थी और इसकी भूमिका लिखी थी पालीवालजी ने। केडियाजी और मीमानीजी का विशेष आग्रह था कि सपरिवार ही पधारें तो उनका आग्रह टाल न सका। मना करने के बावजूद, मीमानीजी ने बाकायदा घर से हमें लेने के लिए कार भी भेज दी। पत्नी और दोनों छोटी बेटियों के साथ पहुँचा। समारोह और मंच, दोनों सुव्यवस्थित और गरिमापूर्ण लगे तो पूरी तरह आश्वस्त हो गया। उद्घाटन, लोकार्पण, मुख्य अतिथि का संबोधन और इसके बाद हमारा कविता पाठ भी संपन्न हुआ।

मैंने दो-तीन कविताएँ और दो छोटी गजलें सुनाईं। श्रोताओं की तल्लीनता और तालियों से लगा, उन्होंने मुझे ध्यानपूर्वक सुना और समझा है। मंच संचालक ने जब यह टिप्पणी की कि आप तो हास्य कवि पर भी भारी पड़ गए तो मुझे सचमुच खुशी हुई, जो बाद में भोजन के समय श्रोताओं से मिली कई व्यक्तिगत टिप्पणियों से दुगुनी हो गई। कहने का आशय यह कि मारवाड़ी समाज में भी कविता के लिए इज्जत है, बशर्ते आपकी कविता में दम हो! ऐसे ही बैंकरों को भी शुष्क मिजाज का माना जाता है। लेकिन मैंने महसूस किया कि जब कभी मुझे उनके बीच कविता पाठ का अवसर मिला, उन सबने मेरी कविताओं को बहुत अच्छे से 'रिसीव' किया और 'ऐप्रिशिएट' भी किया।

फिर एक दिन विनोद मीमानीजी ने मुझे, लक्ष्मण केडियाजी और प्रियंकर पालीवालजी को दोपहर के भोजन पर आमंत्रित किया। उनका मन था कि हम सब एक बार अनौपचारिक तौर पर मिलें, बैठें। समारोह के दौरान वह तसल्ली कहाँ हो पाती है। लाख मना करने के बाद, फिर घर से लेने गाड़ी भिजवा दी। हम सब मिले कोलकाता के दि बेंगॉल रोईंग क्लब में। उस दिन इसी बहाने ढेर सारी बातें हुईं। विनोद मीमानीजी स्वभाव से इतने विनम्र और जमीनी आदमी लगे कि लगा ही नहीं कि वे एक बड़े उद्योगपति हैं। बिल्कुल सादा पहनावा और बिल्कुल सरल-सहज व्यवहार!

अब जब लक्ष्मण केडियाजी के एक फेसबुक पोस्ट से उनके निधन का पता चल रहा है तो उनका चेहरा बरबस आँखों के सामने घूम रहा

है…मन दु:खी हो गया है… २८ नवंबर, २०२० को उनका स्वर्गवास हो गया था। केडियाजी ने उनका स्मरण करते हुए बहुत ही आत्मीयता के साथ उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला है।

खैर, इस कार्यक्रम के बाद और एक सुंदर अवसर मिला कविता पाठ का। इस बार प्रियंकर पालीवालजी का आग्रह था। बालीगंज सर्कुलर रोड में ही 'सृजन पोएट्री अड्डा' नाम की एक छोटी सी साहित्यिक संस्था है। पर बहुत संजीदा और सुरुचिपूर्ण। इसमें भी कुछ मारवाड़ी उद्योगपतियों की सक्रियता है। विभिन्न भाषाओं के कवि-लेखक तो जुड़े ही हैं, इससे तो ९ जून, २०१८ को हम सब जुटे 'सृजन' के अड्डे पर। इस आयोजन में ऊषा उत्थुपजी मुख्य अतिथि थीं तो इस आयोजन का रुतबा ऐसे ही बढ़ गया था। बहुभाषा-भाषी कवियों का कविता पाठ था। अंग्रेजी, असमिया और बांग्ला के तीन-चार कवि थे और हिंदी से मैं ही था।

ऊषा उत्थुपजी के साथ मंच साझा कर सचमुच बहुत अच्छा लगा। उन्हें भी मेरी कविताएँ पसंद आईं। उन्होंने खुद कविताओं वाले पन्ने मुझसे माँग लिए कि लाओ, कभी हुआ तो इनको गाऊँगी! जब तक मैं सेल्फी लेने की सोचता, उससे पहले ही उन्होंने कह दिया—आओ, तुम्हारे साथ एक सेल्फी हो जाए! सचमुच ऊषा उत्थुपजी का अंदाज ही कुछ अलग है! इतनी उम्र में भी वे इतनी 'यंग' लगती हैं कि 'यंग' लड़कियाँ उनसे मात खा जाएँ।

ऊषा उत्थुपजी से यह मेरी दूसरी मुलाकात थी। पहली मुलाकात हुई थी विकास कुमार झाजी के उपन्यास 'मैकलुस्कीगंज' पर आयोजित एक कार्यक्रम में। प्रभा खेतान फाउंडेशन ने इस उपन्यास पर अंग्रेजी में एक पैनल डिस्कशन रखा था, कोलकाता के होटल हयात रिजेंसी में। यह संभवत: २०१७ के शुरुआती दिसंबर की बात होगी। बिलासपुर से सतीश जायसवालजी और तनवीर हसनजी भी आए थे। सतीशजी ने ही कहा था, तुम भी आ जाओ।

दफ्तर के बाद शाम को थोड़ी देर से पहुँचा था, पर आयोजन के बाद हम देर तक जमे रहे ऊषा उत्थुपजी के ठहाकों के साथ! ऊषाजी के जाने के साथ यह महफिल उठी तो हम विकासजी के कमरे में एक बार फिर जम गए। और जाम के साथ गजलों और गानों का जो सिलसिला चला तो रात जवाँ हो उठी। ऊषा उत्थुपजी को किसी ने गोवा की बियर की ढेर सारी छुटकी थैलियाँ भेंट की थीं, और उन्होंने ये सब हमें भेंट कर दी थीं।

ओह, इस रात का नशा अब भी तारी है! जीवन में इस रात की याद बनी रहेगी।

सा॰अ॰

जे-२/४०६, रिजर्व बैंक अधिकारी आवास
गोकुलधाम, गोरेगाँव (पूर्व), मुंबई-४०००६३
दूरभाष : ९४२९६०८१५९

नवगीत

आँख में बादल

• बृज राज किशोर 'राहगीर'

सुपरिचित कवि-लेखक। अब तक तीन काव्य-संग्रह, एक गजल-संग्रह और एक गीत-संग्रह प्रकाशित। आकाशवाणी तथा मंचों पर अनेक बार काव्य-पाठ। श्रेष्ठ गजलकार सम्मान से सम्मानित।

भीगा हुआ मन

नेह की बरसात में
भीगा हुआ मन,
माँगता है,
नाचने के लिए आँगन।

प्रेम का बादल बने तुम
और बरसे,
जुड़ गई है अब नई
आसक्ति घर से,
खूब अच्छा लग रहा है
यह नयापन।

गंधमादन पर्वतों की
ओर से ज्यों,
आ रही हो एक
मादकता भरी बू,
है नशा, जबसे मिला है
रूप का धन।

आत्मा से भी जुड़े
संबंध बेशक,
पर गए हैं देह से ही
आत्मा तक,
देह में ही देह ने
पाया विसर्जन।

भाव-सागर के
किनारे बैठ जाऊँ,
रूह में गहरे उतर
गोते लगाऊँ,
प्रीति-पथ से
गीत को भेजूँ निमंत्रण।

गाँव का पीपल

हाइवे के बीच आया,
गाँव का पीपल।
काटने की सुगबुगाहट
से मची हलचल।

लोग यह बतला रहे हैं,
सौ बरस का है।
गाँव के मुखिया सरीखा,
मान इसका है।
हर शनीचर को चढ़ाते
हैं यहाँ सब जल।

आस्था का यह शिखर भी
टूट जाएगा।
आधुनिकता का सफर,
सब लूट जाएगा।
सोचकर घिरने लगे हैं,
आँख में बादल।

रास्तों पर दौड़ते हैं,
तीव्र गति वाहन।
पेड़-पौधे नष्ट करके,
चाहिए जीवन।
है इसी संघर्ष में,
पर्यावरण घायल।

प्रगति के सोपान लेकर,
अब कहाँ जाएँ।
रह गई चिंता यही,
हम साँस ले पाएँ।
प्रकृति से अब बैर का,
मिलने लगा है फल।

सा॰अ॰

ईशा अपार्टमेंट, रुड़की रोड,
मेरठ-२५०००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२९४७३७९

पाँच सबसे खूबसूरत लघु कथाएँ

मूल : **गाब्रिएल गार्सीया मार्केस**

अनुवाद : **अश्वनी कुमार**

श्री गाब्रिएल गार्सीया मार्केस (१९२७-२०१४) स्पैनिश भाषा के ऐसे रचनाकार थे, जिनके लेखन ने समूची दुनिया के साहित्य को प्रभावित किया। उनके उपन्यास 'एकाकीपन के सौ वर्ष' को बीसवीं सदी की सबसे महत्त्वपूर्ण कृतियों में शुमार किया जाता है। प्रस्तुत लघु कहानियाँ 'कॉवेरसासिओनेस देसदे ला सोलेदाद' (बोगोता, २००१) नामक पत्रिका में प्रकाशित की गई थीं।

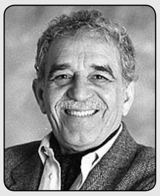

: एक :

लगभग पाँच साल का एक बच्चा, जिसने मेले की भीड़ में अपनी माँ को खो दिया था, एक पुलिस अधिकारी के पास जाकर पूछता है, "क्या आपने ऐसी महिला को देखा है, जो मेरे जैसे बच्चे के बिना घूम रही हो?"

: दो :

दो वर्षीय मैरी जो अँधेरे में खेलना सीख रही है, उसके माता-पिता, मिस्टर और मिसेज माइ को उस छोटी लड़की का जीवन या उसके शेष जीवन के लिए अंधे होने के बीच चयन करने के लिए मजबूर किया गया था। जब छह प्रतिष्ठित विशेषज्ञों ने उसकी आँखों में 'रेटिनोब्लास्टोमा' पाया तो मेयो क्लीनिक में लिटिल मैरी जो की दोनों आँखें निकाल दी गईं। ऑपरेशन के चार दिन बाद छोटी लड़की ने कहा, "माँ, मैं जाग नहीं सकती...मैं जाग नहीं सकती।"

: तीन :

यह उस निराश आदमी की दास्तान है, जिसने दसवीं मंजिल से नीचे सड़क पर छलाँग लगाई थी और गिरते वक्त उसने खिड़कियों से अपने पड़ोसियों की घनिष्ठता, घरेलू झगड़े, गुप्त प्रेम, खुशी के पल को देखा, जिसकी खबर कभी भी सीढ़ियों तक नहीं पहुँच पाती थी, इसलिए सड़क के फुटपाथ से टकराते ही दुनिया के बारे में उसकी धारणा पूरी तरह से बदल गई थी और वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि जिस जीवन को उसने झूठे कारणों के वजह से खत्म करने का फैसला लिया था, वह जीने लायक था।

: चार :

बर्फ में खोए हुए दो खोजकर्ता तीन कष्टदायक दिन बिताने के बाद एक परित्यक्त केबिन में शरण लेने में कामयाब रहे। अगले तीन दिनों के बाद उनमें से एक की मृत्यु हो गई। जीवित बचे व्यक्ति ने केबिन से लगभग सौ मीटर की दूरी पर बर्फ में एक कब्र खोदी और शरीर को दफना दिया। हालाँकि, अगले दिन जब वह अपनी पहली शांतिपूर्ण नींद से जगा, तो उसने उसे फिर से घर के अंदर मृत और बर्फ में परिवर्तित पाया, जो अपने बिस्तर के सामने एक सभ्य मेहमान की तरह बैठा हुआ था। उसने उसे फिर से दफनाया, शायद अधिक दूर की कब्र में, लेकिन जब वह अगले दिन उठा तो उसने उसे फिर से अपने बिस्तर के सामने बैठा हुआ पाया। फिर उसका दिमाग खराब हो गया। उस समय उसके पास जो डायरी थी, उससे उसकी कहानी की सच्चाई जानी जा सकती है। इस रहस्य को दिए जाने वाले कई स्पष्टीकरणों में से एक सबसे प्रशंसनीय प्रतीत होता है : जीवित व्यक्ति अपने अकेलेपन से इतना आहत हो चुका था कि उसने खुद ही सोते समय उस लाश को खोदकर निकाला था, जिसे उसने जागते हुए दफनाया था।

: पाँच :

फायरिंग दल ने उसे एक ठंडी सुबह उसकी कोठरी से उठा लिया, और सभी को फाँसी स्थल तक पहुँचने के लिए पैदल ही बर्फीले मैदान को पार करना पड़ा। सिविल गार्ड टोपी, दस्ताने और तीन रंगों वाली टोपी पहनकर ठंड से अच्छी तरह से सुरक्षित थे, लेकिन फिर भी वे उस बर्फीली वीरान जगह में काँप रहे थे। बेचारा कैदी, जिसने केवल एक फटा हुआ ऊनी जैकेट पहना हुआ था, अपने लगभग जमे हुए शरीर को रगड़ने के अलावा कुछ नहीं किया, जबकि वह जोर-जोर से उस जानलेवा ठंड को कोस रहा था। कुछ ही क्षण में प्लाटून का कमांडर रोने से परेशान होकर चिल्लाया—अबे ओय, इस घटिया ठंड में जल्दी से शहीद हो जा। हमारे बारे में सोच, हमें वापस भी जाना है।

सा/अ

१२-१२-४९, रवींद्र नगर, सीताफलमंडी,
सिकंदराबाद-५०००६१ (तेलंगाना)
दूरभाष : ९८११८६७२८०

yātrā

यात्रा-वृत्त

विश्वभारती और शांतिनिकेतन में दो दिन

• विनीता कुमारी

सासाराम, जिला रोहतास (बिहार) में जन्म, समाजशास्त्र तथा बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन में स्नातकोत्तर। यूको बैंक, प्रधान कार्यालय, कोलकाता में राजभाषा अधिकारी के रूप में कार्यरत। पर्यटन, लोकगीत तथा लोक-कला में अभिरुचि; संस्मरण तथा यात्रा-वृत्तांत प्रकाशित। निबंध प्रतियोगिताओं में पुरस्कार प्राप्त।

भ्रमण शब्द सुनते ही शिशु हो या प्रौढ़ मन में एक नई स्फूर्ति का संचार हो जाता है। मेरा अनुभव भी कुछ ऐसा ही रहा, जब मुझे अपने राजभाषा अधिकारी पद के कार्यकाल के दौरान पहली बार नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (बैंक), कोलकाता के माध्यम से ऐसे किसी शैक्षिक भ्रमण पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। उसी पल से मेरे मन में कई नवीन भाव उठने लगे। फिर मुझे यह भी खयाल आया कि जब सोचने मात्र से इतने आनंद की अनुभूति हो रही है तो वहाँ जाकर कितनी अविस्मरणीय स्मृतियों का अहसास होगा। फिर हो भी क्यों न, वह जगह है ही इतनी रोचक और ज्ञानवर्धक। यह तय हुआ कि १५ फरवरी, २०२४ के सूर्योदय के साथ एक नए जागरण की ओर हमारा प्रस्थान होगा, जिसे हमने 'शैक्षिक भ्रमण' का नाम दिया। यह कोलकाता से 'विश्वभारती-शांतिनिकेतन' का भ्रमण था। मैंने अभी तक इस जगह का नाम ही सुना था, वहाँ जाना प्रथम बार ही हो रहा था। अत: कई जिज्ञासाएँ मन में अठखेलियाँ कर रही थीं। मेरी सारी मनभावनी चीजें मुझे वहाँ मिलने वाली थीं, जैसे किताबों का विराट् संग्रह, गुरुकुल में अध्ययनरत बच्चों को देखना, उनसे मिलना और एक शांत वातावरण जैसा नाम से प्रतीत होता है 'शांतिनिकेतन—शांति का निवास', जो महानुभाव देवेंद्रनाथ ठाकुर का ध्येय था। तो बस अब १५ फरवरी, २०२४ के सूर्योदय का इंतजार मात्र था। १५ फरवरी की सुबह आँखें खुलने के साथ भ्रमण पर जाने की उत्सुकता से मन विभोर था। पूर्वाह्न १० बजे हम सब को पूर्वविदित स्थान रवींद्रसदन मेट्रो के पास पहुँचना था। सभी प्रतिभागी एकत्र होकर बस में बैठे और कुछ ही मिनटों के बाद बस रवाना हो गई। हम सब लगभग शाम के अपराह्न ०४:३० बजे फूलों से सज्जित शांतिनिकेतन के गेस्ट हाउस के प्रांगण में पहुँच गए।

शांतिनिकेतन का वातावरण देखकर मुझे यह आभास हो चुका था कि आगे का कार्यक्रम और भी रोमांचकारी और ज्ञानवर्धक रहने वाला है। गेस्ट हाउस में जल्द ही सबको कमरे आवंटित कर दिए गए। कुछ ही समय बाद हमें हिंदी भवन की ओर भावी कार्यक्रम के लिए अग्रसर होना था। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी वर्ष १९३० में विश्वभारती में हिंदी के अध्यापक होकर आए। यहाँ दो दशकों तक उन्होंने पढ़ाया भी। कई विषम परिस्थितियों से गुजरते हुए हजारीप्रसाद द्विवेदी ने रवींद्रनाथ ठाकुर के आशीर्वाद तथा कोलकाता के श्रीमंतों के अर्थसाहाय्य से विश्वभारती में हिंदी भवन की स्थापना की। यदि विश्वभारती का परिवेश तथा गुरुदेव का सान्निध्य न होता तो हजारीप्रसाद द्विवेदी नहीं होते। शाम ०५:१५ बजे हम हिंदी भवन जाने लगे और ०५:३० बजे से वहाँ कार्यक्रम शुरू हो गया। विश्वभारती के हिंदी विभाग के मेधावी छात्रों ने उस कार्यक्रम की रूपरेखा, अतिथि सत्कार, सज्जा और शालीनतापूर्वक कार्यवाहियों का बहुत उत्कृष्ट संयोजन प्रस्तुत किया। वहाँ हमने यह भी पाया कि जब शांतिनिकेतन के समस्त सदस्य, चाहे वे विद्यार्थी हों, आचार्य हों, अतिथिजन हों, कोई भी अपने मन में आने वाले उत्साहभाव को व्यक्त करना चाहते हैं तो हमारी तरह तालियाँ बजाने के बजाय 'साधु-साधु' कहकर अपने हृदयस्थ विचार प्रकट करते हैं। उस कार्यक्रम के बाद हमारे अंदर ग्रहणशीलता तथा शांतिनिकेतन के प्रभाव की आकर्षकता का भाव यह था कि हम सब भी अपने मनोभावों को उस कार्यक्रम के पश्चात् 'साधु-साधु' कहकर व्यक्त करने लगे। कार्यक्रम में दो संगीतकार भी आमंत्रित किए गए थे, जिन्होंने कविताओं को गायन के माध्यम से हम सब को सुनाया। उस शाम को और भी मोहक बना दिया दुष्यंत कुमार की गजल 'एक जंगल है तेरी आँखों में' के हृदयहार गायन ने। कार्यक्रम के दौरान हम सभी आगंतुकों को 'विश्वभारती पत्रिका' दी गई। हमारे यूको बैंक के राजभाषा हिंदी विभागाध्यक्ष अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी और विश्वभारती के हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. सुभाष चंद्र रायजी की ज्ञानवर्धक बातों के साथ लगभग ७ बजे इस कार्यक्रम का समापन हुआ।

अब हम सब पुन: अपने गेस्ट हाउस की तरफ रवाना हुए। राह में शांतिनिकेतन के प्रांगण में चलने वाली गुलाबी जाड़े की ठंडी हवाओं और एक अविस्मरणीय शांतिपूर्वक संपन्न कार्यक्रम की अनुभूति के साथ हम अपने-अपने कमरों में चले गए। रात्रि ९ बजे भोजन के बाद हम गेस्ट हाउस में थोड़ा टहले और चाँदनी में नहाए पेड़ों को निहारते रहे। यदि अनुभव की वास्तविक परिभाषा कही जाए तो अगर आपके अंतर्मन में व्याकुलता व्याप्त है तो शायद आपको यह जगह और उसके परिवेश में उपस्थित संपन्नता का आभास नहीं होगा। लेकिन एक शांत और स्थिर मन से उस जगह को महसूस करेंगे तो मानो अपनी अंतरात्मा तक को महसूस कर पाएँगे। प्रकृति के साथ उस भावनात्मक संबंध को शब्दों में शायद ही परिभाषित किया जा सके।

अगले दिन यानी १६ फरवरी को प्रात:काल लगभग ६ बजे हमारा सवेरा हुआ। मैं गेस्ट हाउस के रूम न.-१७ में रुकी थी। जब मैंने अपने कमरे की खिड़की खोलकर बाहर देखा तो एक विशाल पेड़ पर तोते और कुछ अन्य पक्षी दिखाई दिए। उस मोहक वातावरण में तल्लीन उन पक्षियों की मधुर आवाज सुनकर मानो दुनिया की सारी उलझनें, चिंताएँ और अपने ६ वर्ष के बेटे से क्षणिक दूर होने का अनुभव एक क्षण के लिए तिरोहित सा हो गया। सौभाग्य से मुझे गेस्ट रूम में जिनके साथ रहने का मौका मिला, वे भी एक शांत और गंभीर स्वभाव की महिला थीं। प्रात: हम दोनों ने स्नान-ध्यान कर अपने गेस्ट हाउस के प्रांगण में टहलने का निश्चय किया। जिससे हम ज्यादा-से-ज्यादा उस अद्भुत वातावरण के निर्मल सौंदर्य को महसूस कर सकें। कहते हैं कि यह इनसान का स्वभाव होता है कि उसे जितना दो, वह उससे कहीं ज्यादा पाने की अपेक्षा रखता है। यथार्थ में मैंने शांतिनिकेतन के लिए उस क्षण अपनी एक इत्मीनान भरी गहरी नींद से जागने के बाद यही अनुभव किया कि मेरा इस भूमि पर पुन: फिर कब आगमन होगा। बहरहाल, इन सभी अनुभवों के बाद आगे की योजनाओं को केंद्रित करना था, इसलिए हमने सुबह के नाश्ते के तत्काल बाद विश्वभारती में स्थित संग्रहालय की ओर रुख किया। राह में हमने गुरुकुल के छात्रों को अध्ययनरत देखा, अपने अदम्य विकास के घटनाचक्र को बयाँ करते अति विशालकाय वृक्षों को देखा, उपासना गृह देखा, रवींद्र भवन, टैगोर आश्रम और तरह-तरह के सुंदर फूलों से सजी क्यारियों को देखा।

शांतिनिकेतन में स्थित उपासना घर, जो 'उपासना गृह' के नाम से भी जाना जाता है, पूरे शांतिनिकेतन में सबसे आश्चर्यजनक और सुंदर इमारतों में से एक है। बेल्जियन काँच से बने इस हॉल को 'काँच मंदिर' भी कहा जाता है। प्रत्येक शाम इस हॉल को मोमबत्तियों से सजाया जाता है, जो इसकी सुंदरता को और अधिक बढ़ाती है। टैगोर हाउस शांतिनिकेतन का एक खास स्थल है, जहाँ रवींद्रनाथ अपना ज्यादा समय व्यतीत किया करते थे। एक बड़े क्षेत्र में होने से यह भवन बहुत ही आकर्षक लग रहा था। चूँकि कला और इतिहास के प्रति मेरी रुचि है, इसलिए ये सारे स्थल मेरे लिए भी बहुत खास अनुभव से जोड़ने वाले थे।

वहाँ हमें एक बहुत रोचक स्थान भी देखने को मिला, जहाँ गरमियों के दिनों में रहने से रवींद्रनाथ ठाकुर को शीतलता का अहसास होता था और वे यहाँ गरमियों में अपना समय गुजारते थे। यह भवन मिट्टी तथा अलकतरे से निर्मित है, जो आज भी खुद में अपनी मनमोहकता को समेटे आने वाले असंख्य दर्शनार्थियों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। इसे 'श्यामली' के नाम से जाना जाता है। संग्रहालय के भ्रमण के दौरान रवींद्रनाथ ठाकुर से जुड़ी कला-रचनाओं का वृहद् संग्रह भी देखने को मिला। साहित्यिक रचनाएँ, कविताएँ, बँगला संस्कृति से संबंधित विधाएँ, इन सब में अगर किसी कला-प्रेमी का चाव हो तो इस से बढ़कर खास स्थल और कोई नहीं हो सकता। इस संग्रहालय ने कई सालों के अमूल्य सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक धरोहर को यहाँ सँभालकर रखा है। शांतिनिकेतन में रवींद्रनाथ के आवास परिसर में स्थित ऐतिहासिक कुआँ भी दर्शनीय है। साथ ही संग्रहालय में रवींद्रनाथ ठाकुर द्वारा उपयोग की गई कार भी हमने देखी, जो उनके जीवन में संपन्नता और गौरव को दरशाती है।

अब हमारा अगला पड़ाव ११:३० बजे से होने वाले कार्यक्रम में एकत्र होना था। इस कार्यक्रम का शुभारंभ शांतिनिकेतन के वेदगान और दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। एक सौभाग्य की बात यह भी रही कि कार्यक्रम के अंत में मुझे अपनी स्वरचित कविता सुनाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। जो मेरे प्रिय यूको बैंक, शांतिनिकेतन, विश्वभारती और रवींद्रनाथ ठाकुर पर आधारित थी।

कार्यक्रम समाप्ति के पश्चात् लगभग २ बजे हम पुन: अतिथिगृह में पहुँचे और मध्याह्न भोजन कर वापसी की तैयारी में लग गए। सामान समेटते हुए खिड़की के बाहर के दृश्यों को मनभर देख लेने की इच्छा खत्म होने का नाम नहीं ले रही थी। कुछ तो विशेष है इस परिवेश में, जहाँ की हवाएँ भी आपसे बातें करने लगती हैं; पेड़-पौधे मित्र प्रतीत होते हैं, धरती आँचल फैलाए कुछ और पहर यहीं रुक जाने को कहती है और यह खुला आसमां तो मानो आपको खुद में समेट लेने को तैयार खड़ा है। कैसे न कोई इस वातावरण में पानी और चीनी की तरह घुलकर खुद शर्बत बन जाए। बहरहाल अपनी भावनाओं को विवशता की पोटली में डालकर हम सब लगभग ०३:२० बजे शांतिनिकेतन को अलविदा करते हुए बस से वापस कोलकाता के लिए रवाना हुए। बस के चलते ही एक विरह भावना का बोध हो रहा था। आज सुबह से मध्याह्न तक की दिनचर्या इतनी व्यस्त थी कि दिन गुजरने का आभास तक नहीं हुआ। या यों कहें कि सबकुछ इतना मनोहर था कि ये दो दिन गगन की ऊँचाइयों में उड़ते पतंग से भी तेज गति से निकल गए।

अब बस में बैठकर हमने एक-दूसरे के साथ अपने अनुभवों को बाँटने के बजाय शांतिनिकेतन के दृश्यों को एकटक निहारना ज्यादा उचित समझा। चूँकि हमारी बस ज्यादा भरी हुई नहीं थी, इसलिए यह एक अवसर भी बन गया कि ज्यादातर लोग विरह की उस घड़ी में बस की खिड़की से चिपके नजर आ रहे थे। शांतिनिकेतन के परिसर को पार करने के बाद एक बार फिर हम सब की अनगिनत बातें शुरू हो गईं। शाम की चाय पीने हम रास्ते में रुके। फिर बस चली और हम बातों-ही-बातों में कब कोलकाता नगरी में वापस आ पहुँचे, पता ही नहीं चला। रात्रि ८ बजे तक मैं अपनी अतुल्य स्मृतियों के साथ विरह की वेदना और व्याकुलता से मेरी आने की प्रतीक्षा में आसरा लगाए अपने पुत्र के पास अपने कोलकाता स्थित आवास पर पहुँच गई। इस प्रकार एक अविस्मरणीय शैक्षिक भ्रमण संपन्न हुआ। भ्रमण की स्मृतियाँ जीवनपर्यंत मेरे हृदय में साहित्य, कला, दार्शनिकता और संस्कृति की एक प्रेरणा-जोत बनकर रहेगी। यह था—आमादेर शांतिनिकेतन।

सा अ

यूको बैंक, राजभाषा विभाग, प्रधान कार्यालय,
तृतीय तल, १० बीटीएम सरणी, कोलकाता-७००००१
दूरभाष : ९७९२२४६०६०

चोट का अहसास

• शकुंतला अग्रवाल 'शकुन'

पात्र-परिचय

अमर : तन्मय के पिता, आयु लगभग ५० वर्ष।
शिक्षक : गणित के ज्ञाता, उम्र लगभग ३० वर्ष।
तन्मय : कक्षा आठ का छात्र, आयु लगभग १३ वर्ष।
सुनार : ३५ वर्षीय व्यक्ति, जिसको जेवर बनाने की माहारथ हासिल।
कुम्हार : घड़े बनाने में माहिर, ४० वर्षीय व्यक्ति।
मूर्तिकार : पत्थर को आकार देने में माहिर, ५० वर्षीय व्यक्ति।

(परदा उठता है)

(शाम को अमर जब घर आता है तो अपने बेटे तन्मय को उदास देखकर पूछता है।)

अमर : बेटा! उदास क्यों हो?
तन्मय : पापा! मैं कल स्कूल नहीं जाऊँगा।
अमर : क्यों नहीं जाओगे?
तन्मय : वह गणित वाले सर ने आज मुझे थप्पड़ मारा। अब मैं स्कूल नहीं जाऊँगा, आप मेरा दाखिला दूसरे स्कूल में करवा दीजिए।
अमर : तन्मय बेटा! आपने कोई गलती की होगी, तभी सर ने आपको थप्पड़ मारा। कोई बेवजह तो मारेंगे नहीं।
तन्मय : पापा! मैंने गृह कार्य नहीं किया था, बस इतनी सी बात थी। इस पर कोई मारता है क्या? उनको मालूम नहीं है क्या कि बच्चों को मारना कानूनी अपराध है? आप मेरा दाखिला दूसरे स्कूल में करवा दें। या सर के खिलाफ थाने में शिकायत दर्ज करवा दीजिए।

(अमर सोचने लगा कि ऐसे तो तन्मय पढ़ भी नहीं पाएगा और इसके कदम गलत दिशा में पड़ जाएँगे। इसको समझाना अति आवश्यक है। कुछ सोचकर—)

अमर : तन्मय! तुम मेरी एक बात मानोगे?
तन्मय : जी पापा! अवश्य मानूँगा।
अमर : ठीक है बेटा! हम दोनों आज घूमने चलते हैं। आपकी समस्या पर हम वापस आकर विचार करेंगे।

सुपरिचित रचनाकार। अब तक दोहा, कुंडलियाँ, लघुकथा की पाँच पुस्तकें तथा कई साझा संग्रह प्रकाशित। 'साहित्य सुधाकर', विक्रमशिला हिंदी विद्यापीठ द्वारा 'विद्यावाचस्पति सम्मान', 'छंद-रथी' एवं अन्य कई सम्मान प्राप्त।

तन्मय : ओके, पापा!

दूसरा दृश्य

(अमर अपने बेटे को कुम्हार के यहाँ लेकर आ जाता है, जहाँ कुम्हार चाक चला रहा है। उस पर काली मिट्टी को अपने हाथों से घड़े का आकार दे रहा है। जब घड़ा बन जाता है, तो कुम्हार घड़े को उतारकर एक हाथ अंदर रखता है और दूसरे हाथ से घड़े को बाहर से पीटता है। उसके बाद एक सुंदर व मजबूत घड़ा बनकर तैयार हो जाता है, यह सब देखकर तन्मय उत्सुकता से पापा से पूछता है।)

तन्मय : पापा! यह कुम्हार मिट्टी से कितना सुंदर घड़ा बना देता है। लेकिन एक बात समझ नहीं आई कि यह घड़े को क्यों पीट रहा है?
अमर : बेटा! कुम्हार घड़े को मजबूत और दोष-रहित बनाने के लिए उसको ऊपर से पीटता है, लेकिन अंदर अपना हाथ रखे रहता है। जिससे उसमें कोई छिद्र नहीं रहे और एक परफेक्ट घड़ा बनकर तैयार हो। कुछ समझ आया?
तन्मय : और वो आग कैसी है? शायद कुछ जल रहा है।
अमर : हाँ, आवाँ जल रहा है, उसमें घड़े पक रहे हैं। इसके बाद ही घड़े ठंडा पानी देने लायक बनेंगे।
तन्मय : ओह! इतना सब करना पड़ता है। कितनी मेहनत करनी पड़ती है।
अमर : आओ चलें।

तीसरा दृश्य

(अमर तन्मय को लेकर एक सुनार की दुकान पर आ जाता है। जहाँ सुनार सोने को तपा रहा है।)

तन्मय : पापा! यहाँ क्यों आए हैं? मम्मी के लिए कुछ खरीदना है क्या?

अमर : नहीं, बेटा! आपको यह दिखाने के लिए कि जेवर कैसे बनाए जाते हैं?

तन्मय : *(तनिक झल्लाते हुए)* पापा! आप भी न, मुझे जेवर बनाना थोड़े ही सीखना है, मुझे तो इंजीनियर बनना है। चलिए, घर चलते हैं।

अमर : बेटा! आपको क्या बनना है, यह अभी सोचने का उचित समय नहीं है।

(आपने वादा किया था कि आप आज मेरी बात मानोगे। अपनी बात पर कायम रहिए और चुपचाप देखिए, सुनार क्या और कैसे कर रहा है? मैं आपसे बाद में प्रश्न पूछूँगा, तब जवाब देना है।)

तन्मय : जी, पापा!

अमर : *(कुछ देर बाद)* तन्मय! बताओ तो आपने क्या देखा?

तन्मय : सुनार सोने को तपा रहा है। सोना आग में तपकर ही प्रखर होगा। उसके बाद वह सोने को विभिन्न तरह के जेवर में परिवर्तित करेगा।

अमर : तन्मय! दुकान में जितने भी जेवर रखे हैं, वे सब सोने के तपने के बाद ही बने हैं।

तन्मय : अच्छा तो! सोना जब तक तपेगा नहीं, जेवर बनेंगे नहीं।

अमर : आओ, अब चलते हैं।

चौथा दृश्य

(अमर तन्मय को लेकर एक मूर्तिकार के यहाँ पहुँच जाता है, जहाँ मूर्तिकार छैनी से पत्थर को कुछ आकार देने में लगा है। तन्मय उत्सुकता से पूछता है।)

तन्मय : पापा! यह आदमी पत्थर क्यों तोड़ रहा है, इससे इसको क्या मिलेगा?

अमर : बेटा! यह पत्थर तोड़ नहीं रहा, बल्कि छैनी व हथोड़े से मूर्ति का निर्माण कर रहा है। जिसको बेचकर यह अपनी आजीविका चलाता है।

तन्मय : *(आश्चर्य से)* ओ, हो! समझा। *(मूर्तिकार की ओर मुखातिब होकर)* आप मुझे एक मूर्ति दिखा सकते हो क्या?

मूर्तिकार : आइए, अंदर चलते हैं।

(अमर, तन्मय मूर्तिकार के साथ अंदर आ जाते हैं, जहाँ मनमोहक मूर्तियाँ रखी हुई हैं।)

तन्मय : वाह! इतनी सुंदर-सुंदर मूर्तियाँ, भगवान् जी की भी है, पापा! लड्डू गोपाल की भी है। लेकिन यह एक अधूरी क्यों है?

अमर : बेटा! यह पत्थर चोट सह नहीं पाया और टूट गया। जो चोट सह गया, वह मूर्ति बन गया।

तन्मय : इस मूर्ति को मंदिर में स्थापित कर दिया जाएगा। इसका मतलब हम पत्थर की पूजा करते हैं।

मूर्तिकार : *(समझाता है)* बेटा! मूर्ति को स्थापित करके उसमें प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है। तब यह पूजा योग्य बनती है।

तन्मय : अच्छा, समझ गया।

अमर : आओ, अब हम घर चलते हैं। काफी देर हो गई घूमते हुए, आप भी थक गए होगे।

(पापा! मेरे एक संशय को दूर कर दीजिए, हम बाद में चलेंगे घर को। ठीक है, यहीं बैठते हैं। वह सामने गन्ने के जूस वाला है, उसको २ गिलास जूस का बोल आता हूँ। फिर हम इत्मीनान से बात करेंगे।)

तन्मय : रुकिए पापा! मैं बोल आता हूँ।

(तन्मय जूस की बोलकर आ जाता है।)

अमर : कहिए बेटा! क्या संशय है?

तन्मय : पापा! मुझको न मूर्तिकार बनना है, न ही सुनार की तरह जेवर बनाने हैं और न ही घड़ा बनाना है। फिर आपने मुझे यह सब दिखाया, इसके पीछे कोई तो उद्देश्य है। मुझको वही जानना है।

(तभी जूस वाला, जूस लेकर आ जाता है। दोनों जूस पीने लगते हैं। तत्पश्चात्—)

अमर : बेटा! चोटें सहकर एक पत्थर भगवान् बन जाता है। एक कच्चा घड़ा आग में तपकर सुंदर व पक्का घड़ा बन जाता है। सोना तपकर प्रखर हो जाता है। यह संभव इसलिए हो पाया, इन सबमें अपार सहनशक्ति थी।

बेटा! ऐसे ही आप अभी कच्चा घड़ा हो, जिसको आवाँ में तपाकर एक मजबूत घड़ा बनाना है। सोने की तरह प्रखर होना है और पत्थर की जैसे समय की चोटें सहकर दुनिया पर राज करने योग्य बनना है।

तन्मय : जी, पापा! मैं समझ गया, आपने मुझे इसीलिए यह सब दिखलाया कि मुझे सीख मिल सके। बड़े व गुरुजन हमको बेमतलब नहीं पीटते हैं। हमको योग्य व्यक्ति बनाना चाहते हैं।

मुझे अपने सर से कोई शिकायत नहीं, मैंने गृहकार्य नहीं किया था कई दिनों से, इसी वजह से उन्होंने मुझे थप्पड़ मारा था। मैं आज अपना गृहकार्य पूरा कर लूँगा, कल स्कूल जाऊँगा।

अमर : शाबाश बेटा! आओ घर चलें।

(पर्दा गिरता है)

सा
अ

हनुमंत कृपा, १०-बी-१२,
आर.सी. व्यास कॉलोनी,
केशव हॉस्पिटल के पास,
भीलवाड़ा-३११००१ (राज.)
दूरभाष : ९४६२६५४५००

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक अपने सुंदर कलेवर में प्राप्त हुआ, जिसकी प्रत्येक रचना एक से बढ़कर एक रोचक, शिक्षाप्रद, प्रेरक एवं संग्रहणीय बन पड़ी है। श्रीधर द्विवेदीजी का आलेख 'पौधों से हम कितना कुछ सीखते हैं' बेहद उपयोगी है। 'राम झरोखे बैठ के' स्तंभ बहुत ही रोचक लगता है। सुश्री ममता चतुर्वेदी का 'भारतीय संसदीय व्यवस्था में भारतीय स्त्रियाँ' जानकारियों से परिपूर्ण है। प्रेमपाल शर्माजी का यात्रा-संस्मरण 'वृंदावन के दर्शनीय प्राचीन मंदिर' हृदय को छू गया। इसमें अज्ञात मंदिरों के विषय में तथ्यों का शोध करते हुए अलौकिक जानकारी शाब्दिक शिल्प में सचित्र प्रस्तुत करने पर लेखक को हार्दिक बधाई। व्यंग्य, लघुकथाएँ, कहानियाँ एवं अन्य सामग्री भी बहुत ही रोचक व तथ्यपूर्ण जानकारियाँ लिये हुए है।

—कुलभूषण सोनी, दिल्ली

आद्योपांत पठनीय एवं संग्रहणीय अगस्त का 'साहित्य अमृत' प्राप्त हुआ। हम आज जिस स्वतंत्र एवं प्रजातांत्रिक भारत में जीवन का हर सुख भोग रहे हैं, वह हमें हमारे अमर पूर्वजों के अटूट साहस और संघर्ष के बाद मिला है। आज सोशल मीडिया का 'आतंक' है। कभी भी किसी अपुष्ट, तथ्यहीन बात को न तो इसमें उछालें और न ही आगे बढ़ाएँ। अपने-अपने कार्यक्षेत्र में नवोन्मेषिता लाएँ, नैसर्गिक न्याय के पक्षधर बनें। दूसरे पक्ष की अहमियत को ध्यान में रखें। युवा पीढ़ी के लिए आदर्श बनें। स्वतंत्रता बहुमूल्य है और दायित्वबोध से यह अमूल्य बनती है। पूर्ण और सच्ची श्रद्धा से कार्य करें तो राष्ट्र के अमर शहीदों को सांप्रतिक घड़ी में यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी और स्वतंत्रता समारोह का आयोजन भी।

—योगराज, खरड़ (पंजाब)

साहित्य अमृत का अगस्त अंक पढ़ा। अर्चना पैन्यूली की कहानी 'मुझ पर एक टैग लग गया' भारतीय नारी की दयनीयता तथा दृढ़ संकल्पशक्ति को प्रदर्शित कर रही है; साथ ही विदेशों में काम कर रहे भारतीय युवाओं की कर्मठता को भी। तारा मंगलजी की कहानी 'घर के दुश्मन' यथार्थ के खुरदरे धरातल से अवगत कराती है। तुलसी देवी तिवारीजी ने कहानी 'जन्मदिन' का अंत बहुत ही मार्मिक ढंग से किया है। विनीता देवहूति की कहानी 'आत्मज' संस्कृतनिष्ठ शब्दों में गढ़ी गई एक यथार्थपरक कहानी है तो 'सिंहवाहिनी' वर्तमान समय में राह भटके हुओं को मार्ग दिखलाने का कार्य कर रही है। राजेंद्र पटोरियाजी ने अपने आलेख में स्वतंत्रता पूर्व की हिंदी पत्रिकाओं की महत्त्वपूर्ण जानकारी दी है तो अजीत कुमार पुरीजी ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम और वीर सावरकर आलेख के माध्यम से सावरकरजी के बहुत से अनछुए पहलुओं को प्रस्तुत किया है। उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी' जी की चौपाइयाँ बहुत मार्मिक हैं। 'राम झरोखे बैठ के' में गोपाल चतुर्वेदीजी ने 'पिंजड़े के पंछी' के माध्यम से मनुष्य के जीवन की पूरी गाथा समेट ली है तो सूर्य प्रकाश मिश्रजी ने अपने व्यंग्य 'सम्मान समारोह' के माध्यम से मुहावरे 'अंगूर खट्टे हैं' को एक बार फिर सिद्ध कर दिया है। अंक की सभी लघुकथाएँ सोचने पर विवश करने वाली उत्कृष्ट रचनाएँ हैं। गिरीश पंकजजी का बाल एकांकी 'होम वर्क का भूत' चिंतनीय है। प्रकाश चंद पुनेठाजी का आलेख 'दिवान सिंह दानु : स्वतंत्र भारत के प्रथम महावीर चक्र विजेता' बहुत उत्कृष्ट है। कुल मिलाकर अगस्त अंक की पूरी सामग्री को पढ़कर संपादकीय श्रम और उच्च स्तरीय रचनाओं के चयन की बुद्धिमत्ता ही प्रकट हो रही है।

—डॉ. दिनेश पाठक 'शशि', मथुरा

'हर घर तिरंगा' का आह्वान करता 'साहित्य अमृत' के अगस्त अंक का मुखपृष्ठ आकर्षक है। स्वाधीनता संग्राम की अलख जगाने वाले स्वतंत्रता सेनानियों, क्रांतिकारियों, राष्ट्रभक्त कवियों को श्रद्धा-सुमन अर्पित करता अंक प्रभावित करता है। हम लोग भले ही कितने आधुनिक विचारों वाले बनें, पर रूढ़ मानसिकता से उबर नहीं पाते, इसका मार्मिक चित्रण अर्चनाजी ने अपनी कहानी 'मुझ पर टैग लग गया' में किया है। 'घर के दुश्मन', 'जन्मदिन', 'आत्मज' कहानियाँ भी अच्छी लगीं। राखी पर मालतीजी का लेख सारगर्भित है। यह रक्षाबंधन के पर्व की वैदिक, पौराणिक और किंवदंतियों की समृद्ध परंपरा से हमारा परिचय कराता है। विद्या केशव चिटकोजी का बाल गंगाधर तिलकजी पर लेख बहुत भावपूर्ण है। कर्नल वशिष्ठ का 'संदेशों की समझदारी' मार्मिक व प्रेरक है, यह हमारी सेना ही है, जो न केवल हर परिस्थिति से जूझने में, उस पर विजय पाने में सक्षम है, बल्कि हर रिश्ते को पूरी सच्चाई और कोमलता से जीती है। रुक्मिणीजी के साथ गोवा की यात्रा में आनंद आया। उर्वीजी की तथा अन्य सभी रचनाएँ उत्कृष्ट हैं, 'साहित्य अमृत' को पत्रिका के क्षेत्र में उच्च स्थान दिलाती हैं।

—माला श्रीवास्तव, ग्रेटर नोएडा

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक समय से प्राप्त हुआ। प्रतिस्मृति में आचार्य चतुरसेन की कहानी 'सिंहवाहिनी' पढ़कर मन प्रसन्न हो गया। कहानियों में अर्चना पैन्यूली की 'मुझ पर एक टैग लग गया' बड़ी मार्मिक है और समाज की मानसिकता को दरशाती है। तारा मंगल की 'घर के दुश्मन', तुलसी देवी तिवारी की 'जन्मदिन' भी दिल में गहरे तक उतर गईं। सत्य शुचि की लघुकथाएँ मनोरंजक हैं। राजेंद्र पटोरिया का आलेख आजादी से पूर्व निकलने वाली हिंदी पत्रिकाओं की सम्यक् जानकारी देता है। मालती शर्मा ने राखी के बारे में हमारा खूब ज्ञान बढ़ाया है। अजीत कुमार पुरी का सावरकर पर आलेख स्वाधीनता की लड़ाई में उनकी भूमिका को दिग्दर्शित करता है। विद्या केशव चिटको का आलेख तिलक के बारे में नई-नई और अनजानी बातों से परिचित कराता है, बेहद जानकारीपरक भी है। ऊषा निगम हमेशा भूले-बिसरे देशभक्तों को सामने लाती हैं—सरदार अजीत सिंह पर उनका आलेख एक क्रांतिकारी को सच्ची श्रद्धांजलि है। सूर्य प्रकाश मिश्र का व्यंग्य खूब मारक है। रुक्मणी संगल जी ने घर बैठे गोवा की सैर कराई, आनंद आया। गिरीश पंकज का एकांकी 'होमवर्क का भूत' बड़ा मजेदार लगा। कुल मिलाकर पूरा अंक ही शानदार लगा।

—डॉ. रामप्रकाश राय, गोरखपुर (उ.प्र.)

वर्ग पहेली (२२१)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे थे; उनके देहावसान के उपरांत अब **श्री ब्रह्मानंद खिच्ची** इसे तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० सितंबर, २०२४ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते नवंबर २०२४ के अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (२१९) का शुद्ध हल

१ घों	२ स	३ ला	■	४ फौ	ला	दी	■	५ आ
■	६ रो	ज	७ गा	र	■	■	८ आ	भा
९ टी	का	■	१० ज	न	११ क	दु	ला	री
■	१२ र	१३ स	ना	■	ले	■	प	■
१४ अ	■	ठि	■	१५ म	वा	१६ द	■	१७ ख्वा
१८ द	रि	या	■	द	■	१९ ग	२० री	ब
र	■	२१ जा	मु	न	■	२२ ला	त	■
२३ क	२४ स	ना	■	२५ ज	२६ रा	■	२७ ना	२८ क
■	दा	■	२९ प	र	ख	ना	■	ण्व

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री राम प्रसाद दुबे**
एफ एफ ३, प्लॉट सं. ७४
शक्तिखंड-२ इंदिरापुरम्
पो. शिप्रा सनसिटी
गाजियाबाद-२०१०१४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४३५३३६१०१

२. **डॉ. संध्या मेनन**
वृंदावनम् मुतुपिलाकाड ईस्ट
पोरुवषी, पो.ओ. कोल्लम
केरल-६९०५२०
दूरभाष : ९७४४५२४२१७

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली २१९ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री प्रदीप कुमार यादव, राजेंद्र कुमार, दिनकर सहल (नई दिल्ली), कृष्णा श्रीवास्तव (जबलपुर), रुक्मणी संगल (पटियाला), रेणु मिश्र (जयपुर), बद्री लाल (पोंडा), अनंत वर्मा (भिलाई), मधुरानी (बेंगलुरु), विनीता सहल (मुंबई), हरदेव सिंह धीमान् (शिमला), प्रमीला पाडिया (फरीदाबाद), शिवकांत (सेहलंग), बाल कुमार (बवानिया), पवन कुमार, अंकिता (महेंद्रगढ़), संतलाल रौहिल्ला (कनीना), रामकिशन पंवार (हनुमानगढ़), रामफल पटेल (सिंगरौली)।

बाएँ से दाएँ—

१. २२ सितंबर को मनाते हैं विश्व...दिवस (३)
३. कुल, वंश, खानदान (३)
६. पैसे का आठवाँ हिस्सा (३)
८. जहर, विष (३)
९. बहुत बोलने का भाव, बहुभाषिता (४)
११. पवन, समीर, वायु (२)
१२. घुल-मिल जाना, सम्मिलित होना (३)
१३. आरोहित होना, चढ़ना (३,२)
१५. स्वच्छ, सफेद, उज्ज्वल (३)
१६. घर के साथ लगा हुआ बाग (५)
१८. नाश, ध्वंस, हत्या (३)
२०. गीला, आर्द्र (२)
२१. चालचलन, व्यवहार, बर्ताव (४)
२२. हिसाब लगाना, गिनती करना (३)
२३. मुसाफिरखाना, धर्मशाला (३)
२४. मुग्ध होना, प्रसन्न होना (३)
२५. तारा, सितारा, मोती (३)

ऊपर से नीचे—

१. सप्ताह का एक दिन (४)
२. परिवर्तन होना, मुकरना (४)
३. घंटा बताने वाला एक यंत्र (२)
४. अप्रिय, जो अच्छा न लगे (४)
५. पेचीदगी का दूर होना, हल होना (४)
७. सलाह, राय, मत (२)
१०. छलिया, धूर्त (४)
११. प्रमाण का उल्लेख, उदाहरण (३)
१३. सावधान, होशियार (३)
१४. अच्छे लक्षणों वाला, होने वाला (४)
१५. छुटकारा, उद्धार बचाव (३)
१६. एक पीले रंग के फूलों का पेड़ (३)
१७. लाली, ललाई सुर्खी (४)
१८. जमा करना, एकत्र करने की क्रिया (४)
१९. युद्ध का मैदान (४)
२१. लकड़ी चीरने का औजार (२)
२३. लिप्त, लिपा, आलेपित (२)

वर्ग पहेली (२२१)

१		२	■	३		४	■	५
	■	६	७		■	८		
९	१०			■	११		■	
१२			■	१३			१४	
■		■	१५			■		■
१६		१७			■	१८		१९
	■	२०		■	२१			
२२			■	२३			■	
	■	२४			■	२५		

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

....

....

दूरभाष : ....

वर्ग पहेली (२२०) का हल अगले अंक में।

'इदं राष्ट्राय' पुस्तक विमोचन संपन्न

११ अगस्त को अजमेर में तुलसी जयंती के अवसर पर आयोजित राजस्थान क्षेत्र शिक्षा समूह की बैठक में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् के क्षेत्रीय संयुक्त मंत्री वरिष्ठ साहित्यकार श्री उमेश कुमार चौरसिया की कृति 'इदं राष्ट्राय' का विमोचन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के क्षेत्रीय प्रचारक मान. निंबाराम के करकमलों से संपन्न हुआ। प्रसिद्ध विचारक श्री हनुमान सिंह राठौड़ ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

'राममय भारत' ग्रंथ लोकार्पित

१० अगस्त को मुंबई के ठाकुर कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग ऐंड टेक्नोलॉजी के ठाकुर ऑडिटोरियम में आयोजित महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जयंती की पूर्व संध्या पर ठाकुर एजुकेशनल ट्रस्ट एवं महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा श्री भागवत परिवार के तत्त्वावधान में प्रकाशित 'राममय भारत' ग्रंथ का लोकार्पण केंद्रीय वाणिज्य व उद्योग मंत्री श्री पीयूष गोयल द्वारा किया गया। उन्होंने कहा कि श्रीराम के जीवन-आदर्शों को अपनाकर हम एक श्रेष्ठ समाज की स्थापना कर सकते हैं और इस दिशा में यह ग्रंथ एक महत्त्वपूर्ण कदम है। प्रख्यात भागवताचार्य श्री भूपेंद्र भाई पंड्या ने कहा कि राम धर्म, संस्कृति और राष्ट्र रक्षा के उच्च आदर्श हैं; हम उनके आदर्शों पर चलकर ही आगे बढ़ सकते हैं। ग्रंथ के संयोजक श्री वीरेंद्र याज्ञिक ने भी अपने विचार व्यक्त किए। पूर्व विधायक ठा. रमेश सिंह ने सभी अतिथियों का स्वागत किया। ☐

'संभवामि युगे-युगे' कृति लोकार्पित

०३ अगस्त को भोपाल में दुष्यंत कुमार स्मारक पांडुलिपि संग्रहालय में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित वरिष्ठ साहित्यकार श्री कुमार सुरेश की कृति 'संभवामि युगे-युगे' का लोकार्पण उर्दू अकादमी मध्य प्रदेश की निदेशक एवं अखिल भारतीय साहित्य परिषद् भोपाल इकाई की अध्यक्ष डॉ. नुसरत मेहंदी की अध्यक्षता में किया गया। उन्होंने कहा कि यह पुस्तक भारत के आत्मगौरव और आत्मसम्मान की रक्षा के लिए किए गए सतत संघर्ष का लेखा-जोखा है। मुख्य अतिथि डॉ. साधना बलवटे ने कहा कि यह पुस्तक भारत के सच्चे इतिहास का संकलन है। श्री कुमार सुरेश ने अपने लेखकीय वक्तव्य में कहा कि भीषण विदेशी आक्रमणों के सामने भारतीयों ने कभी आसानी से घुटने नहीं टेके। डॉ. वीणा सिन्हा ने कहा कि अपनी जड़ों की ओर लौटने और आत्मविश्वास पाने के लिए बहुत जरूरी है कि हम अपने इतिहास को जानें और अपने पुरखों की कहानी उनके परिप्रेक्ष्य से सुनें। श्री विवेक रंजन श्रीवास्तव ने भी अपने विचार रखे। महामंत्री श्रीमती सुनीता यादव ने स्वागत वक्तव्य दिया। ☐

'हिंदी : संस्कृत की पीठिका' विषयक गोष्ठी संपन्न

१९ जुलाई को कोलकाता के नराकास बैंक के तत्त्वावधान में यूको बैंक द्वारा 'हिंदी : संस्कृत की पीठिका' विषयक संगोष्ठी का आयोजन यूको बैंक के महाप्रबंधक श्री राजेश नागर की अध्यक्षता में सेंट्रल स्टाफ कॉलेज में किया गया, जिसमें सर्वश्री रविशंकर पाठक, प्रवीण भारद्वाज, ऋषिकेश राय, जितेंद्र जीतांशु ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

काव्य-संध्या संपन्न

१ अगस्त को पटना में राष्ट्रीय कवि संगम की पटना शाखा के संयोजक श्री धनंजय कुमार के आवास पर गीतकार डॉ. गौरव प्रसाद मस्ताना की अध्यक्षता में आयोजित काव्य संध्या में मुख्य अतिथि श्री मधुरेश नारायण के साथ सर्वश्री गोरख प्रसाद मस्ताना, मधुरेश नारायण, अंकेश कुमार, हरेंद्र सिन्हा, सिद्धेश्वर, अविनाश बंधु, सच्चिदानंद किरण, कमल किशोर, कुंदन लोहानी, कृष्णानंद कनक, शंकर भगवान सिंह एवं धनंजय कुमार ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री अविनाश बंधु ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री अंकेश कुमार ने किया। ☐

प्रेमचंद जयंती पर गोष्ठी संपन्न

३१ जुलाई को दतिया में प्रेमचंद जयंती के अवसर पर मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा आयोजित गोष्ठी में प्रो. कृष्ण बिहारी लाल पांडेय ने कहा कि प्रेमचंद साहित्य की सबसे सही परिभाषा यह मानते थे कि वह जीवन की आलोचना है; साहित्य का उद्देश्य हमारी अनुभूतियों को तीव्र बनाना है और साहित्य केवल मन बहलाव की चीज नहीं है। इस अवसर पर सर्वश्री आनंद मोहन सक्सेना, अनिल तिवारी, विशाल वर्मा, अजय मिश्र, नीरज जैन, शैलेंद्र बुधोलिया, अजय राव, राज बोहरे ने भी अपने विचार व्यक्त किए। ☐

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा सम्मानित

२८ जुलाई को नागपुर के मोरभवन के उत्कर्ष सभागृह में आयोजित विदर्भ हिंदी साहित्य सम्मेलन में महाराष्ट्र की अग्रणी साहित्यिक संस्थान समिति अर्चन मंच, नागपुर द्वारा डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा के बाल कहानी-संग्रह 'संस्कारों की पाठशाला' को 'श्री रामभाऊ सखाराम पंत महाजन स्मृति सम्मान २०२४' से सम्मानित किया गया। पुरस्कारस्वरूप उन्हें शॉल, श्रीफल, स्मृति-चिह्न, प्रशस्ति-पत्र के साथ नकद राशि भी दी गई। ☐

'नंद चतुर्वेदी रचनावली' लोकार्पित

४ अगस्त को उदयपुर में साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली एवं नंद चतुर्वेदी फाउंडेशन के संयुक्त तत्त्वावधान में नंद चतुर्वेदी जन्मशतवार्षिकी परिसंवाद कार्यक्रम में 'नंद चतुर्वेदी रचनावली' का लोकार्पण प्रसिद्ध कवि श्री हेमंत शेष की अध्यक्षता में किया गया, जिसमें सर्वश्री नंद किशोर आचार्य, माधव हाड़ा, अरुण चतुर्वेदी, अजय शर्मा, पल्लव, शंभु गुप्त, देवेंद्र चौबे, रेणु व्यास ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय सत्र में डॉ. पल्लव एवं श्री ब्रजरतन जोशी ने अपने विचार व्यक्त किए। तृतीय सत्र की अध्यक्षता प्रसिद्ध साहित्यकार श्री दामोदर खड़से ने की और प्रो. मलय पानेरी ने अपने विचार व्यक्त किए। तीनों सत्रों का संयोजन डॉ. कीर्ति चुंडावत ने किया। ☐

कर्नल प्रवीण शंकर त्रिपाठी सम्मानित

१६ जुलाई को कोलकाता की साहित्यिक संस्था 'परिवार मिलन' का प्रतिष्ठित 'काव्य वीणा सम्मान' इस वर्ष नोएडा (उत्तर प्रदेश) के कर्नल प्रवीण शंकर त्रिपाठी के छंदाधारित गीतिका-संग्रह 'मनके छंदों के' को देने की घोषणा की गई है; सम्मानस्वरूप स्मृति-चिह्न, मानपत्र,

शॉल और इक्यावन हजार रुपए की राशि सितंबर में होने वाले समारोह में दी जाएगी। ☐

श्री बजरंग बिहारी तिवारी को 'सत्राची सम्मान'

१८ जुलाई को पटना में सत्राची फाउंडेशन के निदेशक श्री आनंद बिहारी ने घोषणा की कि प्रत्येक वर्ष दिया जाने वाला 'सत्राची सम्मान' इस वर्ष प्रसिद्ध आलोचक श्री बजरंग बिहारी तिवारी को आगामी २० सितंबर को दिया जाएगा। सम्मानस्वरूप इक्यावन हजार रुपए की राशि का चैक, मानपत्र, अंगवस्त्र एवं स्मृति-चिह्न भी दिए जाएँगे। ☐

रानीखेत में साहित्य समागम संपन्न

२२ जून को उत्तराखंड के रानीखेत में डॉ. दिवा भट्ट की अध्यक्षता में रानीखेत सांस्कृतिक समिति एवं कविजन हिताय द्वारा आयोजित साहित्य समागम में विमर्श गोष्ठी 'उपन्यास में युवा चिंतन की दिशा' विषय पर कुमाऊँ रेजीमेंट सेंटर के कमांडेंट ब्रिगेडियर संजय कुमार यादव के विशिष्ट आतिथ्य में श्री दीर्घ नारायण के उपन्यास 'रामघाट में कोरोना' पर चर्चा की गई, जिसमें सर्वश्री कर्ण सिंह चौहान, वैभव सिंह, पंकज कुमार शर्मा, दिनेश कुमार, शैलेश, दिनेश कर्नाटक, कपिलेश भोज ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री विमल सती ने किया तथा धन्यवाद श्री मोहन नेगी ने ज्ञापित किया। ☐

सुश्री अदिति शर्मा द्वारा लिखित पुस्तकें लोकार्पित

१३ अगस्त को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में प्रभात प्रकाशन एवं 'आओ साथ चलें' के संयुक्त तत्त्वावधान में भारतीय स्वाधीनता संग्राम के अनजाने बलिदानियों का जयघोष करती युवा लेखिका व अधिवक्ता सुश्री अदिति शर्मा की सद्यः प्रकाशित पुस्तकों 'गुमनाम योद्धा' एवं 'Unsung Warriors' का लोकार्पण विधि मंत्रालय की अतिरिक्त सचिव श्रीमती अंजू राठी राणा एवं वरिष्ठ अधिवक्ताओं सर्वश्री नुने बलराज, सूर्य प्रकाश खत्री, वैभव तोमर की उपस्थिति में संपन्न हुआ। अनजाने हुतात्माओं के पुण्य स्मरण के इस भावपूर्ण आयोजन में सब वक्ताओं ने माँ भारती की स्वाधीनता के लिए अपना जीवन होम करने के लिए इनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की। लेखिका सुश्री अदिति शर्मा ने कहा कि इस पुस्तक के लेखन की प्रेरणा भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा 'मन की बात' कार्यक्रम में व्यक्त विचारों से मिली है, जिसमें उन्होंने अनजाने स्वाधीनता सेनानियों और बलिदानियों के विषय में अधिकाधिक जानकारी और विवरण संकलित करने का आह्वान किया था। ☐

लोकार्पण कार्यक्रम संपन्न

१८ अगस्त को पटना के विधानसभा ऑडिटोरियम में बिहार सरकार में मंत्री डॉ. अशोक चौधरी एवं लोकसभा सांसद श्रीमती शांभवी चौधरी की प्रभात प्रकाशन द्वारा हिंदी एवं अंग्रेजी में सद्यःप्रकाशित पुस्तकों 'बिहार के गांधी : नीतीश कुमार' एवं 'The Gandhian Statesman of Bihar : Nitish Kumar' का लोकार्पण बिहार के राज्यपाल मान. श्री राजेंद्र विश्वनाथ आर्लेकर के करकमलों से संपन्न हुआ। उन्होंने कहा कि नीतीश कुमार जैसा मुख्यमंत्री मिलना बिहार के लिए सौभाग्य की बात है। नीतीश कुमार बिहार के विकास पुरुष तो हैं ही, वे अजातशत्रु भी हैं। उनके व्यक्तित्व के खिलाफ विपक्षी नेता भी कभी नहीं बोलते। मुख्य अतिथि बिहार विधानसभा के अध्यक्ष मान. श्री नंद किशोर यादव ने कहा कि वर्ष २००५ में नीतीश कुमार को जो बिहार मिला, उसके विकास के रास्ते में कई चुनौतियाँ थीं। एक-एक कर हर चुनौती का सामना करते हुए नीतीश कुमार के नेतृत्व में एनडीए सरकार ने यह सब कार्य किया। कार्यक्रम में अति विशिष्ट अतिथि बिहार के उपमुख्यमंत्री मान. श्री सम्राट चौधरी ने कहा कि कोई दुश्मन भी नीतीश कुमार पर भ्रष्टाचार का आरोप नहीं लगा सकता। वे चंद्रगुप्त नहीं, बिहार के चाणक्य हैं; जब चाणक्य ही गद्दी पर बैठा हो तो विकास की गति तेज होनी ही है। विशिष्ट अतिथि के रूप में पार्श्व गायक पद्म विभूषण श्री उदित नारायण व लोकसभा सांसद मान. श्री अरुण गोविल उपस्थित थे। ☐

'विकास के प्रतिमान' पुस्तक लोकार्पित

११ अगस्त को पटना के विधानसभा ऑडिटोरियम में बिहार विधानसभा के अध्यक्ष श्री नंद किशोर यादव द्वारा लिखित, श्री राकेश प्रवीर द्वारा संपादित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'विकास के प्रतिमान' का लोकार्पण बिहार के उपमुख्यमंत्री मान. श्री सम्राट चौधरी के करकमलों से बिहार के उपमुख्यमंत्री मान. श्री विजय कुमार सिन्हा, जल संसाधन एवं संसदीय कार्य विभाग मंत्री श्री विजय कुमार चौधरी, बिहार विधान परिषद् के सभापति मान. श्री अवधेश नारायण सिंह, राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग मंत्री सह भाजपा प्रदेश अध्यक्ष मान. श्री दिलीप जायसवाल, स्वास्थ्य एवं कृषि विभाग मंत्री मान. श्री मंगल पांडेय तथा नगर विकास एवं आवास विभाग मंत्री मान. श्री नितिन नवीन के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। श्री सम्राट चौधरी ने कहा कि यह पुस्तक २००५ के पहले और बाद के कालखंड को समझने में काफी सहायक होगी। डॉ. दिलीप जायसवाल ने कहा कि नंद किशोर यादव ने अपने कर्म से सिद्ध किया है कि शून्य से शिखर का सफर संघर्ष व मेहनत से प्राप्त किया जाता है। वे हमेशा नए सहयोगियों के साथ भी मित्रवत् व्यवहार करते हैं। ☐

'बॉडी और ऑर्गन डोनेशन' कृति लोकार्पित

१८ अगस्त को जयपुर के बिड़ला सभागार में दधीचि देहदान समिति, दिल्ली और जैन सोशल ग्रुप सेंट्रल संस्थान द्वारा आयोजित कार्यक्रम में प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित देहदान तथा अंगदान के महत्त्व को रेखांकित करती प्रो. स्मृति शर्मा भाटिया की पुस्तक 'बॉडी और ऑर्गन डोनेशन' का लोकार्पण राजस्थान विधानसभा के अध्यक्ष श्री वासुदेव देवनानी, राजस्थान के उपमुख्यमंत्री श्री प्रेमचंद बैरवा, विश्व हिंदू परिषद के अंतरराष्ट्रीय अध्यक्ष श्री आलोक कुमार, केंद्रीय राज्यमंत्री श्री हर्ष मल्होत्रा, जयपुर की महापौर श्रीमती सौम्या गुर्जर व जे.एस.जी. सेंट्रल के संरक्षक श्री कमल संचेती के करकमलों से संपन्न हुआ। इस अवसर पर देहदानियों के परिजनों को सम्मानित कर इन विभूतियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की गई। ☐

अंतरराष्ट्रीय कवि-सम्मेलन संपन्न

१४ अगस्त को ऑस्ट्रेलिया में साहित्य संकाय, त्रिपुरा विश्वविद्यालय, न्यू मीडिया सृजन संसार ग्लोबल फाउंडेशन और सृजन ऑस्ट्रेलिया अंतरराष्ट्रीय इ-पत्रिका के संयुक्त तत्त्वावधान में साहित्य संकाय, त्रिपुरा विश्वविद्यालय के अधिष्ठाता प्रो. विनोद कुमार मिश्र की अध्यक्षता में आयोजित अंतरराष्ट्रीय कवि सम्मेलन में न्यू मीडिया सृजन संसार ग्लोबल

फाउंडेशन की संस्थापक निदेशक श्रीमती पूनम चतुर्वेदी के संयोजन में संपन्न हुआ। □

शती साहित्यकार डॉ. रामदरश मिश्र का शताब्दी समारोह संपन्न

१५ अगस्त को नई दिल्ली के गुरु गोविंद सिंह इंद्रप्रस्थ विश्वविद्यालय के सभागार में हिंदी साहित्य के शताब्दी रचनाकार डॉ. रामदरश मिश्र के सौ वर्ष पूर्ण होने पर 'रामदरश मिश्र न्यास' द्वारा मिश्रजी के जन्म शताब्दी समारोह का आयोजन किया गया। श्रीमती नीलम चतुर्वेदी द्वारा मिश्रजी के जीवन पर केंद्रित एक लघु फिल्म दिखाई गई। मिश्रजी की बौद्धिक उत्तराधिकारी तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के खालसा कॉलेज की प्रोफेसर स्मिता मिश्र ने कहा कि 'मिश्रजी वास्तव में शताब्दी के सहचर हैं। उनकी रचना-यात्रा पराधीन भारत से स्वाधीन भारत की है और स्वाधीन भारत से 21वीं सदी की है।' इस अवसर पर सर्व भाषा ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित 'हम हो गए स्वयं खुशबूघर' रामदरश मिश्र की प्रेम कविताएँ, इंद्रप्रस्थ प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'आज धरती पर झुका आकाश' रामदरश मिश्र का गजल समग्र, सर्व भाषा ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित एवं ओम निश्चल द्वारा संपादित 'मैं आषाढ़ का पहला बादल' पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया। तदुपरांत रामदरश मिश्र न्यास द्वारा गठित 'रामदरश मिश्र शताब्दी सृजन सम्मान' से श्री राजकुमार श्रेष्ठ को सम्मानित करने की घोषणा पद्मश्री अशोक चक्रधरजी के विशिष्ट आतिथ्य में की गई। श्री सुरेश ऋतुपर्ण ने प्रशस्ति-पत्र का पाठ किया। उन्होंने कहा कि 'मिश्रजी ने एक सफल जीवन नहीं, एक सार्थक जीवन जिया है और इसी कारण उनका जीवन इतना प्रेरणादायक है।' वरिष्ठ साहित्यकार तथा निर्णायक मंडल की सदस्य श्रीमती ममता कालिया ने कहा कि 'मिश्रजी की कविताओं की सबसे विशिष्ट बात यही है कि इनमें विचारों ने कविता के भाव को दबाया नहीं है। ये कविताएँ भावात्मक रूप से पाठकों के मन तक पहुँचने में समर्थ हैं। जब तक वरिष्ठ पीढ़ी कनिष्ठ पीढ़ी को थामेगी नहीं, तब तक कनिष्ठ पीढ़ी घनिष्ठ नहीं बन पाएगी; अत: ओर यह प्रयास सराहनीय है।' इस अवसर पर कार्यक्रम को सुचारू रूप से संपन्न कराने तथा वेबसाइट और सोशल मीडिया में अहम भूमिका निभाने वाली टीम को भी सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में लेखक, साहित्यकार, पत्रकार, शिक्षाविद्, साहित्यप्रेमी उपस्थित रहे। □

हिंदीतर भाषी हिंदी नवलेखक शिविर संपन्न

२५ से २९ जुलाई को बिश्वनाथ (असम) में केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार तथा बिश्वनाथ चारिआलि राष्ट्रभाषा प्रबोध विद्यालय परिचालना समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में पाँच दिवसीय हिंदीतर भाषी हिंदी नवलेखक शिविर का आयोजन किया गया। अध्यक्षता श्री प्रभुनाथ सिंह ने की, संचालन श्री विनोद कुमार गुप्ता ने किया, शिविर प्रभारी डॉ. शालिनी राजवंशी थीं तथा विशिष्ट अतिथि सर्वश्री अनुशब्द, चंद्रशेखर चौबे, चिंतामणि शर्मा, जितेन भागवती, किंशुक पाठक, बृजेश कुमार, आलोक सिंह, राजीव रंजन प्रसाद रहे। स्वागत वक्तव्य श्री सूर्य नारायण पांडेय ने किया। सर्वश्री प्रदीप पराजुली, अरुण साहनी व आनोवारा ने रचना पाठ किया। वरिष्ठ साहित्यकार श्री हरि लुईटेल के प्रथम निबंध संकलन 'अष्ट आयाम' का लोकार्पण हिंदी विभाग के वरिष्ठ सहायक आचार्य डॉ. अनुशब्द एवं केंद्रीय हिंदी निदेशालय की सहायक निदेशक डॉ. शालिनी राजवंशी द्वारा किया गया। धन्यवाद ज्ञापन समिति की सदस्या श्रीमती गीता वर्मा ने किया। उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता श्री प्रभुनाथ सिंह ने की, मुख्य अतिथि श्री प्रमोद बरठाकुर एवं विशिष्ट अतिथि श्री अमरज्योति बरठाकुर रहे। स्वागत वक्तव्य श्री विनोद कुमार गुप्ता ने किया। तदुपरांत व्याख्यान सत्र आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री किंशुक पाठक, आलोक सिंह, बृजेश कुमार, अनुशब्द, राजीव रंजन, रीता सिंह सर्जना, करबी देवी, हरि लुईटेल, नंदिता राजवंशी ने अपने विचार व्यक्त किए। □

कार्यशाला संपन्न

विगत दिनों आचार्य काकासाहेब कालेलकर एवं विष्णु प्रभाकरजी की स्मृति को समर्पित 'सन्निधि' में आयोजित कार्यशाला में पद्य की जानी-अनजानी विधाओं पर चर्चा के अंतर्गत तीन विशेषज्ञों ने पद्य की ३१ विधाओं से उदाहरणों के साथ परिचय करवाया। डॉ. ओम निश्चल ने गीत, नवगीत, लोकगीत, प्रगीत, घनाक्षरी, सवैया, पद, छंदमुक्त कविता का पाठ किया। श्रीमती ममता किरण ने दोहा, सोरठा, मणिमुक्ता, विस्तारित दोहा, हाइकु, तांका, माहिया, खमसा, मुसद्दस और श्री लक्ष्मी शंकर वाजपेयी ने चौपाई, कुंडलिया, रोला, बरवै, कह मुकरी, मुक्तक रुबाई, नज्म, जनक छंद, गजल, हजल, पैरोडी तजमीन, वर्ण पिरामिड, विज्ञान कविता जैसी विधाओं से उदाहरणों के साथ परिचय करवाया। विष्णु प्रभाकर प्रतिष्ठान के मंत्री श्री अतुल प्रभाकर ने सभी का स्वागत करते हुए कार्यशाला के उद्देश्य के बारे में जानकारी दी। श्री प्रसून लतांत ने कार्यक्रम की कड़ियों को जोड़ा। सर्वश्री पूरन सिंह, रमेश शर्मा, शोभना, अंजु खरबंदा सहित लगभग ४० व्यक्ति कार्यशाला में उपस्थित रहे। □

'व्यथा कहे पांचाली' एवं 'मैं शबरी हूँ राम की' पुस्तकें लोकार्पित

२० अगस्त को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में प्रतिष्ठित कवयित्री एवं लेखिका श्रीमती उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी' द्वारा लिखित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों 'व्यथा कहे पांचाली' एवं 'मैं शबरी हूँ राम की' का लोकार्पण राष्ट्रसंत पूज्य स्वामी श्री गोविंददेव गिरि जी महाराज के करकमलों से संपन्न हुआ। उन्होंने कहा कि जीवन कैसा होना चाहिए, इसका आदर्श रामकथा में प्राप्त होता है और व्यावहारिक धरातल पर जीवन कैसा है, यह हमें महाभारत में देखने को मिलता है। महाभारत यथार्थ की बात करने वाला ग्रंथ है और रामायण आदर्श की बात करने वाला ग्रंथ है। हमारे राष्ट्रीय आदर्श और प्रतिमान इन ग्रंथों में प्राप्त कर हम समाजोन्नति के कार्यों हेतु समर्पित हों, यही आज की आवश्यकता है। कार्यक्रम में डॉ. कीर्ति काले ने सरस्वती वंदना एवं डॉ. माला कपूर ने दोहा गायन किया। डॉ. प्रेमलता देवी ने कहा कि उर्वशी जी ने शबरी के माध्यम से नारी मन को पढ़ा है, गुना है। प्रो. अविनाश चंद्र पांडेय ने नारी की महत्ता को रेखांकित किया है। हम सब जानते हैं कि माँ ने बचपन में जो सिखा दिया, वह जीवनभर आपका आधार बन जाता है। डॉ. सत्यपाल सिंह ने कहा जिस समाज की, जिस राष्ट्र की, जिस देश की महिलाएँ शिक्षित होंगी, सुरक्षित होंगी, सम्मानित होंगी, वह उतना ही उन्नत होगा। डॉ. माला कपूर ने कहा कि पुस्तक में शबरी के माध्यम से भारतीय नारी का महिमामंडन किया है। श्री विज्ञान व्रत ने भी लोकार्पित पुस्तकों पर विमर्श किया। संचालन श्री दिनेश रघुवंशी ने किया। □